Bhasin Book Depot
Deals In :
School, Religious & General Books
Pacca Danga, Jammu.
Mobile : 2002472

वैदोक्त एवं पुराणोक्त

नित्य कर्म पद्धतिः
देव पूजा पद्धतिः

कृष्णानन्द शास्त्री

ॐ

वेदोक्त एवं पुराणोक्त

सचित्र

नित्य-कर्म पद्धतिः

एवं

देव-पूजा पद्धतिः

लेखक—सम्पादक

कृष्णानन्द शास्त्री

भारतीय संस्कृत भवन

माई हीरां गेट, जालन्धर शहर—144008

दूरभाष : 212532

प्रकाशक :
श्री कृष्णानन्द शास्त्री
भारतीय संस्कृत भवन
माई हीरां गेट,
जालन्धर शहर—१४४ ००८
दूरभाष : (०१८१) २१२५३२

© पुनर्मुद्रणाद्याः सर्वेऽधिकाराः लेखकायत्ताः
चतुर्थ परिवर्धित-संशोधित संस्करणम्
शरदनवरात्र सम्वत् : २०५७; सन् : २०००
मूल्यम् : सत्तर रुपए मात्र

फोटोटाइप सैटिंग :
सी के ग्राफिक्स
मिट्ठा बाज़ार,
जालन्धर ।

मुद्रक :
हमदर्द प्रिंटिंग प्रैस
जालन्धर ।
दूरभाष : २८१२३०

समर्पणम्

कर्मकाण्ड निष्णात
दैवज्ञवल्लभ
पूज्यपाद-पितृवर्य
पण्डित नौवत राम
उपाध्याय
के श्री चरणों में
भक्ति एवं श्रद्धा के साथ
सादर समर्पण

कृष्णानन्द शास्त्री

मातृभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः

आसिन्धु हिन्दू घोषान्ता
यस्य भारत भूमिका
पितृभूः पुण्यभूश्चैव
स वै हिन्दूरिति स्मृतः ॥

पूर्व-पश्चिम समुद्र, दक्षिण में समुद्र और उत्तर में हिन्दु कुश पर्वत अन्त तक इन चारों सीमाओं के भीतर जो देश है वही भारतभू है। यह भूमि जिसकी पितृभूमि और पुण्यभूमि है, वही हिन्दू है।

उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वर्षं तद् भारतं नाम भारती यत्र संस्कृतिः ॥

यह भूमि मेरी माता है, मैं इसकी सन्तान हूं। यह भूमि राज्य की सम्पत्ति नहीं है। इस भूमि की सेवा करना, इस की रक्षा करना मेरा पवित्र कर्त्तव्य है। इस भूमि को संचित करने वाली नदियां, इसे आकार एवं संरक्षण प्रदान करने वाली पर्वत मालाओं आदि के मुझ पर असंख्य उपकार हैं, अतः इनके प्रति विनम्र आदर दृष्टि रखना मेरा कर्त्तव्य है। गंगा, यमुना, सरस्वती, गोदावरी, नर्मदा, सिन्धु, कावेरी आदि समस्त पयस्विनी नदियां मानों मां का दूध ही मुझे पिलाती हैं। प्रतिदिन उनका स्मरण करना मेरा सहज कर्त्तव्य है। इस पावन मां की गोद में जन्म लेना मेरा सफल हो। हे मां ! तुम्हारी जय हो, विजय हो। मेरा शत-शत नमन।

अपनी बात

भारतीय साहित्य में वैदिक संस्कृति का महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारतीय संस्कृति, भारतीय धर्म, भारतीय आचार-विचार, भारतीय समाज, भारतीय शासन तन्त्र और भारतीय साहित्य में ऐसा कौन-सा तत्त्व है जिस के सूत्र वैदिक-साहित्य में नहीं हैं और ऐसी कौन-सी आस्था और विश्वास है जिसे इस वैदिक साहित्य के वरदहस्त ने जीवनदान नहीं दिया।

वैदिक ऋषियों ने जिन शाश्वत सत्यों को स्वीकारा, जिन आदर्शों की स्थापना की थी, वे आज भी हज़ारों वर्षों की जीवन यात्रा करने के पश्चात् भी अक्षुण्ण हैं।

भारतीय संस्कृति के कुछ तत्त्व हैं जिन के कारण यह संस्कृति सभी संस्कृतियों की जननी मानी जाती है। वैदिक साहित्य में न केवल आर्यों के सांस्कृतिक विकास का दिग्दर्शन होता है अपितु यह भी स्पष्ट होता है कि उन्होंने किस प्रकार एक मानव-संस्कृति का विकास किया था।

अनेकत्व में एकत्व भारतीय संस्कृति के विकास का मूलमन्त्र है। आर्यों का अन्य जातियों को स्वसंस्कृति में आत्मसात करना इसी का समर्थन करता है। समन्वयवाद के साथ-साथ विचार सहिष्णुता भी वैदिक संस्कृति की विशेषता है। इसलिए अनेक जातियां, अनेक धर्म होते हुए भी भारतीयता की झलक सभी में समान रूप से देखने को मिल जाती है। जैसे अनेक नदियों को आत्मसात करती हुई भगवती गंगा समुद्र में मिल जाती है।

भारत में प्राचीन काल से ही विचार-सहिष्णुता एवं धार्मिक विश्वास तथा पूजा-विधियों को पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त है—ऋग्वेद में कहा गया है **"एकं सद्विप्रा वहुधा वदन्ति।"** गीता में कहा गया है, **"ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्"**।

प्राचीन समय में व्यक्ति में श्रद्धा की भावना जीवन के लिए सर्वोपरि थी।

"व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणया श्रद्धामप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते।

अर्थात् व्रत से दीक्षा, दीक्षा से दक्षिणा, दक्षिणा से श्रद्धा और श्रद्धा से सत्य प्राप्त होता है। मानव को सुपथ पर ले जाने का आदर्श वैदिक शिक्षा का ही है। कोई भक्त ईश्वर के जिस रूप की अर्चना करना चाहता है, उसी रूप में ईश्वर उस की श्रद्धा को अचल बना देता है। यहां के उपासक उदारता-पूर्वक कहा करते हैं—

यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो,
बौद्धाः बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्त्तेतिनैयायिकाः।
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः,
सोऽयं वो विदधातु वाञ्छित फलं त्रैलोक्य नाथो हरिः॥

शैव हो या वेदान्ती, बौद्ध हो या अर्हत्, नैयायिक हो या मीमांसक एक ही भाव से ईश्वर की आराधना करते आ रहे हैं।

यहां उपास्य देव की भिन्न-भिन्न नामों से उपासना करने की विशाल हृदयता सदैव दिखाई देती रही है—

"सर्व देव नमस्कारः केशवं प्रति गच्छति।"

किसी भी देवता को नमस्कार करें वह परमात्मा को ही पहुंचता है।

यहां के पुण्यशील स्तोत्रकार विभिन्न जनों की विविध रुचियों को ही पहचानते हुए नाना पथों को सदैव सहन करते आए हैं—

"रुचीनां वैचित्र्याद् ऋजुकुटिलनानापथ जुषाम्।
नृणामेको गम्य स्त्वमसि पयसामर्णव इव।"

रुचि की विभिन्नता के कारण कोई भक्त सीधा मार्ग अपनाता है, कोई टेढ़ा मार्ग। परन्तु सभी मानवों का अन्तिमगम्य स्थान तुम्हीं हो, जिस प्रकार समस्त जलों का अन्तिम गम्य स्थान समुद्र होता है।

हम आर्य हैं, हम पर दैव ऋण, पितृ ऋण, मातृ ऋण है। हम देवताओं का आराधन कर देव ऋण से मुक्त हो सकते हैं।

पितृ वर्ग की सेवा करने से पितृ ऋण से मुक्त हो सकते हैं, मातृभूमि के प्रति हम सदैव समर्पित रहते हुए उस की रक्षा एवं समृद्धि की भावना से मातृभूमि का भार उतार सकते हैं। **"माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः।"**

विष्णुपुराण में कहा गया है कि जो लोग भारत भूमि में जन्म ग्रहण करते हैं, वे धन्य हैं। देवता लोग भी उनका कीर्तिगान करते हैं ; क्योंकि भारत कर्मभूमि है, वहां जन्मग्रहण करके ही स्वर्ग या अपवर्ग प्राप्त किया जा सकता है। देवताओं को भी अपवर्ग की प्राप्ति के लिये इस भारतभूमि पर आना पड़ेगा। इसलिये भारत वासी देवताओं की अपेक्षा अधिक भाग्यशाली हैं।

गायन्ति देवाः किल गीतकानि, धन्यास्तु ये भारतभूमि भागे।
स्वर्गापवर्गस्य च हेतुभूते, भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात्॥ (विष्णुपुराण)

श्रीमद्भागवत में भी लिखा है कि—यह भारत वैकुण्ठ का प्रांगण है, यहां जो मानव जन्म लेता है वह कितना सौभाग्यशाली है ? क्योंकि इससे उसे मुकन्द की सेवा करने का सुयोग प्राप्त हुआ है।

अहो अमीषां किमकारि शोभनम्, प्रसन्न एषां स्विदुत स्वयं हरिः।
यै र्जन्म लब्धं नृषु भारताजिरे, मुकुन्द सेवौ पथिकं स्पृहा हि नः॥

भारतीय संस्कृति के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए शास्त्रों में लिखा है कि—जाति का मूल आचार है, आचार का मूल शास्त्र है, शास्त्रों का मूल वेद है, वेदों का मूल साधक हैं, साधकों का मूल क्रिया है, क्रियाओं का मूल फल है, फल का मूल सुख है, सुख का मूल आनन्द है, आनन्द का कारण ज्ञान है, ज्ञान का मूल ज्ञेय है, ज्ञेय वस्तु का मूल तत्त्वानुभव है, समस्त तत्त्वों का मूल ब्रह्म है, ब्रह्मज्ञान का मूल ऐक्य भाव है और इस तरह का ऐक्य (अद्वैतभाव) ही सब साधनों का मूल है। भारत के महार्षियों ने धर्म को पूर्णचन्द्र के समान सोलह कलाओं से पूर्ण बताया हैं। देवार्चन, एवं यज्ञों पर विश्वास रखना सनातन परम्परा एवं हिन्दूधर्म का परम कर्त्तव्य है।

ऋषियों के निमित्त किये जाने वाले यज्ञ को ब्रह्मयज्ञ कहा गया है। देवताओं के संवर्द्धन के लिए किये जाने वाले यजन को देवयज्ञ कहा गया है। अर्यमा आदि नित्य पितृगण एवं मृतपूर्वजों की तृप्ति के लिये किये जाने वाले कार्य को पितृयज्ञ कहा गया है। भूतों के निमित्त, किये जाने वाले कार्य को भूतयज्ञ कहा गया है। आए हुए अतिथि का सम्मान करना नृयज्ञ कहा गया है।

ये पंचमहायज्ञ हिन्दुसनातन परम्परा के लिये नित्यकर्म कहे गये हैं।

परन्तु आज के भौतिक युग में जी रहे लोगों ने इनको विस्मृत कर दिया है, और टी.वी.(दूरदर्शन) की ओर से प्रचारित पाश्चात्य अपसंस्कृति को अपनाने के लिए महत्त्वपूर्ण योग से अर्धनग्नवेषभूषा, अश्लीलनृत्यों एवं बढ़ रही दूषित प्रवृत्तियों ने अपनी संस्कृति को भुला दिया है। आवश्यकता है देश

में बढ़ रही धर्म निरपेक्षता को रोकने के लिये अपनी पुरातन संस्कृति की रक्षा करना। यदि हमने अपनी संस्कृति, अपने शास्त्रों, अपने ज्ञान के भण्डारों की उपेक्षा कर दी, तो देश पुनः गुलामी की जंजीरों में जकड़ा जायगा, ऐसी भयावह शंकाएं जनता में उभर रही हैं।

इसलिए अपने शास्त्रों के प्रति श्रद्धा रखते हुए, अपने देवताओं एवं ऋषियों के प्रति आस्था रखते हुए, अपने धर्म के प्रति निष्ठा रखते हुए देव ऋण, ऋषि ऋण एवं पितृ ऋण का भार उतारने के लिए संकल्प वद्ध हो जाएं, तभी राष्ट्र जीवित रहेगा। धर्म की यदि हम रक्षा करेंगे तो धर्म भी हमारी रक्षा करेगा। इसलिए अपनी संस्कृति से जुड़ने का दृढ़ निश्चय लें। अपने शास्त्रों का स्वाध्याय करें। देवताओं का अर्चन करें एवं पितरों का तर्पण करें।

इस भावना को समक्ष रखकर हमें अपने को प्रभु के लिए समर्पित कर देना चाहिए। प्रातःकाल उठ कर हम प्रभु का स्मरण करें—अपने ऋषियों, देवों, महान् आत्माओं के प्रति श्रद्धा भाव व्यक्त करें। देव वन्दना करें। प्रातः कृत्य को विधि विधान से करके अपने जीवन को पवित्र करने के लिए उद्यत हों—इसी दृष्टि को रख कर इस पुस्तक का निर्माण किया गया है। प्रातः स्मरण से लेकर स्नानादि की विधि, गायत्री उपासना, देवपूजा तथा मुख्य स्तोत्रपाठ इस पुस्तक में दिए गए हैं। विधि-विधान का क्रम बना रहे, तथा प्रक्रिया भी पूर्ण हो—इसी उद्देश्य से इसका प्रकाशन हुआ है। संसार बदल रहा है, विज्ञान ने बहुत प्रगति कर ली है। नगरों का विकास हो चुका है, जनसंख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हो रही है। नदी, तालाब, कुएं आदि सिमट कर रह गए हैं। प्राचीन परिपाटियों के लिए वातावरण नहीं रहा। परम्पराएं टूटती एवं बनती हैं। इसलिए अवसरानुसार व्यक्ति को परिवर्तन करना पड़ता है। जिससे शास्त्रोक्त सभी कार्यों को कर पाना असम्भव होता है। हमारा जीवन धार्मिक बना रहे, प्रभु का स्मरण करते हुए अपने कर्त्तव्य का पालन करें, ऐसी दृढ़ भावना होनी चाहिए।

यह भारत देश श्री राम और कृष्ण की धरती है, गंगा-यमुना आदि पुण्य सलिला नदियों की पुण्य भूमि है। वेद हमारी भारतीय परम्परा की अक्षुण्ण निधि हैं। उन परम्पराओं को जीवित रखना हमारा पूर्ण कर्त्तव्य है। हमारी निष्ठा, श्रद्धा, भावना दृढ़ हो इसलिए प्रभु स्मरण करना अत्यावश्यक है।

इस पुस्तक को सांगोपांग बनाने का पूर्ण प्रयास किया गया है। सन्ध्या आदि में हम अंगन्यास करते हैं, उन न्यासों का विधान वैज्ञानिकता की दृष्टि से दिया जा रहा है, ताकि भौतिकता में पल रहे लोग हमारे शास्त्रों की वैज्ञानिकता को समझ सकें।

कुछ व्रतों का विधान भी दिया गया है, जिसका सर्वसाधारण को ज्ञान नहीं होता। व्रत की विधि, आवश्यकता, रविवार, मंगलवार व्रत, चान्द्रायण व्रत, अश्वत्थ पूजनविधि, धात्रीपूजन विधि विस्तार से दी गई है।

सन्ध्या के मन्त्रों का हिन्दी में अर्थ भी दे दिया गया है। बहुत से स्तोत्र नए दिए गए हैं। उनके भावार्थ हिन्दी में दे दिए हैं। नए स्तोत्रों को जोड़ा गया है। इक्यावन शक्तिपीठों की जानकारी दी गई है। विष्णु-शिव पूजन आदि का पूर्ण रूप से विस्तार किया गया है। कोई कमी न रहे, इसके लिए पूर्ण प्रयत्न किया है।

आशा है कर्मकाण्डी पण्डित वर्ग एवं साधारण वर्ग इससे पूर्ण लाभ उठा सकेंगे। अपनी ओर से सभी विषयों को सम्मिलित करने का प्रयास किया है, अधिकारी जन इसमें अत्यधिक क्या अपेक्षा रखते हैं, सूचित करें, ताकि आगामी संस्करण में उसे सम्मिलित किया जा सके।

भावक:

कृष्णानन्द शास्त्री

विषय सूची

विषय	पृष्ठ
प्रातः स्मरण	२
शौच-विधि	४
शुद्धि का ज्ञान	५
दन्तधावन-विधि	५
दतुअन-प्रार्थना	६
मौन विधि	६
उवासी, छींक थूकना	६
क्षौर विधि	६
तैलाभ्यंग-विधि	७
अयन तथा ऋतु का ज्ञान	७
संकल्प	७
स्नान कर्म की आवश्यकता	८
स्नान-विधि	८
गरम जल का त्याग	९
वरुणदेव की प्रार्थना	९
तीर्थावाहन	९
भागीरथी की प्रार्थना	१०
स्नानांग-तर्पण	११
वस्त्रधारण-तर्पण	१२
आसन	१२
शिखाबन्धन-मन्त्र	१२
तिलक	१३
चन्दनधारण-मन्त्र	१३
तिलकधारण-विधि	१३
भस्मधारण-विधि	१३
भस्मधारण-मन्त्र	१४
यज्ञोपवीतधारण-विधि	१४
यज्ञोपवीतधारण-मन्त्र	१४
जीर्णयज्ञोपवीत त्याग-मन्त्र	१५
कुशा-ज्ञान	१५
कुशाग्रहण-मन्त्र	१५
त्यागयोग्य कुशा	१५
जप-विधि	१६
माला-विधि	१६
माला-प्रार्थना	१७
देवमन्त्र की कर-माला	१७
आचमन विधि	१८
सूर्य अर्घ्य मंत्र	१९
सन्ध्या-विधि	२०
त्रिकाल संध्या ज्ञान	२०
अर्घ्य ज्ञान	२०
वेदादि विद्या जप	२१
गायत्री जप	२१
प्रातः सन्ध्या	२१
आचमन	२२
विनियोग	२२
पवित्रकरण-मन्त्र	२२
आसन-पवित्र-करना	२२
अघमर्षण मन्त्र	२३
प्राणायाम-विधि	२४
पूरक आदि प्राणायाम	२५
प्राणायाम-मन्त्र	२६
आचमन	२६
मार्जन	२७
शिरःसेकमन्त्र	२८
अघमर्षण विनियोग	२८
उपस्पर्शनमन्त्र	२८
अर्घ्य विनियोग	२९
अर्घ्य दान मंत्र	२९
प्रदक्षिणा मंत्र	३०
सूर्योपस्थान	३०
षडंगन्यास	३१
गायत्री-ध्यान	३२
आवाहन-मन्त्र	३२
उपस्थान-मन्त्र	३३
गायत्रीशाप-विमोचन	३३
ब्रह्मशाप-विमोचन	३३
वसिष्ठ-शापविमोचन	३३

विषय	पृष्ठ
विश्वामित्र-शाप विमोचन	३४
गायत्री का आवाहन	३४
गायत्री हृदय	३५
जपविनियोग	३७
जप में पूर्व की २४ मुद्राएं	३७
गायत्री मुद्राओं का महत्त्व	३८
न्यासविज्ञान	३९
अंगों का महत्त्व	३९
ऊर्जा का प्रवाह	३९
न्यास का प्रकार	४०
न्यास क्रियाएं	४०
न्यास क्रियाएं मुद्राओं के लाभ	४२
२४ मुद्राएं करने की विधि	४३
मुद्राओं के चित्र	४४
गायत्री-मन्त्र	४७
शक्तिमन्त्र जपने की करमाला	४७
जप के बाद की ८ मुद्राएं	४८
८ मुद्राएं करने की विधि	४९
गायत्री-कवच	४९
गायत्री-तर्पण	५०
क्षमा प्रार्थना	५०
विसर्जन	५०
तर्पण-विधि	५०
मध्याह्न-सन्ध्या	५१
मध्याह्न सन्ध्या की अर्घ्य विधि	५१
सायं अर्घ्य विधि	५२
सायं सन्ध्या	५२
पंच महायज्ञ प्रकरण	५३
तर्पण का जल	५४
देव-तर्पण	५५
ऋषि-तर्पण	५५
दिव्य मनुष्य तर्पण	५५
पितृ-तर्पण	५६
भीष्म तर्पण	६०
तर्पणांग अर्घ्य	६०
ब्रह्म-यज्ञ	६१

विषय	पृष्ठ
नित्य होम	६२
अग्नि होम	६२
अग्नि स्थापन	६२
अग्नि परिस्तरण	६२
अग्नि का ध्यान	६३
आहुति मन्त्र	६३
व्रत परिचय	६६
व्रत परिचर्या	६७
तिथ्यादि निर्णय	६९
व्रत विधान	६९
सूतक ज्ञान	६९
रविवार व्रत विधान	७३
भौम वार व्रत विधान	७३
तुलसी महिमा	७६
विल्वपत्रमहिमा	७७
आमलकी (धात्री) पूजन	७८
अश्वत्थ पूजन	७९
नवग्रह मंगलाष्टक	८१
देवपूजा-विधि	८५
पुष्प ज्ञान	८५
दीपक पूजन	८६
घंटा-पूजन	८७
शंख-पूजन	८७
देव-पूजन	८७
अष्ट अंग शुद्धि	८८
भूमि प्रोक्षण	८८
आचमन	८८
गौरी वन्दना	८८
शान्ति पीठ	८८
आनो भद्रा सूक्त	८९
गुरु-वन्दना	९०
स्वस्ति वाचन	९०
देवपूजा संकल्प	९१
गणपति आवाहन	९१
गणपति तथा अम्बिका-पूजन	९३
गणेश-प्रार्थना	९७

विषय	पृष्ठ
कलश स्थापन	९८
कलशाभिमन्त्रण	९९
कलश प्रार्थना	१००
पुण्याहवाचन	१००
पंचोंकार पूजन	१०५
षोडश मातृका पूजन	१०६
प्रतिष्ठापन मंत्र	१०८
चतुःषष्टि योगिनी पूजन	१०८
क्षेत्रपाल-पूजन	१०९
सप्तघृतमातृका पूजन	११०
नवग्रह पूजन	१११
पंच लोकपाल पूजन	११४
दशदिक्पाल पूजन	११४
रक्षा-विधान	११५
रक्षोघ्न सूक्त	११७
पंचगव्यमेलन विधि	११८
पंचगव्य प्राशननमन्त्र	११९
ब्राह्मणतिलक-मन्त्र	११९
यजमान रक्षाबन्धन-मन्त्र	११९
यजमान तिलक-मन्त्र	११९
शालग्राम पूजन	१२०
विष्णु-स्तुति	१२७
पुष्पाञ्जलि	१२८
प्रदक्षिणा	१२९
क्षमा प्रार्थना	१२९
विसर्जन	१२९
चरणामृत ग्रहण-विधि	१३०
तुलसी ग्रहण-मन्त्र	१३०
चरणामृत ग्रहण मन्त्र	१३०
पञ्चामृत ग्रहण मन्त्र	१३०
नैवेद्य ग्रहण-मन्त्र	१३०
शिवपूजन	१३०
नन्दीश्वर पूजन	१३१
वीरभद्र पूजन	१३१
स्वामीकार्तिक-पूजन	१३१
कुबेर-पूजन	१३१
कीर्तिमुख-पूजन	१३२
रुद्र अभिषेक	१३४
अंग पूजा	१३७
आवरण पूजा	१३७
एकादश शक्ति पूजा	१३७
अष्टमूर्ति पूजा	१३८
अष्टोत्तरशतशिवनाम पूजा	१३८
शिवस्तुति	१४२
प्रदक्षिणा, क्षमा प्रार्थना	१४३
पार्थिव शिव-पूजन	१४३
दुर्गा-पूजन	१४५
भैरव-पूजन	१४५
देवी ध्यान	१४६
अंग पूजन	१५०
आवरण पूजन	१५१
कुमारी पूजन	१५५
श्री महालक्ष्मी-पूजन	१५६
श्री महाकाली-पूजन	१६२
लेखनी-पूजन	१६२
स्तोत्र पाठ	
ऋग्वेद का अन्तिम सूक्त	१६६
श्रीसंकटनाशन गणेश-स्तोत्र	१६७
गणपत्यथर्वशीर्षोपनिषद्	१६७
श्रीमहालक्ष्म्यष्टक	१६९
कनकधारा-स्तोत्र	१७०
यजुर्वेदीय चाक्षुषोपनिषद्	१७१
श्रीगंगाष्टक	१७२
देव्यपराधक्षमापन-स्तोत्र	१७३
श्रीशीतलाष्टक	१७५
मधुराष्टक	१७६
श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्र	१७७
श्रीशिवमहिम्न-स्तोत्र	१८५
शिवताण्डवस्तोत्र	१९५
रुद्राष्टक	१९६
शिवपंचाक्षर	२०१
श्री शिव मानसपूजा स्तोत्र	२०२

विषय	पृष्ठ
वेदसार शिवस्तव	२०३
आदित्यहृदयस्तोत्र	२०५
सूर्याष्टक	२०९
सप्तश्लोकी दुर्गा	२१२
अन्नपूर्णा स्तोत्र	२१३
पुरुष सूक्त	२१४
श्री सूक्त	२२१
लक्ष्मी सूक्त	२२४
रामरक्षास्तोत्र	२२६
दुर्गा स्तुति	२३१
सिद्धकुंचिका स्तोत्रम्	२३३
गंगाष्टक	२३४
श्रीनवग्रह-स्तोत्र	२३६
गजेन्द्रमोक्षस्तोत्र	२३६
तुलसीस्तोत्र	२३९
सप्तश्लोकी गीता	२४०
इक्यावन शक्ति पीठ	२४१

विषय	पृष्ठ
बलि वैश्वदेव	२४५
पञ्च बलि	२४५
श्राद्ध-विधि	२४७
श्राद्ध (पितृश्राद्ध)	२४८
श्राद्ध (मातृश्राद्ध)	२५०
भोजन-विधि	२५२
आपोशान	२५३
संक्षिप्त-व्रत-तिथि निर्णय	२५४
एकादशी निर्णय	२५५
एकादशी व्रत-निर्णय	२५५
श्रावणी-निर्णय	२५६
श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी	२५६
होलिकादहन	२५६
मन्वादि तिथि	२५७
जयन्ती निर्णय	२५७
शयन विधि	२५८
सामग्री प्रकरण	२५८—२६२

श्री
नित्यकर्म-पद्धतिः
तथा
देवपूजा-पद्धति

अथोच्यते गृहस्थस्य नित्यकर्म यथाविधिः।
यत्कृत्वाऽऽनृण्यमाप्नोति दैवात् पैत्र्याच्च मानुषात्॥

शास्त्र विधि के अनुसार गृहस्थ के लिये नित्यकर्म करने की जैसी विधि है उसे लिखते हैं। जिसके करने पर मनुष्य, देव, ऋषि और पितरों के ऋण से मुक्त होता है।

सन्ध्या स्नानं जपश्चैव देवतानां च पूजनम्।
वैश्वदेवं तथातिथ्यं षट् कर्माणि दिने दिने॥

मनुष्य को स्नान, सन्ध्या, जप, देवताओं का पूजन, वैश्वदेव और अतिथि का सत्कार ये छः नित्यकर्म गृहस्थी को करने चाहिएं।

प्रातः स्मरण (शय्या के ऊपर बैठकर भी किया जा सकता है)

सूर्योदय से पूर्व समय को ब्रह्ममुहूर्त कहा गया है। इस ब्रह्ममुहूर्त में सोना निषेध है। इसलिये ब्रह्ममुहूर्त में उठकर के नीचे लिखा हुआ मन्त्र बोलते हुए सर्व प्रथम अपने हाथ की हथेली का दर्शन करें।

करावलोकनम्—

कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये सरस्वती।
करमूले तु गोविन्दः प्रभाते करदर्शनम्।

हाथ के अग्रभाग में लक्ष्मी का, मध्य में सरस्वती का और मूल में गोविन्द का निवास है। अतः प्रातःकाल हथेली का दर्शन करना चाहिए। इसके बाद नीचे लिखी हुई प्रार्थना करते हुए पृथ्वी पर पैर रखे।

भूमिवन्दन—

शयनादुत्थितो यस्तु कीर्तयेन्मधुसूदनम्।
कीर्त्तनात्तस्य पापानि नाशमायान्त्यशेषतः॥

समुद्रवसने देवि ! पर्वतस्तनमण्डिते ।
विष्णुपत्नि ! नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥

हे विष्णु पत्नि ! हे समुद्र रूपी वस्त्र धारण करने वाली ! तथा पर्वतरूप स्तन वाली (पृथ्वी) देवि ! तुझे नमस्कार है। मेरे चरण स्पर्श के लिए क्षमा करो।

पश्चात् हाथ मुंह धोकर कुल्ला करके नीचे लिखा हुआ 'प्रातःस्मरण' तथा भजनादि कर गणेशजी, लक्ष्मीजी, सूर्य, तुलसी, गौ, गुरु, माता पिता और वयोवृद्धों को प्रणाम करे।

प्रातःस्मरणम्

प्रातः स्मरामि भवभीति महार्ति नाशं,
नारायणं गरुड़ बाहनमब्जनाभम् ।
ग्राहाभिभूत वरवारण मुक्तिहेतुं,
चक्रायुधं तरुण वारिजपत्रनेत्रम् ॥१॥
प्रातर्नमामि मनसा वचसा च मूर्ध्ना,
पादारविन्दयुगलं परमस्य पुंसः ।
नारायणस्य नरकार्णवतारणस्य,
पारायणप्रवणविप्रपरायणस्य ॥२॥
प्रातर्भजामि भजताभयंकरं तं,
प्राक्सर्व जन्म कृतपापभयापनुत्त्यै ।
यो ग्राहवक्त्रपतिताङ्घ्रिगजेन्द्रघोर,
शोकप्रणाशकरणोद्यत चक्रपाणिः ॥३॥
श्लोकत्रयमिदं पुण्यं प्रातः प्रातः पठेत्तु यः ।
लोकत्रय-गुरुस्तस्मै दद्यादात्मपदं हरिः ॥
ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी,
भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च ॥
गुरुश्च शुक्रः शनि-राहु केतवः,
कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥१॥
भृगुर्वसिष्ठः क्रतुरङ्गिराश्च मनुः पुलस्त्यः पुलहश्च गौतमः । रैभ्यो मरीचिश्च्यवनश्च दक्षः
कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥२॥

सनत्कुमारः सनकः सनन्दनः,
सनातनोऽप्यासुरिपिङ्गलौ च ॥
सप्तस्वराः सप्तरसातलानि ।
कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥३॥
सप्तार्णवाः सप्त कुलाचलाश्च,
सप्तर्षयो द्वीपवनानि सप्त ॥
भूरादि कृत्वा भुवनानि सप्त,
कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥४॥
पृथ्वी सगन्धा सरसास्तथापः,
स्पर्शी च वायुर्ज्वलनं च तेजः ॥
नभः सशब्दं महता सहैव,
कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥५॥
इत्थं प्रभाते परमं पवित्रम्,
पठेत् स्मरेद्वा श्रृणुयाच्च तद्वत् ॥
दुःस्वप्ननाशस्त्विह सुप्रभातम्,
भवेच्च नित्यं भगवत्प्रसादात् ॥६॥
वैन्यं पृथुं हैहयमर्जुनं च,
शाकुन्तलेयं भरतं नलं च ॥
रामं च यो वै स्मरति प्रभा'ते
तस्यार्थलाभो विजयश्च हस्ते ॥७॥
बलिर्विभीषणो भीष्मः प्रह्लादो नारदो ध्रुवः ।
षडेते वैष्णवाः प्रेक्ताः स्मरणं पापनाशनम् ॥८॥
प्रह्लाद—नारद—पराशर—पुण्डरीक
व्यासाम्बरीष शुक शौनक भीष्मदाल्भ्यान् ।
रुक्मांगदार्जुन-वसिष्ठ विभीषणादीन् ।
पुण्यानिमान् परम-भागवतान् स्मरामि ॥९॥
अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनुमांश्च विभीषणः ।
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ॥१०॥
सप्तैतान् संस्मरेन्नित्यं मार्कण्डेयमथाष्टमम् ।
जीवेद्वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः ॥११॥

पुण्यश्लोको नलो राजा पुण्यश्लोको युधिष्ठिरः।
पुण्यश्लोको विदेहश्च पुण्यश्लोको जनार्दनः ॥१२॥
कर्कोटकस्य नागस्य दमयन्त्या नलस्य च।
ऋतुपर्णस्य राजर्षेः कीर्तनं कलिनाशनम् ॥१३॥
धर्मो विवर्धति युधिष्ठिर कीर्तनेन,
पापं प्रणश्यति वृकोदर-कीर्तनेन।
शत्रुर्विनश्यति धनंजय-कीर्तनेन।
माद्रीसुतौ कथयतां न भवन्ति रोगाः ॥१४॥
अहिल्या द्रौपदी सीता तारा मन्दोदरी तथा।
पञ्चकं नः स्मरेन्नित्यं महापातक-नाशनम् ॥१५॥
अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः ॥१६॥
ऋषिं नमामि दध्यञ्च देवानामुपकारकम्।
वाल्मीकिं च मुनिं वंदे श्रीरामायणकोकिलम् ॥१७॥
आदित्यं प्रथमं नाम द्वितीयं तु दिवाकरः।
तृतीयं भास्करः प्रोक्तं चतुर्थं च प्रभाकरः ॥१८॥
पंचमं च सहस्रांशुः षष्ठं चैव त्रिलोचनः॥
सप्तमं हरिदश्वश्च अष्टमं च विभावसुः ॥१९॥
नवमं दिनकृत्प्रोक्तं दशमं द्वादशात्मकः।
एकादशं त्रयीमूर्तिर्द्वादशं सूर्य एव च ॥२०॥
द्वादशैतानि नामानि प्रातः काले पठेन्नरः।
दुःस्वप्न नाशनं सद्यः सर्वसिद्धिः प्रजायते ॥२१॥
हे जिह्वे रस सारज्ञे सर्वदा मधुर प्रिये।
नारायणाख्य पीयूषं पिव जिह्वे निरन्तरम् ॥२२॥

शौच-विधिः

यज्ञोपवीत कण्ठ में करके दाहिने कान में लपेटे तत्पश्चात् वस्त्र या आधी धोती सिरमें लपेटे। वस्त्र के अभाव में जनेऊ को सिर के ऊपर से घुमाकर बाएं कान में लपेटे। जलपात्र बाएं हाथ में

रखे। दिन में उत्तर दिशा रात्रि में दक्षिण दिशा की ओर मुंह करके नीचे लिखा हुआ मन्त्र बोले तथा मौन हो मल-मूत्र त्याग करे।

गच्छन्तु ऋषयो देवाः पिशाचा ये च गुह्यकाः।
पितृभूतगणाः सर्वे करिष्ये मलमोचनम्॥

पात्र में से जल लेकर, बाएं हाथ से गुदा को धोकर पश्चात् लिंग में एक बार, गुदा में तीन बार मिट्टी लगावे। जल से शुद्ध कर बाएं हाथ को अलग रखते हुए दाहिने हाथ से लांग लगाकर दाहिने हाथ में पात्र ले, मिट्टी के तीन भाग करे। प्रथम से बायां हाथ दस बार, दूसरे से दोनों हाथ सात बार और तीसरे से पात्र तीन बार तथा बायां पैर, पश्चात दाहिना पैर तीन-तीन बार धोकर पात्र शुद्ध करके बची हुई मिट्टी को बहा देवे। मिट्टी बचने से शत्रुओं की वृद्धि होती है इसलिए मिट्टी को भी बहा दे। सूर्योदय से पहले पूर्व की ओर बाद में ऊपर की ओर मुख कर बाईं ओर १२ कुल्ले करे।

शुद्धि का ज्ञान

दिवा-शौचस्य निश्यर्धं पथि पादो विधीयते।
आर्तः कुर्याद् यथाशक्तिः शक्तः कुर्याद् यथोदितम्॥

दिन से रात में आधी, यात्रा करने में चौथाई, तथा आतुरकाल में यथाशक्ति शुद्ध करे किन्तु सशक्त हो तो ऊपर लिखे के अनुसार करे।

पुरतः सर्वदेवाश्च दक्षिणे पितरस्तथा।
ऋषयः पृष्ठतः सर्वे वामे गण्डूषमाचरेत्॥

सामने देवताओं का, दक्षिण में पितरों का और पीठ के पीछे ऋषियों का निवास हैं इसलिए कुल्ला बाईं तरफ चाहिये।

कुर्याद् द्वादश गण्डूषान् पुरीषोत्सर्जने ततः।
मूत्रोत्सर्गे तु चतुरो भोजनान्ते तु षोडश॥

मल त्याग के बाद १२, पेशाब के बाद ४ और भोजन के पश्चात् १६ कुल्ले करने चाहियें।

एतच्छौचं गृहस्थानां द्विगुणं ब्रह्मचारिणाम्।
त्रिगुणं वनस्थानां यतीनां च चतुर्गुणम्॥

दन्तधावन-विधिः

मुख शुद्ध किये बिना मन्त्र फलदायी नहीं होते। इसलिए सूर्योदय से पहिले पूर्वकी ओर पश्चात् उत्तर की ओर अथवा दोनों समय ईशानदिशा (पूर्वोत्तर के कोण) में मुख करके दातुन करनी चाहिए। संक्रान्ति को, व्यतिपात, व्रत के दिन, श्राद्ध के दिन, पड़वा, छठ, अष्टमी, नवमी, चौदस, अमावस, पूर्णमासी और रविरार को दतुअन नहीं करनी चाहिये। इन दिनों में मुख शुद्धि के लिए १२ कुल्ले अधिक करे। या मंजन करे।

मध्यमानामिकाभ्यां च वृद्धाङ्गुष्ठेन च द्विजः।
दन्तस्य धावनं कुर्यान्न तर्जन्या कदाचन॥

मध्यमा, अनामिका अंगुली तथा अंगूठा से दांत साफ करे। तर्जनी-अंगुली से कभी न करे।

दतुअन-प्रार्थना

दतुअन धोकर नीचे लिखी प्रार्थना करके करे, पश्चात् दतुअन चीर कर जीभी करे, दतुअन धोकर बाई ओर को फैंक दें।

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशुवसूनि च।
ब्रह्म प्रज्ञां मेधां च त्वन्नो देहि वनस्पते !॥

मौन रहने का समय

उच्चारे मैथुने चैव प्रस्त्रावे दन्तधावने।
श्राद्धे भोजनकाले च षट्सु मौनं समाचरेत्॥

मल-मूत्र त्याग करते समय, मैथुन काल में, प्रस्त्राव में, दन्तधावन में, श्राद्ध में और भोजन के समय मौन रहे।

उवासी, छींक, थूकना

जब उवासी (जम्हाई) आवे तो "चुटकी" बजा देवे। छींकने पर "जीवेम शरदः शतं" कहे। अधोवायु, थूक तथा नेत्र में जल आने से दाहिना कान, दाहिने अंगूठे से स्पर्श करले—(सांख्यायन स्मृति)।

क्षौर-कर्म का ज्ञान

एकादशी, अमावस्या, चतुर्दशी, पूर्णिमा, संक्रान्ति, व्यतिपात, व्रत, श्राद्ध, रवि, मंगल तथा शनि के दिन (हजामत) बाल नहीं बनवावे।

भानुर्मासं क्षपयति तथा सप्त मार्तण्डसूनुः।
भौमश्चाष्टौ वितरति शुभं बोधनः पञ्चमासान्॥
सप्तैवेन्दुर्दश सुरगुरुः शुक्र एकादशेति।
प्राहुर्गर्गप्रभृतिमुनयः क्षौरकार्येषु नूनम्॥

गर्गादि मुनियों ने इसके सम्बन्ध में कहा है कि रविरार को हजामत बनवाने से १, मंगल को ८ और शनिवार को ७ महीने की आयु क्षीण होती है। बुधबार को ५, सोमवार को ७, गुरुवार को १२ और शुक्रवार को ११ महीने की आयु बढ़ती है। (गृहस्थ को मंगल एवं गुरुवार को भी हजामत नहीं बनवानी चाहिये।)

शरीर में तेल लगाने का विचार

षष्ठी, एकादशी, द्वादशी, अमावस्या, पूर्णिमा तथा रवि, मंगल, गुरु और शुक्रवार को तेल नहीं लगाना चाहिए किन्तु सुगन्धित तेल लगा सकते हैं।

तैलाभ्यंगे रवौ तापः सोमे शोभा कुजे मृतिः।
बुधे धनं गुरौ हानिः शुक्रे दुःखं शनौ सुखम्॥
रवौ पुष्पं गुरौ दूर्वा भौमवारे च मृत्तिका।
गोमयं शुक्रवारे च तैलाभ्यंगे न दोषभाक्।
नित्यमभ्यंगके चैव वासिते नैव दूषणम्॥

रविवार को तेल लगाने से ज्वर, मंगलवार को मौत, गुरुवार को नुक्सान तथा शुक्रवार को पीड़ा होती है। सोमवार को शोभा कारक, बुधवार को धन प्राप्तिकारक और शनिवार को सुखदायक होता है। यदि निषिद्धवारों में तेल लगाना हो तो रविवार के दिन तेल में एक फल, गुरुवार को थोड़ी-सी घास, मंगलवार को मिट्टी और शुक्रवार को गोबर डालके लगाने से दोष निवारण हो जाता है। सुगन्धित तेल तथा प्रतिदिन तेल लगाने वाले मनुष्यों को कोई भी दोष नहीं है।

अयन तथा ऋतु का ज्ञान

(१) अयन—मकर संक्रान्ति से मिथुन संक्रान्ति (माघ से आषाढ़) तक "उत्तरायण सूर्य" और कर्क से धनु (श्रावण से पौष) तक "दक्षिणायन सूर्य" रहता है।

(२) ऋतु—बसन्त ऋतु—मीन और मेष की संक्रान्ति में (चैत्र, वैशाख)। ग्रीष्म ऋतु वृष और मिथुन की संक्रान्ति में (ज्येष्ठ, आषाढ़)। वर्षा ऋतु—कर्क और सिंह की संक्रान्ति में (श्रावण, भाद्रपद)। शरद् ऋतु कन्या और तुला में (आश्विन, कार्तिक)। हेमन्त ऋतु वृश्चिक और धनु में (अगहन, पौष)। शिशिर ऋतु-मकर और कुम्भ में (माघ फाल्गुण) इस प्रकार एक वर्ष में छः ऋतुयें पूर्ण हो जाती हैं।

संकल्प

स्नान, संध्या, दान, देवपूजा के आरम्भ में संकल्प अवश्य करना चाहिए। दाएं हाथ में केवल जल या जल पुष्प आदि लेकर नीचे लिखा जो संकल्प है उसमें अमुक के स्थान पर अपना नाम उसके बाद जो शब्द है उसका विशेषण नाम पञ्चाङ्ग आदि में बोलना चाहिए।

ब्राह्मण नाम के अन्त में 'शर्मा' क्षत्रिय में 'वर्मा' वैश्य में 'गुप्त' और शूद्र में 'दास' शब्द का उच्चारण करे। श्राद्धतर्पणादि में पितरों के नाम के अन्त में भी इसी प्रकार कहे।

ॐ तत्सदद्य श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रर्वतमानस्य अद्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे युगे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे बौद्धावतारे आर्या-

वर्तेदेशान्तर्गते (अमुक) देशे, पुण्ये (अमुक) क्षेत्रे, (अमुक) ग्रामे, विक्रम सम्वत्सरे (अमुक) संख्यके, शालिवाहनशके (अमुक) संख्यके, (अमुक) नाम्नि सम्वत्सरे, (अमुक) अयने, (अमुक) ऋतौ, (अमुक) मासे, (अमुक) पक्षे, (अमुक) तिथौ, (अमुक) वासरे, (अमुक) नक्षत्रे, (अमुक) गोत्रोत्पन्नः (अमुक) नामाहं मम कायिकवाचिक-मानसिक-ज्ञाताज्ञातसकलदोष-परिहारार्थं श्रुतिस्मृति-पुराणोक्त फलप्राप्त्यर्थं श्रीपरमेश्वर-प्रीत्यर्थम् (अमुक) काले (अमुक) सम्मुखे, (अमुक) कर्म करिष्ये। कहकर जलादि छोड़े।

विशेष—यजमान के लिए संकल्प करें तो यजमान का षष्ठ्यन्त गोत्र तथा नाम उच्चारण करें और अन्त में "करिष्ये" की जगह "करिष्यामि" कहे।

स्नान कर्म की आवश्यकता

स्नानमूलाः क्रियाः सर्वाः संध्योपासनमेव च।
स्नानाचार विहीनस्य सर्वाः स्युः निष्फलाः क्रियाः॥
स्नानमूलाः क्रियाः सर्वाः श्रुतिस्मृत्युदिता नृणाम्।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन स्नानं कुर्यादतन्द्रितः॥

संध्योपासनादिक समस्त क्रियाओं का मूल स्नान है। स्नान के बिना सभी क्रियाएं निष्फल हो जाती हैं।

संध्योपासनादिक क्रियाएं स्नान के बिना निष्फल हो जाती हैं। इसलिए स्नान अवश्य करे।

उषा काले तु सम्प्राप्ते कृत्वा शौचं यथार्थवत्।
ततः स्नानं प्रकुर्वीत दन्तधावन पूर्वकम्॥

स्नान विधिः

मनुष्य के शरीर में प्रधान ९ छिद्र हैं। वे रात्रि में शयन करने से अपवित्र हो जाते हैं। इसलिए प्रातः स्नान अवश्य करें।

निपानादुद्धृतं पुण्यं ततः प्रस्त्रवणोदकम्।
ततोऽपि सारसं पुण्यं ततो नादेयमुच्यते।
तीर्थतोयं ततः पुण्यं गंगातोयं ततोऽधिकम्॥

कुएं के जल से अधिक पवित्र झरने का जल, झरने के जल से सरोवर का, सरोवर से नदी का जल, नदी से तीर्थ का जल और तीर्थ से गंगा जी का जल श्रेष्ठ है।

गरम जल का त्याग

संक्रान्त्यां रविवारे च सप्तम्यां राहुदर्शने।
आरोग्ये पुत्रमित्रार्थं न स्नायादुष्णवारिणा ॥
मृते जन्मनि संक्रान्तौ श्राद्धे जन्मदिने तथा।
अस्पृश्यस्पर्शने चैव न स्नायादुष्णवारिणा ॥

संक्रान्ति, रविवार, सप्तमी, ग्रहण, संतानोत्पत्ति, मृतशौच, श्राद्ध जन्मतिथि के दिन और अस्पृश्य से स्पर्श हो जाने पर गरम जल से स्नान नहीं करना चाहिये।

न दन्तधावनं कुर्याद् गंगागर्भे विचक्षणः।
परिधेयाम्बराम्बूनि गंगास्रोतसि न त्यजेत् ॥

गंगा जी में दातुन नहीं करें, स्नान के बाद गंगा जी में भीगी हुई धोती नहीं बदलनी चाहिए और न निचोड़नी चाहिये।

असामर्थ्याच्छरीरस्य कालशक्त्याद्यपेक्षया।
मन्त्रस्नानादयस्सप्त केचिदिच्छन्ति सूरयः ॥
मान्त्रं भौममथाग्नेयं वायव्यं दिव्यमेव च।
वारुणं मानसं चैव सप्तस्नानं प्रकीर्तितम् ॥

स्नान हेतु वरुण देव की प्रार्थना

अपामधिपतिस्त्वं च तीर्थेषु वसतिस्तव।
वरुणाय नमस्तुभ्यं स्नानानुज्ञां प्रयच्छ मे ॥

जलाधिपति वरुण देवता की प्रार्थना करके नीचे लिखे हुए मन्त्र से शरीर व मस्तक में मृत्तिका लगावे।

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते ! विष्णुक्रान्ते ! वसुन्धरे !
मृत्तिके ! हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम् ॥

स्नान हेतु तीर्थों का आवाहन

पुष्कराद्यानि तीर्थानि गंगाद्याः सरितस्तथा।
आगच्छन्तु पवित्राणि स्नानकाले सदा मम ॥१॥
गंगे ! च यमुने ! चैव गोदावरि ! सरस्वति !
नर्मदे ! सिन्धु ! कावेरि ! जेलऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥२॥

कुरुक्षेत्र—गया—गंगा—प्रभास-पुष्कराणि च।
एतानि पुण्यतीर्थानि स्नानकाले भवन्त्विह ॥३॥
त्वं राजा सर्वतीर्थानां त्वमेव जगतः पिता।
याचितं देहि मे तीर्थ तीर्थराज ! नमोऽस्तु ते ॥४॥

ततस्तीरं समासाद्य गायत्र्यानुमन्त्रितेन जलेनाचम्य—ॐ उपास्मै गायतां नरः पवमानायेन्दवे। अभिदेवां इ यक्षते। ३३/६२ ॥ ॐअभिते मधुना पयो अथर्वाणो अशिश्रयुः देवं देवाय देवयुः। ॐ स नः पवस्व शङ्गवे शञ्जनाय शमर्वते। शं राजन्नौषधीभ्यः। ॐ नमोनारायणाय। इदं विष्णु र्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्यपाꣳ सुरे स्वाहा। य.५/१५ ॥ ॐ त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः। अतो धर्माणि धारयन्। ३४/४३ ॥ ॐ विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे। इन्द्रस्य युज्यः सखा। ६/४ ॥

इति पठित्वा मृदा गात्राण्यालभ्य नारायण देवं स्मरन् जलं प्रविशेत ॥

स्नानं— अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णु क्रान्ते वसुन्धरे।
मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम् ॥
उद्धृतासि बराहेण कृष्णेन शतबाहुना।
नमस्ते स्वर्गलोकानां प्रभवारणि सुव्रते ॥
अग्राह्य मम गात्राणि सर्वपापं प्रमोचय ॥

भागीरथी (गंगाजी) की प्रार्थना

विष्णुपादाब्जसम्भूते, गंगे ! त्रिपथगामिनि ॥
धर्म्मद्रवेति विख्याते, पापं मे हर जाह्नवि ॥१॥
गंगा गंगेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकञ्च गच्छति ॥२॥

कटि पर्यन्त जल में घुसकर प्रवाह की ओर या सूर्य की ओर मुख करके जल के ऊपर ब्रह्महत्या रहती है इसलिए जल हिलाकर के तीन गोते नाक कान बन्द करके लगाने चाहिएं।

घर में स्नान करें तो "पूर्व दिशा की ओर मुख करे" पात्र में जल ले वरुण और गंगा आदि तीर्थों का आवाहन और संकल्प कर पैर तथा मुख धोकर स्नान करें।

यथेच्छ स्नान कर चुकने पर नीचे लिखे मन्त्र से जल के बाहर एक अंजलि जल देवें।

यन्मया दूषितं तोयं मलैः शारीरसम्भवैः।
तस्य पापस्य शुद्ध्यर्थं यक्ष्माणं तर्पयाम्यहम्॥

असमर्थ अवस्था में नीचे लिखी क्रिया करने से भी स्नान का फल होता है।

आ-मणेर्बन्धनाद्धस्तौ पादौ चाजानुतः शुची।
प्रक्षाल्य चाचामेद्विद्वानन्तर्जानु करो द्विजः॥

मणिबन्ध (पहुंची) तक हाथ तथा घुटनों तक पैर धोकर एवं पवित्र होकर दोनों घुटनों के भीतर हाथ करके आचमन करने से स्नान के समान फल मिलता है।

स्नानांग-तर्पण (घर में नहीं करे)

पूर्वदिशा की ओर मुख करके तथा सव्य हो (जनेऊ को बाएं कन्धे पर) देवतीर्थ से एक-एक अंजलि जल देवे।

देवतर्पण—ॐ ब्रह्मादयो देवास्तृप्यन्ताम्। ॐ भूर्देवास्तृ०। ॐ भुवर्देवास्तृ०। ॐ स्वर्देवास्तृ०। ॐ भूर्भुवः स्वर्देवास्तृ०।

उत्तर दिशा की ओर मुंह करके तथा कण्ठी हो (जनेऊ को गले में माला की तरह कर) कायतीर्थ से दो-दो अंजलि देवें।

ऋषितर्पणम्—ॐ मरीच्यादि ऋषयस्तृ० २। ॐ सनकादि द्वैपायनान्ता ऋषयस्तृप्यन्ताम् २। ॐ भूर्ऋषयस्तृ० २। ॐ भुवर्ऋषयस्तृ० २। ॐ स्वर्ऋषयस्तृ० २। ॐ भूर्भुवः स्वर्ऋषयस्तृ० २।

दक्षिण दिशा की ओर मुंह करके तथा अपसव्य होकर (जनेऊ को दाहिने कन्धे पर करके) पितृतीर्थ से तीन-तीन अंजलि जल की देवें।

पितृतर्पणम्—ॐ कव्यवाडादयो देवपितरस्तृप्यन्ताम् ३। ॐ चतुर्दशयमास्तृप्यन्ताम् ३। ॐ भूः पितरस्तृ०३। ॐ भुवः पितरस्तृ०। ॐ स्वः पितरस्तृ ३। ॐ भूर्भुवः स्वः पितरस्तृ० ३। ॐ अमुकगोत्रा अस्मन। माताः पिता-मही-प्रपितामह्यस्तृप्यन्ताम् ३। ॐ अमुकगोत्रा अस्मन्माता-महप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकास्तृ०३। ॐ आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं जगततृप्यताम् ३॥

नीचे लिखे मन्त्र से जल के बाहर एक अंजलि देवें।

अग्निदग्धाश्च ये जीवा येऽप्यदग्धाः कुले मम।
भूमौ दत्तेन तृप्यन्तु तृप्ताः यान्तु परांगतिम्॥

येऽबान्धवाः बेन्धवाः वा येऽन्यजन्मनि बान्धवाः।
ते तृप्तिमखिला यान्तु यश्चास्मत्तोऽभिवाञ्छति ॥

असंस्कृत प्रमीतानुद्दिश्य स्नानीयं वस्त्रं निष्पीडयेत्—

ये चास्माकं कुले जाताः अपुत्राः गोत्रिणो मृताः।
ते पिबन्तु मया दत्तं वस्त्र निष्पीडनोदकम् ॥

नीचे लिखे मन्त्र से जल के बाहर दाहिनी ओर अपनी चोटी के जल को निचोड़े।

लतागुल्मेषु वृक्षेषु पितरो ये व्यवस्थिताः।
ते सर्वे तृप्तिमायान्तु मयोत्सृष्टैः शिखोदकैः ॥

"सव्य हो" आचमन कर बाहर एक अंजलि जल की देवें।

यन्मया दूषितं तोयं शरीर-मल-सम्भवम्।
तस्य पापस्य शुद्ध्यर्थं यक्ष्मैतत्ते तिलोदकम् ॥

वस्त्र धारण करने का मन्त्र

मंगल कार्य में दो वस्त्र धारण करें। अभाव में आधी धोती ओढ़ें। नया या धोवी का धुला हुआ वस्त्र पवित्र करके ही धारण करें। अमावस्या, संक्रान्ति, रवि और श्राद्ध के दिन साबुन से वस्त्र नहीं धोवे तथा धोबी को नहीं दें।

नया वस्त्र धारण करने का मंत्र

ॐ परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्मि।
शतञ्च जीवामि शरदः पुरूचीरायस्पोषमभिसंव्ययिष्ये ॥

उक्त मन्त्र से नया वस्त्र धारण करें।

विशेष—जल में सूखे तथा स्थल पर भीगे वस्त्र से सन्ध्यादि नहीं करनी चाहिए।

आसन

मृगछाला, कुशा और ऊन का आसन पवित्र माना गया है। आसन झाड़कर कुशासन की ग्रन्थि उत्तर दक्षिण करके बिछावें।

शिखा (चोटी) बांधने का मन्त्र

शिखा बांधकर कर्म करना चाहिए। अत एव नीचे लिखे मन्त्र से अथवा गायत्री मन्त्र से शिखा बन्धन करे। यदि शिखा न हो तो शिखा के स्थान का स्पर्श कर लें।

हे चिद्रूपिणि ! महामाये ! दिव्यतेजः समन्विते ।
तिष्ठ देवि ! शिखामध्ये तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे ॥

तिलक धारण

तिलक लगाये बिना सन्ध्या, तर्पण और देवपूजा आदि नहीं करनी चाहिए, चन्दन आदि के अभाव में जल भस्म, मृत्तिका लगाकर तिलक करें।

अनामिका शान्तिदा उक्ता मध्यमायुष्करी भवेत्।
अंगुष्ठः पुष्टिदः प्रोक्तः तर्जनी मोक्षदायिनी॥

तिलक करने में अनामिका अंगुली शान्ति देने वाली, मध्यमा अंगुली आयु बढ़ाने वाली, अंगुष्ठ पुष्टि को देने वाला और तर्जनी मोक्ष को देने वाली कही है। चकले पर से चन्दन नहीं लगाना चाहिए।

तिलकं ललाटे उदरे चैव वक्षे वैकुण्ठ कूपके।
कुक्षौ वाह्वोः कन्धरे च पार्श्वे पृष्ठे तथैव च।
तिलकं तु दश प्रोक्तं ब्राह्मणाय सदानघ॥
ब्राह्मणस्तिलकं कृत्वा कुर्यात्सन्ध्यां च तर्पणम्॥
देवानभ्यर्च्य गन्धेन सर्वपापाप नुत्तये॥

चन्दन धारण करने का मन्त्र

चन्दनं महत्पुण्यं पवित्रं पापनाशनम्।
आपदं हरते नित्यं लक्ष्मीस्तिष्ठति सर्वदा॥

तिलक धारण विधिः

ललाट में केशव भगवान् का, कण्ठ में पुरुषोत्तम भगवान् का, हृदय में वैकुण्ठ भगवान् का, नाभि में नारायण का, पीठ में पद्मनाथ का, बाएं पार्श्व (पसवाड़ा) में विष्णु का, दाहिने में वामन जी का, बाएं कान में यमुना जी का, दाहिने में गंगाजी का, बाईं भुजा में कृष्ण भगवान् का, दाहिनी भुजा में हरि का, मस्तक में हृषीकेश का और गर्दन में दामोदर भगवान् का स्मरण करते हुए साधक इन तेरह स्थानों में चन्दन करे।

भस्म-धारण-विधिः

प्रातः काल में जलमिश्रित, मध्याह्न काल में चन्दन मिश्रित और सायंकाल में सूखी भस्म लगानी चाहिये। बाएं हाथ में भस्म लेकर दाहिने हाथ से नीचे लिखे मन्त्रों से अभिमन्त्रित करें।

ॐ अग्निरिति भस्म। ॐ वायुरिति भस्म।
ॐ जलमिति भस्म। ॐ स्थलमिति भस्म।
ॐ व्योमेति भस्म। ॐ सर्वꣳह वा इदं भस्म।
ॐ मन एतानि चक्षूंषि भस्मानीति॥

भस्म के धारण करने का मंत्र

नीचे लिखे मन्त्र से भस्म यथा स्थानों में लगावें।

'ॐ त्र्यायुषं जमदग्ने इति ललाटे। ॐ कश्यपस्य 'त्र्यायुषम्' इति कण्ठे। ॐ 'यद्देवेषु त्र्यायुषम्' इति भुजाभ्यां। ॐ 'तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्' इति हृदये।

भस्म त्रिपुण्ड्रधारणम्—

सर्वेषामेव भूतानां शम्भोर्लिङ्गमनुत्तमम्।
सितेन भस्मना कार्यं ललाटे तत् त्रिपुण्ड्रकम्॥

यज्ञोपवीत-धारण-विधिः

संकल्प कर दो यज्ञोपवीत धारण करें। यदि मलमूत्र त्यागते समय यज्ञोपवीत कान पर चढ़ाना भूल जाएं तो नया बदल लें।

श्रावणी कर्म में पूजन किया न हो तो नवीन यज्ञोपवीत को जल से शुद्ध करके दस बार गायन्त्री मन्त्र से अभिमन्त्रित करले और नीचे लिखे मन्त्रों से प्रत्येक सूत्रों एवं ग्रन्थियों में देवताओं का आवाहन करें।

प्रथम-तन्तौ—ॐकारमावाहयामि। द्वितीय-तन्तौ ॐ अग्निमावाहयामि। तृतीयतन्तौ—ॐ सर्पानावाहयामि। चतुर्थतन्तौ—ॐ सोममावाहयामि। पञ्चम-तन्तौ—ॐ पितृनावाहयामि। षष्ठ-तन्तौ—ॐ प्रजापतिमावाहयामिं। सप्तमतन्तौ—ॐ अनिलमावाहयामि। अष्टमतन्तौ ॐ सूर्यमावाहयामि। नवम-तन्तौ—ॐ विश्वान् देवानावाहयामि। ग्रन्थि में—ॐ ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि। 'ॐ विष्णवे नमः' विष्णुमावाहयामि। 'ॐ रुद्राय नमः' रुद्रमावहयामि।

इस प्रकार आवाहन करके नीचे लिखे हुए मन्त्रों से यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए।

यज्ञोपवीत के धारण करने का मंत्र

ॐ यज्ञोपवीतमिति मन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषिः लिंगोक्ता देवता त्रिष्टुप्छन्दः यज्ञोपवीतधारणे विनियोगः।

ऐसा कहकर जल छोड़ें।

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्राजपतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि॥

जनेऊ धोकर प्रत्येक बार मन्त्र बोलता हुआ एक-एक यज्ञोपवीत धारण करे।

पुराने जनेऊ को कंठी करके सिर पर से पीठ की ओर निकाल कर 'समुद्रं गच्छ स्वाहा' इसे पढ़कर जलाशय में फैंक देवे। फिर यथासंख्या गायत्री मन्त्र का जप करना चाहिए।

जीर्णयज्ञोपवीत त्याग का मन्त्र

एतावद्दिनपर्यन्तं ब्रह्म त्वं धारितं मया।
जीर्णत्वात् त्वत्परित्यागो गच्छ सूत्र यथासुखम्॥

कुशग्रहणविधिः

भादों के महीने की कुशोत्पाटिनी अमावस्या के दिन ग्रहण की हुई कुशा बारहों महीना, अन्य अमावस्या की एक महीना, पूर्णिमा की १५ दिन तक और प्रत्येक दिन की उसी दिन तक कुशा पवित्र रहती है। सन्ध्या, पितृकार्य और देवपूजन में अग्र और मूलसहित दो कुशाओं की पवित्री दाहिने हाथ की और तीन की बाएं हाथ की अनामिका अंगुली में पहिने।

कुशा-ज्ञान

प्रादेशमात्रं दर्भः स्याद् द्विगुणं कुशमुच्यते।
कृतरत्निर्भवेद्बर्हिस्तदूर्ध्वं तृणमुच्यते॥

एक प्रादेश (अंगूठा और तर्जनी फैलाना) के बराबर के दर्भ को प्रादेश मात्र की एक कुशा और हाथ की कोहनी से कनिष्ठा अंगुली की जड़ पर्यन्त की एक कुशा वर्हि कही जाती है, इस से लम्बा कुश तृण कहलाता है।

पूर्व या उत्तरमुख होकर कुशा का पूजन कर कुशा की नीचे लिखी प्रार्थना करें। पश्चात् प्रत्येक बार 'हुं फट्" बोलकर जड़ सहित उखाड़ लें। कुशा हाथ से छोटी अर्थात् उपर्युक्त श्लोकानुसार ही लें।

कुशा-ग्रहण-मन्त्र

विरञ्चिना सहोत्पन्न ! परमेष्ठि निसर्गज !
नुद सर्वाणि पापानि दर्भ ! स्वस्तिकरो भव॥

त्याग-योग्य कुशा

ये तु पिण्डास्तृताः दर्भाः यैः कृतं पितृतर्पणम्।
अमेध्याशुचिलिप्ता ये तेषां त्यागो विधीयते॥

पिण्ड के नीचे रखी हुई तथा पिण्ड के ऊपर की तथा तर्पण की हुई, अपवित्र जगह में पड़ी हुई कुशाओं को त्याग देना चाहिये।

जप करने की विधि

जप करने के समय दाहिना हाथ गोमुखी में डालें अथवा वस्त्र से ढक लें। शिर के ऊपर हाथ तथा वस्त्र नहीं रखना चाहिए। "वाचिक जप" धीरे-धीरे बोलकर करें। "उपांशु-जप" दूसरे नहीं सुने इस प्रकार करें तथा "मानसिक-जप" जिह्वा और ओंठ न हिलें इस प्रकार उत्तरोत्तर करना उत्तम है। जप करते समय हिलना, ऊंघना, बोलना और माला का गिरना हानिकारक है। यदि बोल लेवे तो ॐ भगवत् स्मरण कर आचमन करके फिर से जप आरम्भ करे।

गृहे चैकगुणः प्रोक्तो गोष्ठे शतगुणः स्मृतः।
पुण्यारण्ये तथा तीर्थे सहस्त्रगुणमुच्यते॥
अयुतं पर्वते पुण्यं नद्यां लक्षगुणो जपः॥
कोटिर्देवालये प्राप्ते अनन्तं शिवसन्निधौ॥

घर में जप करने से एक गुना फल, गौओं के समीप में सौगुना फल, पवित्र वन या बगीचे और तीर्थ में जप करने से हज़ार गुना फल, पर्वत पर जप करने से दस हज़ार गुना फल, नदी किनारे जप करने से लाख गुनाफल, देवालय में जप करने से करोड़ गुनाफल और शिव के समीप में जप करने से अनन्त गुना फल मिलता है।

प्रातर्नाभौ करं कृत्वा मध्याह्ने हृदि संस्थितम्।
सायं जपति नासाग्रे जपस्तु त्रिविधः स्मृतः॥
कृत्वोत्तानौ करौ प्रातः सायं न्युब्जौ करौ तथा।
मध्याह्ने हृदयस्थौ तु कृत्वा जपमुदीरयेत्॥
प्रातर्मध्याह्नयोस्तिष्ठन् गायत्री-जपमारभेत्।
ऊर्ध्वजानुस्तु सायाह्ने ध्यानालोकनतत्परः॥

प्रातः काल में हाथ को सीधा तथा अंगुलियों को ऊपर की ओर कर नाभि के पास, मध्याह्न में हृदय के पास और सायंकाल में दाहिने घुटने के ऊपर हाथ रखकर नासिका के समीप उल्टा हाथ करके जप करें।

यस्मिन् स्थाने जपं कुर्याद् शक्रो हरति तज्जपम्।
तन्मृदा लक्ष्म कुर्वीत ललाटे तिलकाकृतिः॥

जिस आसन पर बैठकर जप किया है उसके नीचे की मिट्टी मस्तक में लगाकर आसन छोड़ना चाहिए। ऐसा नहीं करने से जप के फल को इन्द्र ले लेता है।

माला-विधि

माला १०९ दानें की होती है जिसमें एक सुमेरु होती है। प्रत्येक मणि के बीच में ग्रन्थि दी हुई माला, सुमेरु को छोड़कर १०८ दाने की माला सबसे उत्तम मानी गई है। माला को अनामिका पर रखकर अंगूठे से स्पर्श करते हुए मध्यमा से फेर कर मन्त्र जपे। सुमेरु का उल्लंघन नहीं करें। दोबारा फेरते समय सुमेरु के पास से माला घुमा कर जप करे।

जप-माला की प्रार्थना

जपमाला का पूजन तथा प्रार्थना करके फेरने से विशेष फल मिलता है।

ॐ ह्रींमाले ! महामाये ! सर्वशक्तिस्वरूपिणि।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव॥
अविघ्नं कुरु माले ! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे।
जपकाले च सिद्धयर्थं प्रसीद मम सिद्धये॥
अक्षमालायै नमः—इत्यर्घादिभिः संपूज्य—
ह्रीं अविघ्नं कुरु माले त्वं जपकाले सदा मम।
निर्विघ्नं कुरु देवेशि अक्षमाले नमोऽस्तु ते॥

इति दक्षिण हस्तेन गृहीत्वा शिरसि गुरुं। हृदये स्वेष्टदेवतां ध्यायन् हृदयसमीपे मालामानीय दक्षहस्तमध्यमा मध्य पर्वणि संस्थाप्य प्रणवं उच्चार्य प्रजप्य अन्ते जपं समाप्य।

ह्रीं त्वं माले सर्व देवानां प्रीतिदा शुभदा मता।
शुभं कुरुष्व मे भद्रे यशोवीर्यं च देहि मे॥

देवमन्त्र जपने की करमाला

(शक्ति की करमाला संध्या में देखें)

दाहिने हाथ की अंगुलियों को मिलाकर हथेली की ओर कुछ टेढ़ी करें। अलग-अलग रहने से जप का पूर्ण फल नहीं मिलता है।

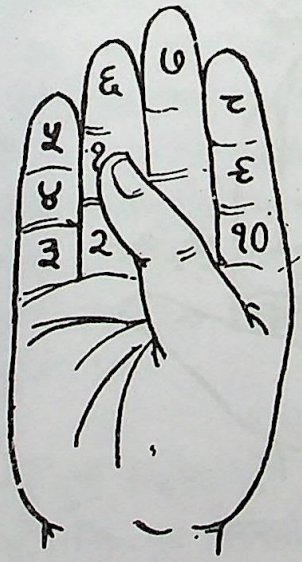

नं० 1

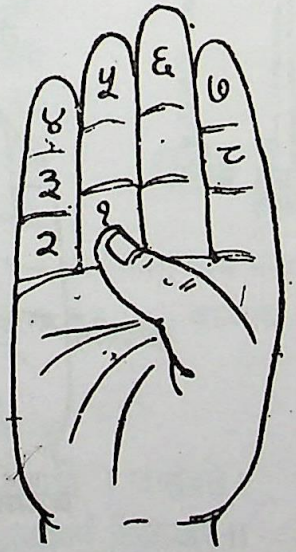

नं० 2

अंगुल्यग्रे च यज्जप्तं यज्जप्तं मेरुलंघनात्।
पर्वसन्धिषु यज्जप्तं तत्सर्वं निष्फलं भवेत्॥

अंगुली के अग्रभाग (नख के पास) तथा पर्व की लकीर पर और सुमेरु का उल्लंघन करके किया हुआ जप निष्फल माना है।

चित्र नं. १—एक अंक से आरम्भ करके १० अंक तक अंगूठे से जप करने पर एक करमाला होती है। इसी प्रकार दस करमाला जप कर १०० संख्या होती है। तत्पश्चात् चित्र नं. २ के अंक १ से आरम्भ कर ८ अंक तक जप करने से १०८ संख्या की एक माला होती है।

आरभ्यानामिका मध्यं पर्वाण्युक्तान्यनुक्रमात्।
तर्जनी-मूल-पर्यन्तं जपेद्दशसु पर्वसु॥
मध्यमांगुलिमूले तु यत्पर्वद्वितयं भवेत्।
तं वै मेरुं विजानीयाज्जाप्ये तं नातिलंघयेत्॥

आचमन विधि

पुण्यकर्मों के आरम्भ में आचमन अवश्य करें। ब्राह्मण के हृदय तक, क्षत्रिय के कंठ तक तथा वैश्य के तालु तक पहुंचने से एक आचमन होता है। प्रथम आचमन से "आध्यात्मिक" दूसरे से "आधिभौतिक" तीसरे से "आधिदैविक" पीड़ा की शान्ति होती है। दाहिने हाथ में जल लेकर अंगुष्ठ तथा कनिष्ठिका को अलग कर नीचे लिखे प्रत्येक नाम बोलकर ब्रह्मतीर्थ से आचमन करने से एक आचमन होता है। किन्तु आचमन में ओष्ठ का शब्द करना निषिद्ध है।

ॐ केशवाय नमः ।। ॐनारायणाय नमः ।। ॐ माधवाय नमः ।।

आचमन करके अंगूठे के मूल से दो बार होठों को पोंछकर 'ॐ हृषीकेशाय नमः'। ऐसा बोलकर हाथ धोवें।

जल के अभाव में दाहिना कान तथा नासिका को अंगूठे से स्पर्श करें। (पराशर)

अग्नितीर्थ—दाहिनी हथेली के मध्य में।

ब्रह्मतीर्थ—अंगूठे के मूल में।

देवतीर्थ—अंगुलियों के अग्र भाग में।

कायतीर्थ—कनिष्ठिका के मूल में।

पितृतीर्थ—तर्जनी के मूल में।

अर्घ्य-विधिः

चित्र के अनुसार पूर्व दिशा की ओर मुख करके खड़ा होवे, दोनों पैरों का अग्रभाग बराबर करके जल तथा पुष्पादिक लेकर तर्जनी से अंगूठे को अलग रखते हुए नीचे लिखे हुए नामों से एक-एक अर्घ्य देवे।

ॐ श्री गणेशाय नमः १। ॐ सत्यनारायणाय नमः २। ॐ ब्रह्मणे नमः ३। ॐ विष्णवे नमः४। ॐ रुद्राय नमः ५। ॐ देव्यै नमः ६। ॐ नवग्रहेभ्यो नमः ७। ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः ८। ॐ कुलदेवताभ्यो नमः ९। ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः १०। ॐ पञ्चलोकपालेभ्यो नमः ११। ॐ दशदिक्पालेभ्यो नमः १२। ॐ अष्टकुलनागेभ्यो नमः १३। ॐ अष्टवसुदेवताभ्यो नमः १४। ॐ पञ्चभूतेभ्यो नमः १५। ॐ भूरादिलोकेभ्यो नमः १६। ॐ साक्षीभूताय नमः १७। ॐ धर्मराजाय नमः १८। ॐ चित्राय नमः १९। ॐ चित्रगुप्ताय नमः २०। ॐ श्रवणदेवताभ्यो नमः २१। ॐ मित्राय नमः २२। ॐ वरुणाय नमः २३। ॐ कुवेराय नमः २४।

सूर्यार्घ्यमन्त्र

एहि सूर्य ! सहस्रांशो ! तेजोराशे ! जपत्पते।
अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यं दिवाकर।।

सन्ध्योपासन-विधिः

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों को संध्या अवश्य करनी चाहिये। संध्या नहीं करने से शुभ कर्मों का पूर्णफल प्राप्त नहीं होता। जल में सूखा वस्त्र और स्थल में गीला वस्त्र धारण कर संध्या-तर्पण न करें।

उपास्ते यस्तु नो सन्ध्या ब्राह्मणो हि विशेषतः।
स जीवन्नेव शूद्रः स्यान्मृतः श्वा चाभिजायते।
सन्ध्याहीनोऽशुचि नित्यमनर्हः सर्वकर्मसु।
यदन्यत्कुरुते किञ्चिन्न तस्य फलभाग्भवेत्।

संध्या-हीनोऽशुचिनित्यमनर्हं सर्वकर्मसु।
यदन्यत्कुरुते कर्म न तस्य फलभाग् भवेत्॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि संध्या नहीं करें तो वे अपवित्र हैं और उन्हें कर्म का फल नहीं प्राप्त होता।

त्रिकाल संध्या-ज्ञान

प्रातः सन्ध्यां सनक्षत्रां मध्याह्ने मध्यभास्कराम्।
ससूर्यां पश्चिमां सन्ध्यां तिस्रः सन्ध्या उपासते।

प्रातः कालीन संध्या तारों के रहते हुए करनी चाहिये। मध्याह्न में सूर्य आकाश के मध्य में हो तब करनी, और सायंकाल में सूर्यास्त के पहले ही संध्या करनी चाहिये।

जपन्नासीत् सावित्रीम्प्रत्यगातारकोदयात्।
सन्ध्यां प्राक् प्रातरेवं हि तिष्ठेदासूर्यदर्शनात्॥

सायंकाल में पश्चिम की तरफ मुख करके जब तक तारे उदय नहीं हुए हों और प्रातः काल में पूर्व की ओर मुख करके जब तक सूर्य का दर्शन न हुआ तब तक जपता रहे।

अर्घ्य-ज्ञान

एकं वाहननाशाय द्वितीयं शस्त्रनाशनात्।
असुराणां वधार्थाय तृतीयार्घ्यं विदुर्बुधाः॥

पहले अर्घ्य के देने से असुरों के वाहन नष्ट होते हैं। दूसरे अर्घ्यदान से असुरों के शस्त्रनाश होते हैं और तीसरे अर्घ्य से असुरों का वध होता है।

वेदादि विद्याजपः

गृहस्थो ब्रह्मचारी च प्रणवाद्यामिमां जपेत्।
अन्ते यः प्रणवं कुर्यान्नसौ वृद्धिमवाप्नुयात्॥

ऋषयो दीर्घ सन्ध्यत्वाद्दीर्घमायुरवाप्नुवान्।
प्रज्ञां यशश्च कीर्तिं च ब्रह्मवर्चसमेव च॥
दीर्घ सन्ध्यत्वं जपाधिक्यात्।

गृहस्थी तथा ब्रह्मचारी साधक गायत्री के आदि में ॐ का उच्चारण करके जप करे, अन्त में उच्चारण न करे क्योंकि ऐसा करने से उसकी वृद्धि नहीं होती है।

गायत्री कवच व हृदय के जप का विवेक

चतुष्षष्टिकला विद्या सकलैश्वर्यसिद्धिदम्।
जपारम्भे च हृदयं जपान्ते कवचं पठेत्॥

जप के पहले चौंसठ कलायुक्त विद्या तथा सम्पूर्ण ऐश्वर्यों की सिद्धि देने वाले "गायत्री हृदय" तथा जप के अन्त में "गायत्री कवच" का पाठ अवश्य करे।

गृहेषु प्राकृती संध्या गोष्ठे शतगुणा स्मृता।
नदीषु शतसाहस्री अनन्ता शिवसन्निधौ॥

घर में संध्यावन्दन करने से एक गुणा, गो स्थान में सौ गुना, नदी किनारे लाख गुणा, शिव के समीप में अनंत गुणा फल होता है।

पादशेषं पीतशेषं सन्ध्याशेषं तथैव च।
शुनो मूत्रसमं तोयं पीत्वा चान्द्रायणं चरेत्॥

पैर धोने का जल, पीने का जल और संध्या करने का जल, जो बचा हुआ जल है वह श्वान के मूत्र के तुल्य हो जाता है, उसके पीने पर चान्द्रायण-व्रत करने से ही साधक पवित्र होता है। इसलिए बचे हुए जल को त्याग देवे, किसी कार्य में न ले।

प्रातः-संध्या

आसन की ग्रन्थि उत्तर तथा दक्षिण की ओर करके बिछावे। गमछा आदि दूसरा वस्त्र ले पूर्वाभिमुख बैठ, शिखा बांध, तिलक करके नीचे लिखे चित्र के अनुसार पात्रादि रखे।

लोटा—एक बड़ा जलपात्र अन्य कृत्य के लिए। तामडी—जल छोड़ने के लिये।

घण्टी—संध्या का छोटा जलपात्र, छत्री बेली—चन्दन, पुष्पादि के लिए, पञ्चपात्र—विनियोग आदि के लिए, छोटा जल का पञ्चपात्र—आचमन के लिए आचमनी। अर्घा—अर्घ्य तथा तर्पण के लिए।

दाहिनी अनामिका की जड़ में दो कुशा की और बाईं में तीन कुशा की पवित्री धारण कर, बाएं हाथ में बहुत-सी कुशाओं की तथा दाहिने में तीन की गुच्छी ले, ईशान मुख होकर आचमन करे।

जपन्नासीत सावित्रीं प्रत्यगातारकोदयात्।
सन्ध्यां प्राक् प्रातरेव हि तिष्ठेदादित्य दर्शनात्॥

आचमन-मन्त्र

ॐ केशवाय नमः। ॐ नारायणाय नमः। ॐ माधवाय नमः। पश्चात् अंगूठे की जड़ से दो बार ओठों को पोंछकर "ॐ हृषीकेशाय नमः।" बोलकर हाथ धोवें।

विनियोग

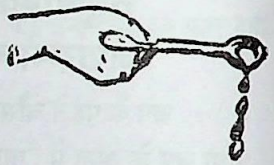

ॐ अपवित्रः पवित्रो वेत्यस्य वामदेवः ऋषिः विष्णुर्देवता अनुष्टुप् छन्दः मुखे हृदि च पवित्रकरणे विनियोगः॥

पवित्रकरण मन्त्र

नीचे लिखे मन्त्र से शरीर पर जल छिड़के और ईश्वर का स्मरण करे।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्ववस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

आसन पवित्र करण-मन्त्र का विनियोग

ॐ पृथ्वीति मन्त्रस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः सुतलं छन्दः।
कूर्मो देवता आसन पवित्रकरणे विनियोगः॥

नीचे लिखे मन्त्र से आसन पर जल के छींटे दें।

ॐ पृथ्वि ! त्वया धृता लोका देवि ! त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां देवि ! पवित्रं कुरु चासनम्॥

दाहिने हाथ में जल आदि ले संकल्प करे अन्त में प्रातः (संध्योपासन-कर्म) करिष्ये', कहकर जलादि छोड़े।

तदनन्तर हाथ में जल लेकर निम्नाङ्कित संकल्प पढ़कर वह जल भूमि पर गिरा दें—

हरिः ॐ तत्सदद्यैतस्य श्रीब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशान्तर्गते पुण्यक्षेत्रे कलियुगे

कलिप्रथमचरणे अमुक संवत्सरे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा अहं ममोपात्त-दुरितक्षयपूर्वकं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं प्रातः [सायं अथवा मध्याह्न] संध्योपासनं करिष्ये।

अघमर्षण मन्त्र का विनियोग

ॐ ऋतं चेत्यघमर्षणसूक्तस्य मधुच्छन्दसोऽघमर्षण ऋषिरनुष्टुप्छन्दो भाववृतो देवता आचमने विनियोगः।

ॐ ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः ॥

ॐ आपो माभिरक्षन्तु इति।

[महाप्रलयके बाद इस महाकल्पके आरम्भ में] सब ओर से प्रकाश मान तपरूप परमात्मा से ऋत (सत्संकल्प) और सत्य (यथार्थ भाषण) की उत्पत्ति हुई। उसी परमात्मा से रात्रि दिन* प्रकट हुए तथा उसी से जलमय समुद्र का आविर्भाव हुआ। जलमय समुद्र की उत्पत्ति के पश्चात् दिनों और रात्रियों को धारण करने वाला कालस्वरूप संवत्सर प्रकट हुआ जो कि पलक मारने वाले जङ्गम प्राणियों और स्थावरों से युक्त समस्त संसार को अपने अधीन रखने वाला है। इसके बाद सबको धारण करने वाले परमेश्वरने सूर्य, चन्द्रमा, दिव् (स्वर्गलोक), पृथिवी, अन्तरिक्ष तथा महर्लोक आदि लोकों की भी पूर्वकल्प के अनुसार सृष्टि की।

ततो वारिणात्मानं वेष्टयित्वा सप्रणवगायत्र्या रक्षां कुर्यात्।

अपनी रक्षा के लिए दाहिने हाथ में जल लेकर बाएं हाथ से ढक तीन बार गायत्री मन्त्र से अभिमन्त्रित कर उस जल को दाहिनी तरफ से अपने चारों ओर छोड़े।

प्राणायाम विनियोग

ॐकारस्य ब्रह्मा ऋषिर्देवी गायत्रीछन्दोऽग्निर्देवता शुक्लो वर्णः सर्वकर्मारम्भे विनियोगः ॥

ॐ सप्तव्याहृतीनां प्रजापतिः ऋषिः गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहती-पंक्ति- त्रिष्टुब्ज- गत्यश्छन्दांस्यग्निवाय्वादित्यवृहस्पति वरुणेन्द्र-विश्वेदेवा देवता अनादिष्टप्रायश्चित्ते प्राणायामे विनियोगः ॥

ॐ गायत्र्या विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवताऽग्निर्मुखमुपनयने प्राणायामे विनियोगः ॥

ॐ शिरसः प्रजापति ऋषिर्यजुश्छन्दो ब्रह्माऽग्निवायुसूर्या देवताः प्राणायामे विनियोगः ।

प्राणायाम-विधिः

इति ऋष्यादिकं स्मृत्वा बद्धासनः सन्निमीलितनयनो मौनी प्राणायमत्रयं कुर्यात् । तत्र वायोरादानकाले पूरकनामा प्राणायामस्तत्र नीलोत्पलदलश्यामं चतुर्भुजं विष्णुं नाभौ ध्यायेत् । धारणकाले कुम्भकस्तत्र कमलासनं रक्तवर्णं चतुर्मुखम्ब्रह्माणं हृदि ध्यायेत् । त्यागकाले रेचकस्तत्र श्वेतवर्णं त्रिनयनं शिवं ललाटे ध्यायेत् । त्रिष्वप्येतेषु प्रत्येकं त्रिर्मन्त्राभ्यासः । प्रत्येकमोंकारादि सव्याहृतयः ॐकारादि सावित्री ॐकारद्वयमध्यस्थं शिरश्चेतिमन्त्रस्तस्य स्वरूपम् ।

इसके पश्चात् आंखे बन्द करके नीचे लिखे मन्त्र से प्राणायाम करे । उसकी विधि इस प्रकार है—'पहले दाहिने हाथ के अंगूठे से नासिका का दायां छिद्र बन्द करके बाएं छिद्र से वायु को अंदर खींचे, साथ ही नाभिदेश में नीलकमलदल के समान श्यामवर्ण चतुर्भुज भगवान् विष्णु का ध्यान करते हुए प्राणायाम-मन्त्र का तीन बार पाठ कर जाए । [यदि तीन बार मन्त्र-पाठ न हो सके तो एक ही बार पाठ करे और अधिक के लिए अभ्यास बढ़ावे ।] इसको पूरक कहते हैं । पूरक के पश्चात् अनामिका और कनिष्ठिका अंङ्गलियों से नासिका के बाएं छिद्र को भी बन्द करके तब तक श्वास को रोके रहे, जब तक कि प्राणायाम-मन्त्र का तीन बार [या शक्ति के अनुसार एक बार] पाठ न हो जाए । इस समय हृदय के बीच कमल के आसन पर विराजमान अरुण-गौर-मिश्रित वर्णवाले चतुर्मुख ब्रह्माजी का ध्यान करे । यह कुम्भक क्रिया है । इसके बाद अंगूठा हटाकर नासिका के दाहिने छिद्र से वायु को धीरे-धीरे तब तक बाहर निकालें, जब तक प्राणायाम-मन्त्र का तीन [या एक] बार पाठ न हो जाए । इस समय शुद्धस्फटिक के समान श्वेत वर्ण वाले त्रिनेत्रधारी भगवान् शंकर का ध्यान करे । यह रेचक-क्रिया है । यह सब मिलकर एक प्राणायाम कहलाता है ।

साधक पद्मासन बद्ध हो करके ऋषियों का स्मरण करता हुआ मौन होकर नेत्रों को मूंद कर तीन प्राणायाम करे।

वध्वासनं नियम्यासून् स्मृत्वा चर्ष्यादिकं ततः। सन्निमीलितदृङ्मौनी प्राणायामान् समभ्यसेत्। आसनं पद्म स्वस्तिकादिकम्।

प्राणायामांश्चरेत् त्रींस्तु यथाकालमतन्द्रितः।
अहोरात्रकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति॥
भूर्भुवः स्वः महर्जनस्तपः सत्यमिति सप्तव्याहृतयः॥

सप्रणवं गायत्र्याऽऽपोज्योतिरसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोमिति शिरोदशप्रणवसंयुक्तः त्रिरभ्यस्तः पूरक-कुम्भक-रेचकाख्यः प्राणायामः॥

१. पूरक-प्राणायाम

नासिका के दाहिने नथुने के छिद्र को अंगूठे से दबाकर बन्द करे बाएं छिद्र से श्वास खींचते हुए नीलकमल के सदृश श्याम वर्ण चतुर्भुज स्वरूप विष्णु का अपनी नाभि में ध्यान करे।

२. कुम्भक प्राणायाम

दाहिने छिद्र को दबाये हुए नासिका के बाएं छिद्र को भी कनिष्ठा और अनामिका से बन्द कर श्वास को रोके और कमल के आसन पर आसीन रक्तवर्ण वाले चतुर्मुख ब्रह्मा जी का अपने हृदय कमल पर ध्यान करे।

३. रेचक प्राणायाम

रेचक प्राणायाम करते समय श्वास घुमाने के समय श्वेतवर्ण त्रिनेत्र शिवजी का अपने ललाट में ध्यान करते हुए नासिका के दाहिने छिद्र को खोलकर धीरे-धीरे श्वास छोड़े।

रक्षान्ते वारिणात्मानं परिक्षिप्तः समन्ततः।
शिरसो मार्जनं कुर्यात्कुशैः सोदक विन्दुभिः॥

प्राणायाम मन्त्र

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। ॐ आपो ज्योति रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्।

हम स्थावर-जङ्गमरूप सम्पूर्ण विश्व को उत्पन्न करने वाले उन निरतिशय प्रकाशमय परमेश्वर के भजने योग्य तेज का ध्यान करते हैं, जो कि हमारी बुद्धियों को सत्कर्मों की ओर प्रेरित करते हैं और जो भूर् भुवर्, स्वर्, महर्, जन, तप और सत्य नाम वाले समस्त लोकों में व्याप्त हैं तथा जो सच्चिदानन्द स्वरूप जल रूप से जगत का पालन करने वाले, अनन्त तेज का धाम, रसमय, अमृतमय और भूर्भुवः स्वःस्वरूप (त्रिभुवनात्मक) ब्रह्म हैं।

उपर्युक्त लिखे मन्त्र को प्रत्येक प्राणायाम में तीन-तीन बार या एक बार एक साथ जपे। अथवा प्रत्येक प्राणायाम से एक-एक बार जप कर इस प्रकार तीन बार करे।

विनियोगः

ॐ सूर्यश्चमेति नारायण ऋषिः प्रकृतिश्छन्दः सूर्यो देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।

आचमनमन्त्र

ॐ सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यद्रात्र्या पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना रात्रिस्तदवलुम्पतु यत्किञ्चिद्दुरितं मयि इदमहमापोऽमृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा॥ इति प्रातराचमेत।

सूर्य, क्रोध के अभिमानी देवता और क्रोध के स्वामी—ये सभी क्रोधवश किये हुए पापों से मेरी रक्षा करें [अर्थात् कृत पापों को नष्ट करके होने वाले पापों से बचावे]। रात में मैंने मन, वाणी, हाथ, पैर उदर तथा शिश्न (उपस्थ) इन्द्रिय से जो पाप किये हों, उन सबको रात्रिकालाभिमानी देवता नष्ट करें। जो कुछ भी पाप मुझ में वर्तमान है, इसे और इसके कर्तृत्व का अभिमान रखने वाले अपने को मैं मोक्ष के कारण-भूत प्रकाशमय सूर्यरूप परमेश्वर में हवन करता हूं [अर्थात् हवन के द्वारा अपने समस्त पाप और अहंकार को भस्म करता हूं]। इसका भली भांति हवन हो जाये।

उपर्युक्त आचमन-मन्त्र प्रातः काल की संध्या का है। मध्याह्न और सायंकाल के केवल आचमन-मन्त्र प्रातः काल से भिन्न हैं।

मार्जनम्

मार्जन विनियोग

ॐ आपो हिष्ठेत्यादि त्र्यर्चस्य सिन्धुद्वीपऋषिर्गायत्री छन्दः आपो देवता मार्जने विनियोगः।

बाएं हाथ में जल लेकर, कुशा अथवा दाहिने हाथ की तीन बड़ी अंगुलियों से नीचे लिखे मन्त्र बोलते हुए १ से ७ मन्त्र तक अपने शरीर पर ८वें मन्त्र से पृथ्वी पर और ९वें मन्त्र से मस्तक पर जल छोड़े।

ॐ आपो हिष्ठामयो भुवः १। ॐ ता न ऊर्जे दधतान २। ॐ महेरणाय चक्षसे३। ॐ यो वः शिवतमो रसः ४। ॐ तस्य भाजयते ह नः ५। ॐ उशतीरिव मातरः ६। ॐ तस्माऽअरंगमामवः ७। ॐ यस्य क्षयाय जिन्वथ ८। ॐ आपो जनयथा च नः ॥९॥

हे जल ! तुम निश्चय ही कल्याणकारी हो, अतः [अन्नादि रसों के द्वारा] बल की वृद्धि के लिये तथा अत्यन्त रमणीय परमात्मदर्शन के लिये तुम हमारा पालन करो। जिस प्रकार पुत्रों की तुष्टि चाहने वाली माताएं उन्हें अपने स्तनों का दुग्ध पान कराती हैं, उसी प्रकार तुम्हारा जो परम कल्याणमय रस है उसके भागी हमें बनाओ। हे जल ! जगत् के जीवनाधार भूत जिस रस के एक अंश से तुम समस्त विश्व को तृप्त करते हो, उस रस की पूर्णता को हम प्राप्त हों [अर्थात् उस रस से हम पूर्णतया तृप्ति लाभ करें।] हें जल ! तुम हमें उस रस के भोक्ता बनाओ [अर्थात् उसे भोगने की क्षमता दो]।

नीलोत्पलदलश्यामं नाभिदेशे प्रतिष्ठितम्।
चतुर्भुजं महात्मानं पूरकेणैव चिन्तयेत्॥
कुम्भकेन हृदि स्थाने ध्यायेच्च कमलासनम्॥
ब्रह्माणं रक्तवर्णाङ्गं चतुर्वक्त्रं पितामहम्॥
रेचकेणेश्वरं ध्यायेल्ललाटस्थं महेश्वरम्॥
शुद्धस्फटिक संकाशं निर्मलं पापनाशनम्॥
सर्वनाडी श्वास-वायुना पूरयति इति पूरः॥
गायन्तं त्रायते यस्माद् गायत्री त्वं ततः स्मृता॥

विनियोगः

ॐ द्रुपदादिवेत्यस्याश्विसरस्वतीन्द्रा ऋषयोऽनुष्टुप्छन्दः आपो देवता शिरस्सेके विनियोगः।

नीचे लिखे मन्त्र से तीन या एक बार मस्तक पर जल छोड़े।

ॐ द्रुपदादिव मुमुचानः स्विन्नः स्नातो मलादिव।
पूतं पवित्रेणेवाज्यमापः शुन्धन्तु मैनसः॥

जैसे पादुका से अलग होता हुआ मनुष्य पादुका के मलादि दोषों से मुक्त हो जाता है, जिस प्रकार पसीने से भीगा हुआ पुरुष स्नान करने के पश्चात् मैल से रहित होता है तथा जैसे पवित्रक आदि से भी शुद्ध हो जाता है, उसी प्रकार जल मुझे पापों से शुद्ध करे [अर्थात् मुझे सर्वदा निष्पाप कर दे]।

अघमर्षण विनियोग

ॐ ऋतञ्चेति सूक्तस्य मधुच्छन्दसोऽघमर्षणं ऋषिरनुष्टुप्छन्दो भाववृतो देवता अश्वमेधावभृथे विनियोगः।

दाहिने हाथ में जल ले, नासिका के समीप करके नीचे लिखा मंत्र तीन बार या एक बार पढ़े और ध्यान करें कि यह जल श्वास के साथ नासिका के बाएं छिद्र से भीतर जाकर अन्तःकरण को शुद्ध करके दाहिने छिद्र से बाहर निकल आया है। उस जल को बिना देखे बाईं ओर फेंक देवे। पश्चात् हाथ धोवे।

ॐ ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः। समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः।

आप उपस्पर्शन मन्त्र

विनियोगः

ॐ अन्तश्चरसीति तिरश्चीन ऋषिरनुष्टुप्छन्दः आपो देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।

यथा ऽश्वमेधः क्रतुराट् सर्वपापापनोदनः।
तथाऽघमर्षणं सूक्तं सर्वपापापनोदनम्॥

आचमनम्

ॐ अन्तश्चरसि भूतेष गुहायां विश्वतोमुखः।
त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कार आपो ज्योती रसोऽमृतम्॥

'हे जलरूप परमात्मन् ! तुम समस्त प्राणियों के भीतर उनकी हृदय रूप गुहा में विचरते हो, तुम्हारा सब ओर मुख है, तुम्हीं यज्ञ हो, तुम्हीं वषट्कार (इन्द्रादि का भाग हविष्य) हो और तुम्हीं जल, प्रकाश, रस एवं अमृत हो।'

अर्घ्यविनियोगः

ॐ कारस्य ब्रह्मा ऋषिर्देवी गायत्री छन्दः—परमात्मा देवता। भूर्भुवः स्वरिति महाव्याहृतीनां परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिः अग्निवायुसूर्याः देवताः गायत्र्युष्णि- गनुष्टुभश्छन्दांसि। तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्र ऋषिः सविता देवता गायत्री छन्दः अर्घ्यदाने विनियोगः।

अर्घ्य-विधिः

जलाक्षत, पुष्पादि ले, खड़ा हो, चित्र के अनुसार पैरों के अग्रभाग बराबर तथा तर्जनी से हाथों के अंगूठों को अलग कर नीचे लिखा मन्त्र प्रत्येक बार बोलता हुआ थोड़ा झुक कर सूर्य की ओर उछालता हुआ तीन अर्घ्य देवे।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्॥

ब्रह्मस्वरूपिणे सूर्यनारायणाय नमः॥ इदमर्घ्यं दत्तं न मम॥

अर्घ्यदान-मन्त्र

ततश्चाचम्य विधिवदालिखेत्पद्ममग्रतः।
अक्षताभिः सपुष्पाभिः सजलाऽरुणचन्दनम्॥
अर्घ्यं दद्यात्प्रयत्नेन सूर्य्यनामानि कीर्तयेत्।
नमस्ते विष्णुरूपाय नमो विष्णुमुखाय वै।
सहस्ररश्मये नित्यं नमस्ते सर्वतेजसे॥
नमस्ते शिव सर्वेश नमस्ते सर्व वत्सल।
जगत्स्वामिन्नमस्तेऽस्तु दिव्य चन्दन भूषित॥
पद्मासन नमस्तेऽस्तु कुण्डलाङ्गुद्भूषित॥
नमस्ते सर्वलोकेश ! जगत्सर्वं विवोध मे॥

प्रातः सूर्योदय से तथा सायं सूर्यास्त से ३ घड़ी बाद सन्ध्या करे तो प्रायश्चित्त के निमित्त नीचे मन्त्र से एक अर्घ्य और दे।

ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतम् मर्त्यञ्च।
हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥

प्रदक्षिणा-मन्त्र

सुकृतं दुष्कृतं चैव सर्वं पश्यसि सर्वग।
सत्यदेव नमस्तेऽस्तु प्रसीद मम भास्कर॥
दिवाकर नमस्तेऽस्तु प्रभाकर नमोऽस्तुते।
एवं सूर्यं नमस्कृत्य त्रिकृत्वाऽथ प्रदक्षिणम्॥

उपस्थान

प्रातः काल में दाहिना पैर या एड़ी उठाकर के दोनों हाथों को सीधा रखे हुए मध्याह्न में दोनों हाथों को ऊपर की ओर करके और सायंकाल में बैठकर हाथ बंद कमल के समान जोड़कर उपस्थान करें। उपर्युक्त विधि से प्रत्येक विनियोग के साथ एक-एक मन्त्र बोलकर भी उपस्थान कर सकते हैं।

सूर्योपस्थान मन्त्र

ॐ उद्वयमित्यस्य हिरण्यस्तूप ऋषिरनुष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता, ॐ उदुत्यमिति प्रस्कण्व ऋषिर्गायत्री छन्दः सूर्यो देवता, ॐ चित्रमित्यस्य कौत्स ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता, ॐ तच्चक्षुरिति दध्यङ्गाथर्वण ऋषि रक्षरातीतपुर उष्णिक्छन्दः सूर्योपस्थाने विनियोगः॥

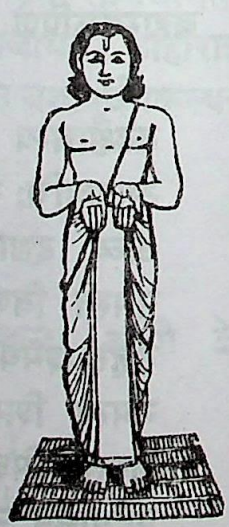

ॐ उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्। देवन्देवत्रा सूर्य मगन्मज्योतिरुत्तमम् ॥१॥ ॐ उदुत्यञ्जातवेदसन्देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥२॥ ॐ चित्रन्देवानामुद्गाद नीकञ्चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्राद्यावापृथिवी अन्तरिक्षꣳ सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥२॥ ॐ तच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत पश्येम शरदः

शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥४॥

हम अन्धकार से ऊपर उठकर उत्तम स्वर्गलोकको तथा देवताओं में उत्यन्त उत्कृष्ट सूर्य देव को भली भांति देखते हुए उस सर्वोत्तम ज्योतिर्मय परमात्मा को प्राप्त हों।

उत्पन्न हुए समस्त प्राणियों के ज्ञाता उन सूर्यदेव को छन्दोमय अश्व सम्पूर्ण जगत् को उनका दर्शन कराने [या दृष्टि प्रदान करने] के लिये ऊपर-ही-ऊपर शीघ्रगति से लिये जा रहे हैं।

जो तेजोमयी किरणों के पुञ्ज हैं, मित्र, वरुण तथा अग्नि आदि देवताओं एवं समस्त विश्व के नेत्र हैं और स्थावर तथा जङ्गम—सबके अन्तर्यामी आत्मा हैं, वे भगवान् सूर्य आकाश, पृथ्वी और अन्तरिक्षलोकको अपने प्रकाश से पूर्ण करते हुए आश्चर्य रूप से उदित हुए हैं।

देवता आदि सम्पूर्ण जगत् का हित करने वाले और सबके नेत्ररूप वे तेजोमय भगवान् सूर्य पूर्व दिशा से उदित हो रहे हैं। [उनके प्रसाद से] हम सौ वर्षों तक देखते रहें, सौ वर्षों तक जीते रहें, सौ वर्षों तक सुनते रहें, सौ वर्षों तक हममें बोलने की शक्ति रहे तथा सौ वर्षों तक हम कभी दीन-दशा को न प्राप्त हों। इतना ही नहीं, सौ वर्षों से अधिक काल तक भी हम देखें, जीएं, सुनें बोलें एवं कभी दीन न हों।

गायत्री षडंगन्यास विधिः

बैठकर नीचे लिखे मन्त्र बोलते हुए चित्र के अनुसार १-६ अनुसार दाहिने हाथ से अंगों का स्पर्श करें।

१. ॐ हृदयाय नमः (हृदय पर हथेली रखें) **२. ॐ भूः शिरसे स्वाहा** (मस्तक पर चारों अंगुलियों का अग्र भाग)। **३. ॐ भुवः शिखायै वषट्** (शिखा में अंगूठा स्पर्श) **४. ॐ स्वः कवचाय हुम्** (हाथों

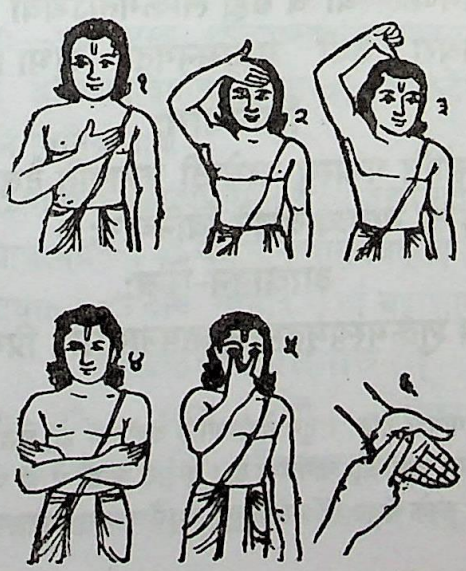

को कुछ ऊंचा कर दाहिनी कनिष्ठा के मूल से दाईं तथा बाईं कनिष्ठा के मूल से दाहिनी भुजा का स्पर्श करे)। ५. **ॐ भूर्भुवः स्वः नेत्राभ्यां वौषट्** (मध्यमा दाहिनी भुजा का स्पर्श करे)। ६. **ॐ भूर्भुवः स्वः अस्त्राय फट्** (बाएं हाथ की हथेली पर मध्यमा तथा तर्जनी से ताली बजावे)। इस प्रकार तीन बार करें पश्चात् अपने चारों ओर चुटकी बजाकर हाथ घुमावें।

नीचे लिखे मन्त्र पढ़ कर अंगों का स्पर्श करे।

ॐ तत्पदं मे पादौ जंघे मे सवितुः पदम्।
वरेण्यं कटि-देशन्तु नाभिं भर्गस्तथैव च॥
देवस्य मे तु हृदयं धीमहीति गलं तथा।
धियो मे पातु जिह्वायां यत्पदं पातु लोचने॥
ललाटे नः पदं पातु मूर्द्धानं मे प्रचोदयात्।

गायत्री विनियोगः

ॐ कारस्य ब्रह्माऋषिर्गायत्री छन्दोऽग्निर्देवता, ॐ त्रिव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषि र्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांस्यग्निवाय्वादित्या देवता, ॐ गायत्र्या विश्वामित्रऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता जपे विनियोगः॥

सूर्यमंडल में गायत्रीध्यान

ॐ श्वेतवर्णं समुद्दिष्टा कौशेयवसना तथा।
श्वेतैर्विलेपनैः पुष्पैरलङ्कारैश्च भूषिता॥
आदित्यमण्डलस्था च ब्रह्म लोकगताऽथवा।
अक्षसूत्रधरा देवी पद्मासनगता शुभा॥

विनियोगः

ॐ तेजोऽसीति मन्त्रस्य परमेष्ठी प्रजापति देवा ऋषयः सविता देवता गायत्री छन्दो गायत्र्यावाहने विनियोगः॥

आवाहन-मन्त्रः

ॐ तेजोसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामसि। प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि।

हे सूर्यस्वरूपा गायत्री देवि ! तुम देदीप्यमान तेजोमयी हो, शुद्ध हो और अमृत (नित्य ब्रह्मरूपा) हो। तुम्हीं परम धाम और नामरूपा हो। तुम्हारा किसी से भी पराभव नहीं होता। तुम देवताओं की प्रिय और उनके यजन की साधनभूता हो [मैं तुम्हारा आवाहन करता हूं]।

विनियोगः

गायत्र्यसीति विवस्वान् ऋषिः स्वराण्महापंक्तिश्छन्दः परमात्मा देवता गायत्र्युपस्थाने विनियोगः ।

उपस्थान-मन्त्रः

ॐ गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी चतुष्पद्यपदसि न हि पद्यसे नमस्ते तुरीयाय दर्शताय पदाय परो रजसेऽसावदो मा प्रापत् ॥

हे गायत्री ! तुम त्रिभुवनरूप प्रथम चरण से एकपदी हो, ऋक्, यजुः एवं सामरूप द्वितीय चरण से द्विपदी हो। प्राण, अपान तथा व्यानरूप तृतीय चरण से त्रिपदी हो और तुरीय ब्रह्मरूप चतुर्थ चरण से चतुष्पदी हो। निर्गुण स्वरूप से अचिन्त्य होने के कारण तुम 'अपद' हो [इसलिए वेद नेती-नेति' कहकर तुम्हारे स्वरूप का वर्णन करते हैं]। अतएव मन-बुद्धि के अगोचर होने से तुम सबके लिये प्राप्य नहीं हो। तुम्हारे दर्शनीय (अनुभव करने योग्य) चतुर्थ पदको, जो प्रपञ्च से परे वर्तमान शुद्ध परब्रह्मरूप है, नमस्कार है। तुम्हारी प्राप्ति में विघ्न डालने वाले वे राग-द्वेष, काम-क्रोध आदिरूप पाप मेरे पास न पहुंच सकें। [अर्थात् परब्रह्मस्वरूपिणी तुम्हें मैं निर्विघ्न प्राप्त करूं]।*

गायत्री-शाप विमोचनम्

ब्रह्मा, वसिष्ठ और विश्वामित्र के द्वारा गायत्री मन्त्र को शाप मिला है, अतः मन्त्र शाप-निवृत्ति के लिए शाप विमोचन अवश्य करें।

ब्रह्मशापविमोचनम्

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीब्रह्मशापविमोचनमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः भुक्तिमुक्तिप्रदा ब्रह्मशापविमोचनी गायत्री शक्तिर्देवता गायत्री छन्दः ब्रह्मशापविमोचने विनियोगः ॥

मन्त्रः—ॐ गायत्री ब्रह्मेत्युपासीत यद्रूपं ब्रह्मविदो विदुः। तां पश्यन्ति धीराः सुमनसा वाचामग्रतः। ॐ वेदान्तनाथाय विद्महे हिरण्यगर्भाय धीमहि तन्नो ब्रह्मा प्रचोदयात्। ॐ देवि गायत्रि ! त्वं ब्रह्मशापाद्विमुक्ता भव।

वसिष्ठ-शापविमोचनम्

विनियोगः—ॐ अस्य श्री वसिष्ठशापविमोचनमन्त्रस्य निग्रहानुग्रहकर्ता वसिष्ठ ऋषिः वसिष्ठानुगृहीता गायत्री शक्तिर्देवता विश्वोद्भवा गायत्री छन्दः वसिष्ठशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः ॥

मन्त्र—ॐ सोऽहमर्कमयं ज्योतिरात्मज्योतिरहं शिवः। आत्मज्योतिरहं शुक्रः सर्वज्योतीरसोऽस्म्यहम्।

योनिमुद्रा दिखाकर तीन बार गायत्री जपें।

ॐ देवि गायत्रि ! त्वं वशिष्ठशापाद्विमुक्ता भव।

विश्वामित्र-शापविमोचन

विनियोगः—ॐ अस्य श्री विश्वामित्र शापविमोचनमन्त्रस्य नूतनसृष्टिकर्ता विश्वामित्र ऋषिः विश्वामित्रानुगृहीता गायत्री शक्तिर्देवता वाग्देहा गायत्री छन्दः विश्वामित्रशाप विमोचनार्थे जपे विनियोगः॥

मन्त्र—ॐ गायत्रीं भजाम्यग्निमुखीं विश्वगर्भा यदुद्भवा। देवाश्चक्रिरे विश्वसृष्टिं तां कल्याणीमिष्टकरीं प्रपद्ये। यन्मुखान्निःसृतोऽखिलवेदगर्भः॥ शापयुक्ता तु गायत्री सफला न कदाचन। शापादुत्तारिता सा तु भुक्तिमुक्तिफलप्रदा। ॐ देवि ! गायत्रि ! त्वं विश्वामित्रशापाद्विमुक्ता भव॥

गायत्री शाप प्रार्थना—ॐ अहो देवि !महादेवि ! सन्ध्ये ! विद्ये ! सरस्वति। अजरे ! अमरे ! चैव ब्रह्मयोनिर्नमोऽस्तु ते॥ ॐ गायत्रि ! त्वं विश्वामित्रशापाद्विमुक्ता भव।

सूर्यमंडल से गायत्री का आवाहन

प्रातः काले ब्रह्मरूपा गायत्री-ध्यानम्।

ॐ बाला विद्यान्तु गायत्रीं लोहितां चतुराननाम्। रक्ताम्बर-द्वयोपेतामक्षसूत्रकरां तथा॥ कमण्ड-लुधरां देवीं हंसवाहनसंस्थिताम्। ब्रह्माणीं ब्रह्मदैवत्यां ब्रह्मलोक-निवासिनीम्।

मन्त्रेणावाहयेद्देवीमायान्तीं सूर्यमण्डलात्।

प्रातःकाले ब्रह्मरूपा

ब्रह्मलोक में रहने वाली ब्रह्माणी, बालारूप गायत्री, हंस पर बैठी हुई रक्ताम्बर धारिणी, चतुराननी,

चतुर्भुजी, लाल वस्त्र धारण किये हुए हाथों में रुद्राक्ष की माला, दण्ड, कमंडलु तथा ऋग्वेद की पोथी लिए सूर्य मण्डल से आती हुई ऐसी देवी का ध्यान करे।

गायत्री-हृदय

ॐ अस्य श्रीगायत्रीहृदयस्य नारायण ऋषिर्गायत्रीच्छन्दः परमेश्वरी गायत्री देवता गायत्रीहृदयजपे विनियोगः ॥

अथाङ्गन्यासः ॥ द्यौर्मूर्ध्नि दैवतम्। दन्तपङ्क्तावश्विनौ। उभे सन्ध्ये चोष्ठौ। मुखमग्निः। जिह्वा सरस्वती। ग्रीवायां तु वृहस्पतिः। स्तनयोर्वसवोऽष्टौ। वाह्वोर्मरुतः। हृदये पर्जन्यः। आकाशमुदरम्। नाभावन्तरिक्षम्। कट्योरिन्द्राग्नी। जघने विज्ञानघनः प्रजापतिः। कैलाशमलये उरः। विश्वेदेवा जान्वोः। जंघायां कौशिकः। गुह्यमयने। ऊरू पितरः। पादौ पृथ्वी। वनस्पतयोऽङ्गुलीषु। ऋषयो रोमाणि नखानि मुहूर्तानि। अस्थिषु ग्रहाः। असृङ्मांसम् ऋतवः। संवत्सराः वै निमिषम्। अहोरात्रावादित्यश्चन्द्रमाः। प्रवरां दिव्यां गायत्रीं सहस्रनेत्रां शरणमहं प्रपद्ये। ॐ तत्सवितुर्वरेण्याय नमः। ॐ तत्पूर्वा जयाय नमः। तत्प्रातरादित्याय नमः। तत्प्रातरादित्यप्रतिष्ठायै नमः। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। सायं प्रातरधीयानोऽपापो भवति। सर्वतीर्थेषु स्नातो भवति। सर्वैर्देवैर्त्रातो भवति। अवाच्यवचनात्पूतो भवति। अभक्ष्य-भक्षणात् पूतो भवति। अभोज्यभोजनात्पूतो भवति। अचोष्यचोषणात्पूतो भवति। असाध्यासाधानात्पूतो भवति। दुष्प्रतिग्रहशतसहस्रात्पूतो भवति। सर्वप्रतिग्रहात्पूतो भवति। पंक्ति-दूषणात्पूतो भवति। अनृतवचनात्पूतो भवति। अथाऽब्रह्मचारी ब्रह्मचारी भवति। अनेन हृदयेनाधीतेन क्रतुसहस्रेणेष्टं भवति। अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग्ग्राहयेत्। तस्य सिद्धिर्भवति। य इदं नित्यमधीयानो ब्राह्मणःप्रातः शुचिः सर्वपापैः प्रमुच्यते इति। ब्रह्मलोके महीयते। इत्याह भगवान् श्रीनारायणः ॥ (देवी भागवत)

इसके अनन्तर नीचे लिखे विनियोग-वाक्य को पढ़े—

ॐ कारस्य ब्रह्मा ऋषिर्दैवी गायत्री छन्दः परमात्मा देवता, तिसृणां

महाव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्या देवताः तत्सवितुरिति विश्वामित्रऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता जपे विनियोगः।

फिर नीचे लिखे अनुसार गायत्री-मन्त्र का कम-से-कम १०८ बार माला आदि से गिनते हुए जप करे। अधिक जहां तक हो अच्छा है। जप के समय गायत्री के तेजोमयस्वरूप का ध्यान और मन्त्र के अर्थ का अनुसंधान होता रहे तो बहुत ही उत्तम है। गायत्री-मन्त्र इस प्रकार है—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ। (य० अ० ३६ मं. ३)

इस स्थावर-जङ्गमरूप सम्पूर्ण विश्व को उत्पन्न करने वाले उन निरतिशय प्रकाशमय परमेश्वर के भजने योग्य तेज का ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धियों को सत्कर्मों की ओर प्रेरित करते हैं तथा जो भूर्लोक, भुवर्लोक और स्वर्लोकरूप सच्चिदानन्दमय परब्रह्म हैं।

तदनन्तर नीचे लिखे विनियोग-वाक्य का पाठ करे—

विश्वतश्चक्षुरिति भौवन ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दो विश्वकर्मा देवता सूर्यप्रदक्षिणायां विनियोगः।

फिर नीचे लिखे मन्त्र से अपने स्थान पर खड़े होकर सूर्य देव की एक बार प्रदक्षिणा करे—

ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन् देव एकः॥ (यजु० अ० १७ मं. १९)

वे एकमात्र परमात्मा पृथ्वी और आकाश की रचना करते समय धर्माधर्मरूप भुजाओं और पतनशील पञ्च महाभूतों से संगत होते अर्थात् काम लेते हैं। तात्पर्य यह है कि धर्माधर्मरूप निमित्त और पञ्चभूतरूप उपादान कारणों से अन्य साधन की सहायता लिये बिना ही सबकी सृष्टि करते हैं। उनके सब ओर नेत्र हैं, सब ओर मुख हैं, सब ओर भुजाएं हैं और सब ओर चरण हैं [अर्थात् सर्वत्र उनकी सभी इन्द्रियां हैं, अथवा सब प्राणी परमेश्वर के स्वरूप हैं, अतः उनके जो नेत्र आदि हैं, वे उनमें व्याप्त परमात्मा के ही नेत्र आदि हैं]।

इसके पश्चात् बैठकर निम्नाङ्कित विनियोग का पाठ करे—

ॐ देवा गातुविद इति मनसस्पतिर्ऋषिर्विराडनुष्टुप्छन्दो वातो देवता जपनिवेदने विनियोगः। फिर—

ॐ देवागातु विदो गातुवित्त्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देव यज्ञꣳ स्वाहा वातेधा स्वाहा।

'हे यज्ञवेत्ता देवताओ ! आपलोग हमारे इस जप रूपी यज्ञको पूर्ण हुआ जानकर अपने गन्तव्य मार्गको पधारें। हे चित्तके प्रवर्तक परमेश्वर ! मैं इस जप-यज्ञको आपके हाथ में अर्पण करता हूं। आप इसे वायुदेवता में स्थापित करें।

इस मन्त्र को पढ़कर नमस्कार करने के अनन्तर—

अनेन यथाशक्तिकृतेन गायत्रीजपाख्येन कर्मणा भगवान् सूर्यनारायणः प्रीयतां, न मम।

संध्या प्रदक्षिणा-मंत्र

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि तानि प्रणश्यन्तु प्रदक्षिणा—पदे पदे॥

संध्या क्षमा-प्रार्थना

यदक्षरं-पदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देवि ! प्रसीद परमेश्वरि॥

विनियोगः

ॐ उत्तमे शिखरे इत्यस्य वामदेव ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः गायत्री देवता गायत्रीविसर्जने विनियोगः॥

विसर्जन

ॐ उत्तरे शिखरे देवि ! भूम्यां पर्वतमूर्धनि।
ब्राह्मणेभ्योऽभ्यनुज्ञाता गच्छ देवि ! यथासुखम्॥
अनेन सन्ध्योपासनकर्मणा श्री परमेश्वरः प्रीयताम्।
ॐ तत्सद् ब्रह्मार्पणमस्तु॥

सन्ध्या समाप्त हो जाये तब पात्रों में बचा हुआ जल अपवित्र हो जाता है। इसलिये उस जल को फेंक देना चाहिये। जप समाप्त होने के बाद आसन के नीचे जल छोड़कर मृत्तिका मस्तक में लगा ले।

पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठन्नैशमेनो व्यपोहति।
पश्चिमां तु समासीनो मलं हन्ति दिवाकृतम्॥

इति प्रातः सन्ध्या प्रकरणम्।

गायत्री जप के पूर्व की चौबीस मुद्राओं के नाम

सुमुखं सम्पुटं चैव विततं विस्तृतं तथा।
द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुष्पंचमुखं तथा॥

षण्मुखाऽधोमुखं चैव व्यापकाञ्जलिकं तथा ॥
शकटं यमपाशं च ग्रन्थितं चोन्मुखोन्मुखं ॥
प्रलम्बं मुष्टिकं चैव मत्स्यः कूर्मो वराहकम् ।
सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं मुद्गरं पल्लवं तथा ।
एताः मुद्राश्चतुर्विंशज्जपादौ परिकीर्तिताः ॥

जप मुद्राओं का महत्त्व

आप सौ वर्ष तक नीरोग रहने की कामना करते हैं ? आप चाहते हैं, जब तक जीएं—प्रसन्नता से जीएं और हमेशा हृष्ट-पुष्ट और नीरोग रहें ? आप चाहते हैं, रोग आपके पास फटकने न पाए ? तो अत्यन्त प्रभाव शाली, शारीरिक, आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक क्रिया की इस पद्धति को अपनाने से आप निश्चय ही समस्त इच्छाओं की सिद्धि प्राप्त कर लेंगे।

इस क्रिया को **न्यास** और **मुद्रा न्यास** कहते हैं। जिसका जो स्थान नहीं है, यदि वह वहां बलपूर्वक बैठ जाए, तो उसको उस स्थान से हटा कर वहां के प्रकृत मालिक को बैठा देने का नाम है **न्यास क्रिया**। इसका शाब्दिक अर्थ है—स्थापना करना।

कहा गया है कि जब तक हम अपने तन-मन से, 'यह मेरा है', 'मैं कर रहा हूं', 'मैं भोग रहा हूं',—इन उपभावों एवं उपसर्गों को दूर कर सच्चे मन से और केन्द्रित भाव से अपने उपास्य देव को समर्पित नहीं कर देते, तब तक उपासना सफल नहीं हो पाती।

अंगन्यास क्रिया के मन्त्रों के भीतर, शरीर के विभिन्न तत्त्वों में, विभिन्न देवताओं का चिंतन करने की व्यवस्था है। इसका परम उद्देश्य—इस तथ्य को प्रतिष्ठित करना है कि समस्त तत्त्व परमेश्वर के हैं।

न्यास क्रियाओं से यह भाव रोम-रोम में बिखर जाता है—

त्वं सर्वभूतेषु विराजसे सदा सर्वेषु जीवेष्वसि जीवनं स्वयम् । त्वद्दर्शनं सर्वज्ञ मेऽस्तु सर्वतस्तवैव पूजास्तु च कर्मभिर्मम ॥

अर्थात्, तुम सब भूतों में सदा विराजमान हो, सब जीवों में तुम जीवन रूप धारण किए हुए हो। तुम्हीं हमारे प्राण के प्राण हो, तुम्हीं को लेकर तो हम जीवित हैं, हे सर्वव्यापी, सर्वतः त्वद्दर्शन में—सब भूतों में तुम्हारा दर्शन मुझे प्राप्त हो और मेरे सब कर्मों द्वारा तुम्हारी ही पूजा हो।"

कहते हैं जब तक उपर्युक्त भाव से उपासना-साधना नहीं होती, वह कभी सफल नहीं रहती। वह अभंग नहीं रहती। बीच-बीच में उसके तार टूट जाते हैं और मन ध्यान से टूट कर बिखर जाता है।

स्पष्ट है कि उपासना पद्धति में सर्वप्रथम समर्पण किया जाता है। यह समर्पण जीवात्मा का परमात्मा के प्रति होता है। इसमें जीवात्मा की समस्त शक्तियों, कुल सामर्थ्य और सम्पूर्ण भावभूमि का समर्पण करना पड़ता है। इस आत्मसमर्पण, शरणागति, प्रपत्ति, प्रस्पंदन, तप तथा आत्म-यज्ञ करने की विधि और क्रिया को **न्यास** कहते हैं। न्यास के विशेष ज्ञान को न्यास-विज्ञान कहते हैं।

न्यास-विज्ञान और विवेक का सम्बन्ध

इस **न्यास-विज्ञान** से **विवेक ज्ञान** उत्पन्न होता है। इस **विवेक ज्ञान** से पांच स्थूल भूत (पंच महाभूत)—पृथ्वी, जल, आकाश, अग्नि और वायु, पांच सूक्ष्म महाभूत (पंच तन्मात्र)—गन्ध, रस, शब्द, रूप और स्पर्श, पांच ज्ञानेन्द्रिय—नाक, जीभ, कान, नेत्र और त्वचा, पांच कर्मेन्द्रिय—हाथ, पैर, लिंग, गुदा और वागेन्द्रिय एवं मन, बुद्धि और अहंकार इन तत्त्वों से युक्त प्रकृति के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान हो जाता है। इस ज्ञान से ही संज्ञान होता है, कि आत्मा सर्वथा भिन्न और असंग है। आत्मा का इनके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। इस आत्मबोध से चित्त के अन्तराल में ज्वार-भाटे की तरह उमड़ते राग-द्वेषादि मल स्वच्छ हो जाते हैं और अनन्त शान्ति मिलती है। श्वास-प्रश्वास में विघ्न नहीं पड़ता, मन में किसी तरह का क्षोभ नहीं रहता। आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक दुःखों का भास नहीं होता। चित्त में एक अलौकिक एवं दिव्य ज्योति का स्फुरण होता है, प्राणवायु स्फूर्त होती है, शरीस्थ नाड़ी संस्थान में चेतना-प्रवाह की तरंगें लहरा उठती हैं, शरीरस्थ समस्त चक्र जागृत होने से कुंडलिनी जाग पड़ती है और बिना कष्टप्रद हठयोग, साधना और तप के चित्त का आवरण और मल सर्वथा नष्ट हो जाता है। इस समय चित्त का आवरण और मल सर्वथा नष्ट हो जाता है। इस समय चित्त विवेकज्ञान में निमग्न होकर, निर्विकार होकर, कूटस्थ और असंग होकर कैवल्य के अभिमुख रहता है।

इस विश्लेषण से स्पष्ट है कि देवपूजा और उपासना तब तक सफल नहीं हो सकती जब तब कि स्थूल शरीर पवित्र, मलरहित और शुद्ध न हो जाए, ऐसा न होने पर साधक प्रमाद और तन्द्रा से अभिभूत हो सकता है। इसलिए शरीर की शुद्धि के लिए शरीर के प्रत्येक अवयव में जो अलौकिक शक्ति है, उसको जगाया जाता है। यह क्रिया मन्त्रोच्चारण के साथ-साथ शरीर के अंगों को स्पर्श करने से सम्पन्न होती है।

विभिन्न शारीरिक अंगों का महत्त्व

परमहंस योगानन्द का कहना है कि हाथ का अंगूठा पृथ्वी का, पहली अंगुली जल का, बीच की अंगुली पांच तत्त्वों का, तीसरी अंगुली वायु का और सबसे छोटी अंगुली प्रकाश का प्रतिनिधित्व करती है। इसी तरह शरीर के विभिन्न अंगों में भी पंच भूतात्मक शक्तियों का संपुट है, अतः विशिष्ट मन्त्रों के साथ अथवा केन्द्रित भाव से एक हाथ की अंगुलियों को दूसरे हाथ की वैसी ही समकक्ष अंगुलियों से मिला कर या दोनों हाथों की अंगुलियों को मोड़ कर परस्पर अलग-अलग मेल के साथ गूंथ कर विभिन्न मुद्राएं बांध कर ध्यान किया जाता है, तो उन तत्त्वों से सम्बन्धित शक्ति जागृत होती है तथा शरीर के द्वारा, शरीर के लिए तथा शरीर के भीतर शक्ति, स्फूर्ति और जीवन शक्ति उत्पन्न होती है।

शरीर में ऊर्जा का प्रवाह

आज की वैज्ञानिक भाषा में यह कहा जा सकता है कि हाथों से अंगों के विशिष्ट क्षेत्रों को स्पर्श करने से और हाथों की विभिन्न मुद्राओं की क्रिया करने से शरीर का स्नायुतन्त्र अधिक सजग और सक्रिय हो उठता है, जिससे शरीर में इलेक्ट्रोमैग्नेटिक पावर का संचार होता है, शरीर में विद्युतमयी लहरों का आवेग कंपकंपा जाता है और शरीर के अंगों में ऊष्मा का ज्वार उठता है।

इस अवस्था में शरीर का तापक्रम सामान्य नहीं रहता, इसी ताप से शरीर के विभिन्न अवयवों में उपस्थित मल और विष रोधक बाधाओं का शमन हो जाता है। प्राणवायु का संचार होने से रक्त की शुद्धि होती है और शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है।

इसी तरह कहा जाता है कि दोनों हाथों के बीच की अंगुलियों को, जो पांच तत्त्वों का प्रतिनिधित्व करती हैं, नाभि पर सुबह उठने के, भोजन के पश्चात् और रात को भोजन करने के पश्चात् और सोने के पूर्व, बार-बार रगड़ें तो पाचन क्रिया कभी खराब नहीं होती और रस-निर्माण की प्रक्रिया नियन्त्रित और सन्तुलित रहती है जिससे शरीर नीरोग बना रहता है।

न्यास के प्रकार

आध्यात्मिक पंडितों ने **अन्तर्न्यास** और **बहिर्न्यास-न्यास** के दो मुख्य प्रकार बताये हैं, अन्तर्न्यास वह है जो मन से होता है और जिसमें देवता, मन्त्र, वर्ण तथा तत्त्व आदि की स्थिति की भावना की जाती है। बहिर्न्यास मन से तथा किसी पुष्प अथवा अंगुलियों से शरीर के कुछ विशिष्ट स्थानों को स्पर्श करने से होता है। एक तो अंगूठा और अनामिका को मिलाकर सब अंगों को स्पर्श किया जाता है या फिर विभिन्न अंगुलियों द्वारा न्यास किया जाता है। इसमें सर्वप्रथम गुरु का ध्यान कर अंगूठा और अनामिका को मिलाकर मन्त्रों का उच्चारण करते हुए **सिर, मुख, हृदय, गुप्त-स्थान, पैर** और **सर्वांग** में न्यास करें।

ऐसा भी बताया गया है कि अंगूठे को छोड़ कर हृदय और मस्तक में न्यास करना चाहिये, अंगूठे को अन्दर करके मुट्ठी बांध कर शिखा का स्पर्श करना चाहिये, सब अंगुलियों का बाहों पर रखने से कवच बनता है। दोनों हाथों को ऊपर उठा कर अंगूठे और तर्जनी द्वारा मस्तक के चारों ओर करतल ध्वनि करनी चाहिये।

यह मुद्रा-योग दोनों हाथों से बारी-बारी से किया जाता है और कर न्यास दोनों हाथों से साथ-साथ भी किया जा सकता है।

इन न्यास को मातृका न्यास भी कहते हैं। इस न्यास में सभी स्वरों और व्यंजनों के उच्चारण से शब्द ध्वनियों से शरीर के आसपास एक विशिष्ट आभा मंडल निर्मित हो जाता है। इसे न्यास या मुद्रा कवच कहते हैं। यह कवच पहन लेने से शरीर रूपी यज्ञ की आहुतियां समर्पित करने में किसी तरह की बाधा नहीं पड़ती, इससे शरीर और अन्तःकरण दिव्य बनता है।

इसी प्रकार शरीर के सभी छः चक्रों का न्यास किया जाता है। जिस चक्र में जितने दल होते हैं, उतने ही अक्षरों का न्यास किया जाता है।

उसके पश्चात् सहस्र चक्र पर त्रिकोण का ध्यान करें। ऐसा त्रिकोण जिसके प्रत्येक कोण पर ह ल क्ष ये तीन वर्ण स्थित हैं और उसकी तीनों रेखाएं अ, क और य से प्रारम्भ हुई हैं।

न्यास क्रिया एवं मुद्राएं

इन उपरोक्त न्यास क्रियाओं का अभ्यास हो जाने के बाद मुद्रायोग का एक विशिष्ट योग प्रारम्भ होता है। हमारी उपासना के ग्रन्थों में उल्लेख किया गया है कि इन मुद्राओं को सम्पन्न करने

से केवल चित्त ही निर्मल नहीं होता, बल्कि समस्त अर्थ और काम की पूर्ति होती है और सभी प्रकार के रोगों का शमन होता है। यदि तरुणावस्था से ही मुद्रायोग किया जाए तो रोग की अवरोधक क्षमता इतनी दृढ़तर हो जाती है कि रोग होते ही नहीं हैं। शरीर जीवन पर्यन्त नीरोग रहता है और दीर्घायु का वरदान मिल जाता है।

मुद्रा-योग—योगियों ने प्रमुख २४ मुद्राओं का विवरण प्रस्तुत किया है जो इस प्रकार है—

सुमुखम्—दोनों हाथों की अंगुलियों को मोड़ कर परस्पर मिलाया जाता है।

सम्पुटम्—दोनों हाथों को फुलाकर मिलाया जाता है।

वितततम्—दोनों हाथों की हथेलियां परस्पर सामने की जाती हैं।

विस्तृतम्—दोनों हाथों की अंगुलियां खोलकर हाथों को कुछ अलग किया जाता हैं।

द्विमुखम्—दोनों हाथों की कनिष्ठा को और अनामिका से अनामिका को मिलाया जाता है।

त्रिमुखम्—दोनों मध्यमाओं को भी और मिलाया जाता है।

चतुर्मुखम्—दोनों तर्जनियों को और मिलाय जाता है।

पंचमुखम्—दोनों अंगूठे और मिलाये जाते हैं।

षण्मुखम्—हाथ वैसे ही रहते हैं पर कनिष्ठिकाएं खुलती हैं।

अधोमुखम्—उल्टे हाथों की अंगुलियों को मोड़कर तथा मिलाकर नीचे की ओर किया जाता है।

व्यापकांजलिकम्—वैसे ही मिले हुए हाथों को शरीर की तरफ से घुमा कर सीधा किया जाता है।

शकटम्—दोनों हाथों को उल्टा कर अंगूठे से अंगूठा मिला कर तर्जनियों को सीधा रखते हुए मुट्ठी बांधी जाती है।

यमपाशम्—तर्जनी से तर्जनी बांध कर दोनों मुट्ठियों को बांधा जाता है।

ग्रन्थितम्—दोनों हाथों की अंगुलियों को परस्पर गूंथा जाता है।

सम्मुखोन्मुखम्—हाथों की पांचों उंगलियों को मिला कर प्रथम बाएं पर दाहिना, फिर दाहिने पर बायां हाथ रखा जाता है।

प्रलम्ब—अंगुलियों को कुछ मोड़ कर दोनों हाथों को उल्टा कर नीचे की ओर किया जाता है।

मुष्टिक—दोनों अंगूठे ऊपर रखते हुए दोनों मुट्ठियों को बांध कर रखा जाता है।

मत्स्य—दाहिने हाथ की पीठ पर बायां हाथ उल्टा रख कर दोनों अंगूठे अलग रखे जाते हैं।

कूर्म—सीधे बाएं हाथ की मध्यमा, अनामिका तथा कनिष्ठा को मोड़ कर उल्टे दाहिने हाथ की मध्यमा, अनामिका को उन तीनों अंगुलियों के नीचे देकर बाईं तर्जनी पर दाहिनी कनिष्ठा और बाएं अंगूठे पर दाहिनी तर्जनी रखी जाती है।

वराहक—दाहिनी तर्जनी को बाएं अंगूठे से मिला कर दोनों हाथों की अंगुलियों को परस्पर बांधा जाता है।

सिंहाक्रान्तम्—दोनों हाथों को कानों के समीप लाया जाता है।

महाक्रान्तम्—दोनों हाथों की अंगुलियों को कानों के समीप किया जाता है।

मुद्गर—मुट्ठी बांध कर दाहिनी कोहनी बाईं हथेली पर रखी जाती है।

पल्लव—दाहिने हाथ की अंगुलियों को मुख के समीप हिलाया जाता है।

न्यास क्रियाओं व मुद्राओं से लाभ

इन मुद्राओं की योग क्रियाओं से स्थूल शरीर के समस्त चौबीस तत्त्व जागृत होकर शरीर रूपी यज्ञ की आहुतियों के रूप में प्रदीप्त हो उठते हैं, शरीर और अंतःकरण शुद्ध ही नहीं, परमशुद्ध हो उठता है। वात, पित्त और कफ तीनों दोषों का शमन होता है। रस निष्पादन की क्रियाएं समभाव से क्रियाशील हो उठती हैं। शरीर में किसी तरह का मल नहीं रहता और न किसी प्रकार का विजातीय पदार्थ शारीरिक क्रियाओं के संचालन में अवरोधक बनता है। इससे शरीर में उत्साह, अद्भुत स्फूर्ति और ऊर्जा उत्पन्न होती है। शरीर तपस्वी बन जाता है।

इस तपस्वी शरीर को और अधिक दिव्य एवं अलौकिक शक्तियों से युक्त करने के लिए मन को अपने इष्ट गुरु और देव के प्रति अधिक केन्द्रित करने के लिए, परमात्मा में आत्मा के मिलन की इच्छा को पूर्ण करते हुए उस दिव्य एवं अनंतयात्रा की ओर अग्रसर होने के लिए अपेक्षा कृत अधिक तेजस्वी आठ मुद्राएं की जाती हैं, जो इस प्रकार हैं—

सुरभि—दोनों हाथों की अंगुलियां गूंथ कर बाएं हाथ की तर्जनी से दाहिने हाथ की मध्यमा, दाहिने हाथ की तर्जनी से बायें हाथ की मध्यमा, इसी प्रकार बायें हाथ की अनामिका से दाहिने हाथ की कनिष्ठा और बाएं हाथ की कनिष्ठा से अनामिका अंगुली मिला दी जाती है।

ज्ञानम्—दाहिने हाथ की तर्जनी से अंगूठा मिला कर हृदय में तथा इसी प्रकार बायां हाथ बाएं घुटने पर सीधा रखा जाता है।

वैराग्यम्—दोनों तर्जनियों से अंगूठा मिला कर घुटनों पर सीधा रखा जाता है।

योनि—दोनों मध्यमा उंगलियों के नीचे से बाईं तर्जनी के ऊपर दाहिनी अनामिका और दाहिनी तर्जनी पर बाईं अनामिका रख कर दोनों तर्जनियों को बांध कर दोनों मध्यमा को ऊपर रखा जाता है।

शंख—बाएं अंगूठे को दाहिनी मुट्ठी में बांध कर दाहिने अंगूठे से बाईं अंगुलियों को मिलाया जाता है।

पंकजम्—दोनों हाथों के अंगूठे तथा अंगुलियों को मिला कर ऊपर की ओर रखा जाता है।

लिङ्गम्—दाहिने अंगूठे को सीधा रख कर दोनों हाथों की अंगुलियों को गूंथ कर बायां अंगूठा दाहिने अंगूठे की जड़ के ऊपर रखा जाता है।

निर्वाणम्—उल्टे बाएं हाथ पर दाहिना हाथ सीधा रख कर, अंगुलियों को परस्पर गूंथ कर दोनों हाथ अपनी तरफ से घुमा कर दोनों तर्जनियों को सीधे कान के समीप लाया जाता है।

इन विशिष्ट आठ मुद्राओं में नीरोग रहने, शरीर में रोगाणु प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने, रोगों का शमन करने हेतु सुरभि मुद्रा का विशेष महत्त्व है, इस सुरभि मुद्रा में वायु एवं आकाश तत्त्व का मिलन होने से ब्रह्मांड का चक्र स्थिर होता है। शरीर का ब्रह्मांड चक्र नाभिचक्र है। इसके स्थिर होने से शरीर क्रियाओं में उपद्रव नहीं होते। इसी तरह इस मुद्रा में पृथ्वी और जल का मेल होता है, जिससे शरीर रूपी ब्रह्मांड में उर्वरा शक्ति उत्पन्न होती है। इस मुद्रा से पित्त से विकृत समस्त मूलरोगों का शमन होता है। यही नहीं, उससे पाचन क्रिया की विकृति से उत्पन्न समस्त रोग नष्ट होते हैं। इस मुद्रा के निरंतर अभ्यास करने से षट्कमल चक्रों का भेदन संभव है, इतना ही नहीं, इस मुद्रा से मानवी क्रियाएं दिव्य अनुभूतियों से प्रभावित होकर दिव्यता की ओर निरंतर खिंची चली जाती हैं।

यह भी बताया गया है कि पित्त प्रधान, कफ प्रधान, बात प्रधान आदि विकारों में सुरभि मुद्रा का योग हानिकारक है, पर जब बात और कफ इन दोनों में से कोई प्रधान न हो और न पित्त प्रधान हो और सभी का वेग समान हो, तब साधारण रूप में सुरभि मुद्रा का प्रयोग वांछनीय है।

इन मुद्राओं के विषय में यह भी ध्यान देने योग्य बात हैं कि करीब एक घंटे के कम समय में ही शरीरस्थ पृथ्वी, जल, आकाश, अग्नि और वायु तत्त्व प्रत्यावर्त हो जाते हैं और उनका क्रम बदलने से एक तत्त्व की प्रधानता रहती है, अतः यदि मुद्रा का ठीक प्रभाव पड़ रहा है, शरीर में विशेष ऊष्मा का संचार नहीं हो रहा है तो उस अवधि तक ही लगभग आधे घंटे तक ही मुद्रा योग करना चाहिए।

मुद्रा योग का विषय बड़ा गहन है। इतना स्पष्ट है कि मुद्रा योग से राग-द्वेष आदि भावों से मुक्ति मिलती है और मनुष्य सुख-दुःख की भावनाओं से विरक्त होकर अनंत शान्ति प्राप्त करता है।

गायत्री जप के पूर्व की चौबीस मुद्रा बनाने की विधि

आकुञ्चिताङ्गुलिकरौ संयुतौ सुमुखं भवेत् ॥१॥ कोषाकारं संपुटं स्याद् विततं विस्तृतं भवेत् २ ॥३॥ विस्तीर्णौ विततौ हस्तावन्योऽन्याङ्गुलिसंयुतौ ॥४॥ कनिष्ठानामिकायुक्तौ हस्तौ द्वौ द्विमुखं भवेत् ॥५॥ तदेव मध्यमायुक्तं त्रिमुखं परिकीर्तितम् ॥६॥ तदेव तर्जनीयुक्तं चतुर्मुखमुदीरितम् ॥७॥ तदेव स्यात् पञ्चमुखं मिलिताङ्गुष्ठकं यदि ॥८॥ तदेव षण्मुखं प्रोक्तं यद्यश्लिष्टं कनिष्ठकम् ॥९॥ आकुञ्चिताग्रो संयुक्तौ न्युब्जौ हस्तावधोमुखम् ॥१०॥ उत्तानौ तादृशावेव व्यापकाञ्जलिकं करौ ॥११॥ अंगुष्ठ-द्वय-संयुक्तं मुष्टिद्वयमधोमुखम्। सम्प्रसार्य च तर्जन्यौ शकटं मुनिसत्तमाः ॥१२॥ मुष्टिं कृत्वा करौ योज्यौ तर्जन्यौ सम्प्रसार्य च। आकुञ्चिताग्रौ संयोज्य यमपाशं

विदुर्बुधाः ॥१३॥ अन्योऽन्यायतसंश्लिष्ट दशांगुलिकरावुभौ । अन्योऽन्यमभिबध्नीयात् ग्रन्थितं परिकीर्तितम् ॥१४॥ कृत्वा करौ सम्पुटकौ पूर्वं वामकरं सुधीः। अधोमुखेन दक्षेण योजयेत् चोन्मुखोन्मुखम् ॥१५॥ अधः कोषाकृतिकरौ प्रलम्बं कोविदो विदुः ॥१६॥ युतं मुष्टिद्वयं चैव सम्यङ्मुष्टिकमीरितम् ॥१७॥ दक्षपाणि-पृष्ठदेशे वामपाणितलं न्यसेत्। अंगुष्ठौ चालयेत् सम्यङ्मुद्रेयं मत्स्यरूपिणी ॥१८॥ वामहस्ते च तर्जन्यां दक्षिणतर्जन्यां वामांगुष्ठं नियोजयेत्॥ उन्नतं दक्षिणांगुष्ठं वामस्य मध्यमादिकाः। अंगुलीर्योजयेत् पृष्ठे दक्षिणस्य करस्य च ॥ वामस्य पितृतीर्थेन मध्यमानामिके तथा। अधोमुखे च ते कुर्याद्दक्षिणस्य करस्य च ॥ कूर्मपृष्ठसमं कुर्याद्दक्षपाणिं च सर्वतः। कूर्ममुद्रेयमाख्याता देवताध्यानकर्मणि ॥१९॥ तर्जनीं दक्षहस्तस्य वामांगुष्ठे निवेश्य च। हस्ते हस्तं च बाध्नीयात् कोलमुद्रा समीरिता ॥२०॥ प्रासारितांगुलिकरौ समीपं कर्णयोर्नयेत् सिंहाक्रान्तं समुदितं गायत्रीजपतत्परैः ॥२१॥ दर्शयेच्छ्रोत्रयोर्मध्ये हस्तावंगुलिपञ्चकौ। महाक्रान्ता भवेन्मुद्रा गायत्रीहृदयं गता ॥२२॥ मुष्टिंकृत्वा करं दक्षं वामे करतले न्यसेत्। उच्छ्रितञ्च करं कृत्वा मुद्गरं समुदाहृतम् ॥२३॥ दक्षिणेन करेणैव चलितांगुलिना करः। वदनाभिमुखं चैव पल्लवं मुनिभिः स्मृतम् ॥२४॥

नीचे लिखे अनुसार चित्र देखकर मुद्रा करें

सुमुखम्—दोनों हाथों की अंगुलियों को मोड़ें और परस्पर मिला दें ॥१॥

सम्पुटम्—दोनों हाथों को कमल की भांति फुलाकर मिलावें ॥२॥

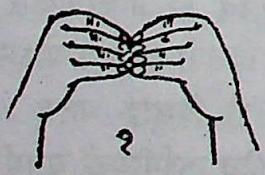

सुमुखम्

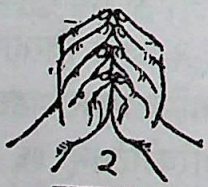

सम्पुटम्

विततम्

विस्तृतम्

द्विमुखम्

त्रिमुखम्

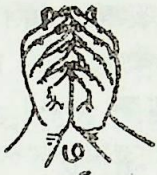

चतुर्मुखम्

पञ्चमुखम्

षण्मुखम्

अधोमुखम्

व्यापकाञ्जलिकम्

शकटम्

यमपाशम्

ग्रन्थितम्

उन्मुखोन्मुखम्

प्रलम्बम्

मुष्टिकम्

विततम्—दोनों हाथों की हथेली परस्पर आमने सामने करें ॥३॥

विस्तृतम्—दोनों हाथों की अंगुलियां खोलकर दोनों को कुछ अधिक फैलाकर अलग करें ॥४॥ **द्विमुखम्**—दोनों हाथों की कनिष्ठिका से कनिष्ठिका तथा अनामिका से अनामिका मिलावे ॥५॥ **त्रिमुखम्**—दोनों मध्यमा अनामिका कनिष्ठिका को मिलावें ॥६॥

चतुर्मुखम्—दोनों तर्जनी और शेष पूर्ववत् ॥७॥ **पंचमुखम्**—दोनों अंगूठे और अंगुलियां मिलावें ॥८॥ **षण्मुखम्**—हाथ वैसे ही रखते हुए दोनों कनिष्ठिका खोलें ॥९॥ **अधोमुखम्**—उल्टे हाथों की अंगुलियों को मोड़े तथा मिलाकर नीचे की ओर करें ॥१०॥ **व्यापकाञ्जलिकम्**—वैसे ही मिले हुए हाथों को शरीर की तरफ से घुमाकर सीधा करें ॥११॥

शकटम्—दोनों हाथों को उल्टाकर अंगूठे से अंगूठा मिलाकर तर्जनियों को सीधा रखते हुए मुट्ठी बांधें ॥१२॥

यमपाशम्—तर्जनी से तर्जनी बांधकर, दोनों मुट्ठी बांधें ॥१३॥ **ग्रन्थितम्**—दोनों हाथों की अंगुलियों को परस्पर गूंथे ॥१४॥ **उन्मुखोन्मुखम्**—हाथों की पांचों अंगुलियों को मिलाकर प्रथम बाएं पर दाहिना फिर दाहिने पर बाएं हाथ रखे ॥१५॥ **प्रलम्बम्**—अंगुलियों को कुछ मोड़ कर दोनों हाथों को उल्टाकर नीचे की ओर करें ॥१६॥

मुष्टिकम्—दोनों अंगूठे ऊपर रखते हुए दोनों मुट्ठी बांधकर मिलावें ॥१७॥ **मत्स्य**—दाहिने हाथ की पीठ पर बायां हाथ उल्टा रखकर दोनों अंगूठें मिलावें ॥१८॥

१९
कूर्मः

२०
वराहकम्

२१
सिंहाक्रान्तम्

२२
महाक्रान्तम्

२३
मुद्गरम

२४
पल्लवम्

कूर्म—सीधे बाएं हाथ की मध्यमा, अनामिका तथा कनिष्ठा मोड़ कर उल्टे दाहिने हाथ की मध्यमा, अनामिका को उन तीनों अंगुलियों के नीचे रखकर तर्जनी पर दाहिनी कनिष्ठा और बाएं

अंगूठे पर दाहिनी तर्जनी रखे ॥१९॥ **वराहकम्**—दाहिनी तर्जनी को बाएं अंगूठे से मिला, दोनों हाथों की अंगुलियों को परस्पर बांधें ॥२०॥ **सिंहाक्रान्तम्**—दोनों हाथों को कानों के समीप करें ॥२१॥ **महाक्रान्तम्**—दोनों हाथों की अंगुलियों को कानों के समीप करें ॥२२॥ **मुद्गरम्**—मुट्ठी बांध, दाहिनी कुहनी बाईं हथेली पर रखें ॥२३॥ **पल्लवम्**—दाहिने हाथ की अंगुलियों को मुख के सम्मुख हिलावें ॥२४॥

मन्त्रमुच्चारयेद् व्यक्तं जपयज्ञः स वाचिकः।
शनैरुच्चार येन्मन्त्रमीषदोष्ठौ च चाल्येत्।
किञ्चिच्छब्दं स्वयं विद्यादुपांशुः सः जपः स्मृतः।
ध्यायेदक्षरं श्रेण्यो वर्णाद्वर्णं पदात्पदम्।
शब्दार्थचिन्तनाभ्यासः स उक्तो मानसो जपः॥

गायत्री-मन्त्र

नीचे लिखे गायत्री मन्त्र का करमाला पर भी जप करना चाहिए। गायत्री मन्त्र का २४ लक्ष जप करने से एक पुरश्चरण होता है। अतः स्वयं करें अथवा ब्राह्मण से जप करावें।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥

शक्ति मन्त्र जपने की करमाला

चित्र नं. एक के अनुसार अंक १ से आरम्भ कर १० अंक तक अंगूठे से जप करने से एक करमाला होती है। तर्जनी का मध्य तथा अग्रपूर्व सुमेरु है। इसी प्रकार दस करमाला जपते समय बाएं हाथ की कनिष्ठिका की जड़ की लकीर से आरम्भ कर तर्जनी की जड़ की लकीर तक दस गिनकर पश्चात् चित्र नं. २ के अनुसार अंक १ से आरम्भ करें। अंक ८ तक जप करने से १०८ की एक माला होती है।

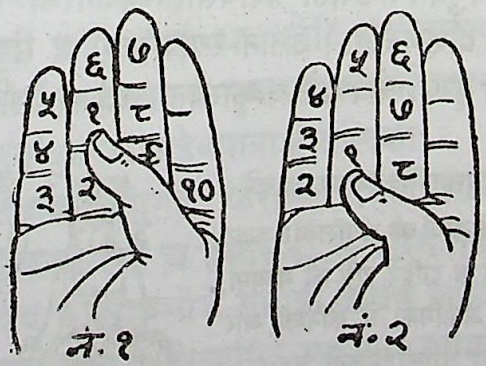

त्रिविधो जपयज्ञः स्यात्तस्यभेदान्निबोधत।
वाचिकश्च उपांशुश्च मानसश्च त्रिधा मतः।
त्रयाणां जपयज्ञानां श्रेयान् स्यादुत्तरोत्तरः॥
यदुच्चनीचस्वरितैः स्पष्ट शब्द वदक्षरैः। !

जप के बाद की आठ मुद्राएं

सुरभिर्ज्ञानवैराग्ये योनिः शंखोऽथ पङ्कजम्।
लिङ्गं निर्वाणमुद्रा च जपान्तेऽष्टौ प्रदर्शयेत्॥

जप के बाद की आठ मुद्रायें करने की विधि

अन्योऽन्याभिमुखी श्लिष्टा कनिष्ठानामिका पुनः। तथैव तर्जनीमध्या धेनुमुद्रा समीरिता ॥१॥ तर्जन्यंगुष्ठकौ सक्तावग्रतो हृदि विन्यसेत्। वाम हस्ताम्बुजं वामे जानु मूर्द्धनि विन्यसेत्। ज्ञानमुद्रा भवेदेषा रामचन्द्रस्य प्रेयसी ॥२॥ तर्जन्यंगुष्ठकौ सक्तौ जान्वन्ते च विनिर्दिशेत्। वैराग्या ह्यस्ति मुद्रा च मुक्तिसाधनकारिका ॥३॥ मिथः कनिष्ठिके बद्ध्वा तर्जनीभ्यामनामिके। अनामिकोद्र्ध्वसंश्लिष्टे दीर्घमध्यमयोरथ। अंगुष्ठाग्रद्वये न्यस्य योनिमुद्रेयमीरिता ॥४॥ वामांगुष्ठं तु संगृह्य दक्षिणेन तु मुष्ठिना। कृत्वोत्तानां ततो मुष्टिमंगुष्ठन्तु प्रसारयेत्॥ वामांगुल्यस्तथा श्लिष्टाः संयुक्ताः स्युः प्रसारिताः। दक्षिणांगुष्ठसंस्पृष्टा मुद्रैषा शंखमुद्रिका ॥५॥ हस्तौ तु सम्मुखौ कृत्वा संहतप्रोन्नतांगुली। तलान्तमिलितांगुष्ठौ कृत्वैषा पद्ममुद्रिका ॥६॥ उच्छ्रितं दक्षिणांगुष्ठं वामांगुष्ठे बन्धयेत्। वामांगुलीर्दक्षिणाभिरंगुलीभिश्च बन्धयेत्। लिंगमुद्रेयमाख्याता शिवसान्निध्यकारिणी ॥७॥ अधोमुखं वामकरं तदूर्ध्वं दक्षिणन्तथा। उत्तानं स्थापयित्वा च संयुक्तांगुलिकौ तदा। हस्तौ तु मुष्टिकौ कृत्वा श्रोत्रपार्श्वे च कारयेत्। तर्जन्यौ दर्शयेदूर्ध्वमेषा निर्वाण संस्मृता॥

नीचे लिखे अनुसार चित्र देखकर मुद्रा करें।

सुरभि—दोनों हाथों की अंगुलियां गूंथकर बाएं हाथ की तर्जनी से दाहिने हाथ की मध्यमा, मध्यमा से तर्जनी, अनामिका से कनिष्ठा और कनिष्ठा से अनामिका अंगुली मिलावें ॥१॥

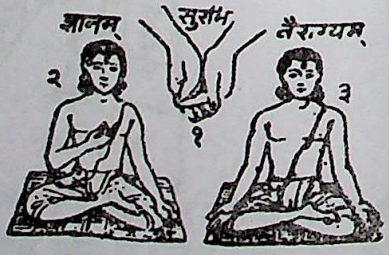

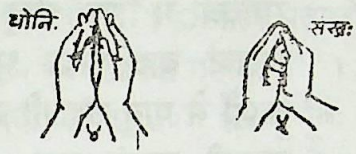

ज्ञानम्—दाहिने हाथ की तर्जनी से अंगूठा मिलाकर हृदय में तथा इसी प्रकार बायां हाथ बाएं घुटने पर सीधा रखे ॥२ ॥

वैराग्यम्—दोनों तर्जनियों से अंगूठा मिलाकर घुटनों पर सीधा रखे ॥३ ॥ **योनि**—दोनों हाथों की मध्यमाओं के नीचे से बाईं तर्जनी के ऊपर दाहिनी अनामिका और दाहिनी तर्जनी पर बाईं अनामिका रख दोनों तर्जनियों से बांध, दोनों मध्यमा ऊपर रखें ॥४ ॥ **शंख**—बाएं अंगूठे को दाहिनी मुट्ठी में बांध दाहिने अंगूठे से, बाईं अंगुलियों को मिलावें ॥५ ॥ **पंकज**—दोनों हाथों के अंगूठे तथा अंगुलियों को मिलाकर ऊपर की ओर करें ॥६ ॥ **लिंगम्**—दाहिने अंगूठे को सीधा रखते हुए दोनों हाथों की अंगुलियों को गूंथकर बायां अंगूठा दाहिने अंगूठे की जड़ के ऊपर रखें ॥७ ॥ **निर्वाणम्**—उल्टे बाएं हाथ पर दाहिना हाथ रख सीधा अंगुलियों को परस्पर गूंथ दोनों हाथ अपनी तरफ से घुमा कर दोनों तर्जनियों को सीधी कान के समीप करे ॥८ ॥

गायत्री मुद्रा तथा जप करने के बाद गायत्री कवच का पाठ करे।

गायत्री कवचम्

ॐ अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीच्छन्दो गायत्री देवता ॐ भूः बीजम् भुवः शक्तिः स्वः कीलकम् गायत्रीप्रीत्यर्थे जप विनियोगः ॥

अथ ध्यानम् ॥

पञ्चवक्त्रां दशभुजां सूर्यकोटिसमप्रभाम्।
सावित्रीं ब्रह्मवरदां चन्द्रकोटि सुशीतलाम्।
त्रिनेत्रां सितवक्त्रां च मुक्ताहारविराजिताम्।
वराभयांकुशकशाहेमपात्राक्षमालिकाः।
शङ्खचक्राब्जयुगलं कराभ्यां दधतीं पराम्।
सितपंकजसंस्थां च हंसारूढां सुखस्मिताम्।
ध्यात्वैवं मानसाम्भोजे गायत्री कवचं जपेत् ॥
ॐ ब्रह्मोवाच ॥ विश्वामित्र महाप्राज्ञ गायत्रीकवचं शृणु।
यस्य विज्ञानमात्रेण त्रैलोक्यं वशयेत्क्षणात् ॥१ ॥

सावित्री मे शिरः पातु शिखायाममृतेश्वरी।
ललाटं ब्रह्मदैवत्या भ्रुवौ मे पातु वैष्णवी ॥२॥
कर्णौ मे पातु रुद्राणी सूर्या सावित्रिकाऽम्बिके।
गायत्री वदनं पातु शारदा दशनच्छदौ ॥३॥
द्विजान् यज्ञप्रिया पातु रसनायां सरस्वती।
सांख्यायनी नासिकां मे कपोलौ चन्द्रहासिनी ॥४॥
चिबुकं वेदगर्भा च कण्ठं पात्वघनाशिनी।
स्तनौ मे पातु इन्द्राणी हृदयं ब्रह्मवादिनी ॥५॥
उदरं विश्वभोक्त्री च नाभौ पातु सुरप्रिया।
जघनं नारसिंही च पृष्ठं ब्रह्माण्डधारिणी ॥६॥
पार्श्वौ मे पातु पद्माक्षी गुह्यं गोगाप्त्रिकाऽवतु।
ऊर्वोरोंकाररूपा च जान्वोः सन्ध्यात्मिकाऽवतु ॥७॥
जंघयोः पातु अक्षोभ्यां गुम्फयोर्ब्रह्मशीर्षका।
सूर्या पदद्वयं पातु चन्द्रा पादांगुलीषु च ॥८॥
सर्वाङ्गं वेदजननी पातु मे सर्वदाऽनघा।
इत्येतत् कवचं ब्रह्मन् गायत्र्या सर्वपावनम्।
पुण्यं पवित्रं पापघ्नं सर्वरोगनिवारणम् ॥९॥
त्रिसन्ध्यं यः पठेद्विद्वान् सर्वान् कामानवाप्नुयात्।
सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः स भवेद्वेदवित्तमः ॥१०।
सर्वयज्ञफलं प्राप्य ब्रह्मान्ते समवाप्नुयात्।
प्राप्नोति जपमात्रेण पुरुषार्थांश्चतुर्विधान् ॥११॥

इतिविश्वामित्र संहितोक्तं कवचं सम्पूर्णम्॥

प्रातः संध्याकालीन गायत्री तर्पण

ॐ गायत्र्या विश्वामित्र ऋषिः सविता देवता गायत्री च्छन्दः गायत्री-तर्पणे विनियोगः॥ ॐ भूः ऋग्वेदपुरुषं तर्पयामि। ॐ भुवः यजुर्वेदपुरुषं त०। ॐ स्वः सामवेदपुरुषं त०। ॐ महः अथर्ववेदपुरुषं त०। ॐ जनः

इतिहासपुराणपुरुषं त० । ॐ तपः सर्वाङ्गम् पुरुषं त० । ॐ सत्यं सत्यलोक पुरुषं त० । ॐ स्वः स्वर्लोकपुरुषं त० । ॐ भू० एकपदां गायत्रीं त० । ॐ भुवः द्विपदां गायत्रीं त० । ॐ स्वः त्रिपदां गायत्रीं त० । ॐ भुर्भूवः स्व चतुष्पदां गायत्रीं त० । ॐ उषसीं त० । ॐ गायत्रीं त० । ॐ पृथिवीं त० । ॐ अजां त० । ॐ कौशिकीं त० । ॐ सांकृतिं त० । ॐ सार्वजितीं त० ॥ ॐ तत्सद् ब्रह्मार्पणमस्तु ॥

अथ मध्याह्न सन्ध्या प्रकरणम्

(प्रातः सन्ध्या के अनुसार करके)

प्राणायाम के बाद "ॐ सूर्यश्चमेति" के विनियोग तथा आचमन-मन्त्र के स्थान पर नीचे लिखे मन्त्र पढ़ें।

सूतके मृतके वाऽपि प्राणायाममन्त्रकम्।
तथा मार्जन-मन्त्रैश्च मनसोच्चार्य मार्जयेत्॥
अत्रामन्त्रमित्यस्य व्यक्तमन्त्रोच्चारण वर्जं मानसमित्यर्थः ।

मध्याहन संध्या का मंत्राचमनम्

विनियोग—ॐ आपः पुनन्त्विति विष्णुर्ऋषिरनुष्टुप्छन्दः आपो देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः ॥

आचमन—ॐ आपः पुनन्तु पृथिवीं पृथ्वी पूता पुनातु माम्। पुनातु ब्रह्मणस्पतिः ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यदुच्छिष्टमभोज्यं च यद्वा दुश्चरितं मम। सर्वं पुनन्तु मामापोऽसतां च प्रतिग्रहं स्वाहा।

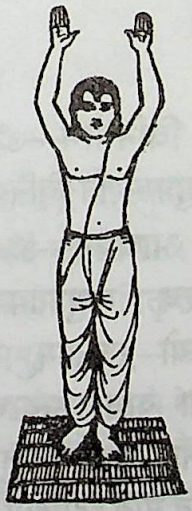

उपस्थान—चित्र के अनुसार दोनों हाथ ऊपर करे।

मध्याह्न संध्या की अर्घ्य-विधि

अर्घ्य—सीधा खड़ा हो सूर्य को एक अर्घ दे।

विष्णुरूपा—गायत्री-ध्यान (प्रातः सन्ध्या में चित्र देखें)।

ॐ मध्याह्ने विष्णुरूपां च तार्क्ष्यस्थां पीतवाससाम्। युवतीं च यजुर्वेदां सूर्यमण्डल- संस्थिताम्।

साधक सूर्यमण्डल में स्थित युवा अवस्था वाली, पीले वस्त्र, शंख चक्र गदा तथा पद्म धारण किये हुए गरुड़ पर सवार हुई यजुर्वेद की पोथी से युक्त गायत्री का ध्यान करे।

मध्यान्हकाले विष्णुरूपा

अथ सायं सन्ध्या प्रकरणम्

(प्रातः सन्ध्या के अनुसार करें)

पश्चिमाभिमुख हो सूर्य रहते करना उत्तम है। प्राणायाम के बाद ॐ सूर्यश्चमेति के विनियोग तथा आचमन मन्त्र के स्थान पर नीचे लिखे मन्त्र पढ़ें।

सायं संध्या का मन्त्राचमन

विनियोग—ॐ अग्निश्चमेति रुद्र ऋषिः प्रकृतिश्छन्दोऽग्निर्देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः॥

आचमन—ॐ अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम्, यदह्ना पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना अहस्तदवलुम्पतु। यत्किञ्चि-द्दुरितं मयि इदमहमा पोऽमृतयोनौ सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा॥

सायं अर्घ्य विधिः

अर्घ—बैठा हुआ तीन अर्घ देवे।

उपस्थान—चित्र के अनुसार दोनों हाथ बन्द कर कमल के सदृश करें।

सायं शिवरूपा—गायत्री ध्यान (प्रातः सन्ध्या में चित्र देखें)।

संध्याकालीन गायत्री

ॐ सायाह्ने शिवरूपां च वृद्धां वृषभवाहिनीम्। सूर्यमण्डलमध्यस्थां साम- वेदसमायुताम्।

सूर्यमण्डल में स्थित, वृद्धारूपा, त्रिशूल डमरू, पाश तथा पात्र लिये बैल पर बैठी हुई सामवेद से युक्त गायत्री का ध्यान करे।

सायंकाले शिवरूपा

पञ्चमहायज्ञ प्रकरण

पञ्च सूना गृहस्थस्य चुल्ली— पेषण्युपस्कराः। कण्डनी चोदकुम्भश्च वाध्यते यास्तु वाहयन् ॥ तासां क्रमेण सर्वासां निष्कृत्यर्थं महर्षिभिः। पञ्च क्लृप्ता महायज्ञाः प्रत्यहं गृहमेधिनाम्। अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम्। होमो दैवो बलिर्भूतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम् ॥ मनु० ३/६९—७० ॥

चूल्हा (अग्नि जलाने से) चक्की (पीसने से) बुहारी (बुहारने से)। ओखली (कूटने से) और जल के स्थान में (जल पात्र के नीचे जीवों के दबने से) जो पाप होते हैं, उन पापों के नाश के लिए पंचमहायज्ञ किया जाता है। १. ब्रह्मयज्ञ—वेद वेदांग तथा पुराणादि का पढ़ना और पढ़ाना। २. पितृ-यज्ञ-श्राद्ध तथा तर्पण। ३. देवयज्ञ-देवताओं का पूजन और हवन। ४. भूतयज्ञ-बलि वैश्वदेव। ५. मनुष्य-यज्ञ-अतिथि-सत्कार इन पञ्चयज्ञों को नित्यप्रति अवश्य करना चाहिए।

तर्पण-विधिः

आचारादर्शादि ग्रन्थों में लिखा है कि घर में अमावस्या, पितृपक्ष, विशेष तिथि श्राद्ध के दिन तिल से तर्पण करे। किन्तु अन्य दिनों में घर में तिल से तर्पण नहीं करे।

तर्पण का जल

तर्पण का जल सूर्योदय से आधे पहर तक अमृत, एक पहर तक मधु, डेढ़ पहर तक दूध और साढ़े तीन पहर तक जल रूप से पितरों को प्राप्त होता है। इसके उपरान्त का दिया हुआ जल राक्षसों को प्राप्त होता है।

कुशा से तर्पण

अग्रैस्तु तर्पयेद्देवान् मनुष्यान् कुशमध्यतः।
पितृस्तु कुशमूलाग्रैर्विधिः कौशो यथाक्रमम्॥

कुशा के अग्रभाग से देवताओं का, मध्य से मनुष्यों का और मूल तथा अग्रभाग से पितरों का तर्पण करे।

तर्पण

पूर्वाभिमुख बैठ कर दूसरा वस्त्र लेकर आचमन कर दो कुशा की पवित्री दाहिने तथा तीन की बाएं हाथ की अनामिका की जड़ में धारण करे। तीन कुशाओं को सीधी बांटकर ग्रन्थी लगा कुशाओं का अग्रभाग पूर्व में रखते हुए दाहिने हाथ में जलादि लेकर संकल्प में नाम पर्यन्त बोलकर—

अद्यैतत् सदद्यैतस्य ब्रह्मणो .....

"श्रुति-स्मृति-पुराणोक्त-फलप्राप्त्यर्थं देवर्षि-मनुष्यपितृतर्पणं करिष्ये" कहकर जलादि छोड़े।

आवाहन

(तीर्थों में नहीं करे)

ब्रह्मादयः सुराः सर्वे ऋषयः सनकादयः।
आगच्छन्तु महाभागाः ब्रह्माण्डोदरवर्तिनः॥

देव-तर्पण

देवतीर्थ—अर्थात् अंगुलियों के अग्रभाग तथा कुशाओं के अग्र भाग से चावल सहित प्रत्येक को एक-एक अंजलि देवे।

देव तर्पण-विधिः

ॐ ब्रह्मा तृप्यताम् १ ॥ ॐ विष्णुस्तृप्यताम्-१ ॥ ॐ रुद्रास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ प्रजापतिस्तृप्यताम्-१ ॥ ॐ देवास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ छन्दांसि तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ वेदास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ ऋषयस्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ पुराणाचार्यास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ गन्धर्वास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ इतराचार्यास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ संवत्सरः सावयवस्तृप्यताम्-१ ॥ ॐ देव्यस्तृप्यन्ताम्-१ ॥ नागास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ सागरास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ पर्वतास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ सरितस्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ मनुष्यास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ यक्षास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ रक्षांसि तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ पिशाचास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ सुपर्णास्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ भूतानि तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ पशवस्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ वनस्यपतयस्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ औषधयस्तृप्यन्ताम्-१ ॥ ॐ भूतग्रामश्चतुर्विधस्तृप्यन्ताम्-१ ॥

ऋषि-तर्पण-विधि

(ऋषियों को भी उसी प्रकार अञ्जलि देवे)

ॐ मरीचिस्तृप्यताम्-१ ॥ ॐ अत्रिस्तृप्यताम्-१ ॥ ॐ अङ्गिरास्तृप्यताम्-१ ॥ ॐ पुलस्त्यस्तृप्यताम्-१ ॥ ॐ पुलहस्तृप्यताम्-१ ॥ ॐ क्रतुस्तृप्यताम्-१ ॥ ॐ प्रचेतास्तृप्यताम्-१ ॥ ॐ वसिष्ठस्तृप्यताम्-१ ॥ ॐ भृगुस्तृप्यताम्-१ ॥ ॐ नारद- स्तृप्यताम्-१ ॥

ततः उत्तराभिमुखः कण्ठीकृत्वा।

दिव्य-मनुष्य-तर्पण-विधि

उत्तराभिमुख हो जनेऊ तथा गमछे को कण्ठी कर "कायतीर्थ" कनिष्ठा का मूल तथा कुशाओं के मध्य से जौ सहित प्रत्येक को दो-दो अंजलि देवे।

ॐ सनकस्तृप्यताम्-२ ॥ ॐ सनन्दनस्तृप्यताम्-२ ॥ ॐ सनातनस्तृप्यताम्-२ ॥ ॐ कपिलस्तृप्यताम्-२ ॥ ॐ आसुरिस्तृप्यताम्-२ ॥ ॐ वोढुस्तृप्यताम्-२ ॥ ॐ पञ्चशिखस्तृप्यताम्-२ ॥

ततोऽपसव्यं दक्षिणाभिमुख पातितवामजानुः।

पितृ-तर्पण विधिः

न वेष्टितशिरा न कृष्णकषायादि वासा देवपितृकार्यं कुर्यात् ।।
तत्सर्वं निष्फलं याति बहिर्जानु च यत्कृतम् ।

दक्षिणाभिमुख हो बायां घुटना मोड़ **अपसव्य** हो—अर्थात् जनेऊ तथा अंगोछे को दाहिने कन्धे पर पितृ तीर्थ तर्जनी के मूल तथा कुशा के अग्रभाग और मूल से तिल सहित प्रत्येक नाम से ३-३ अंजलि दक्षिण में देवे ।

ॐ कव्यवाट् तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा नमः-३ ॥ ॐ अनलस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा-३ ॥ ॐ सोमस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा-३ ॥ ॐ यमस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा-३ ॥ ॐ अर्यमा तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा-३ ॥ ॐ अग्निष्वात्तास्तृप्यन्तामिदं तिलोदकं तेभ्यः स्वधा-३ ॥ ॐ सोमपास्तृप्यन्तामिदं तिलोदकं तेभ्यः स्वधा-३ ॥ ॐ बर्हिषदस्तृप्यन्तामिदं तिलोदकं तेभ्यः स्वधा-३ ॥

१. यमों को भी उसी प्रकार तीन-तीन अंजलि देवें ।

ॐ यमाय नमः-३ ॥ ॐ धर्मराजाय नमः-३ ॥ ॐ अन्तकाय नमः-३ ॥ ॐ वैवस्वताय नमः-३ ॥ ॐ कालाय नमः-३ ॥ ॐ सर्वभूतक्षयाय नमः-३ ॥ ॐ औदुम्बराय नमः-३ ॥ ॐ दध्नाय नमः-३ ॥ ॐ नीलाय नमः-३ ॥ ॐ परमेष्ठिने नमः-३ ॥ ॐ वृकोदराय नमः-३ ॥ ॐ चित्राय नमः-३ ॥ ॐ चित्रगुप्ताय नमः-३ ॥

पितृ आवाहन के लिए नीचे लिखे वाक्य से एक अंजली देवे ।

ॐ आगच्छन्तु मे पितरः इमं गृह्णन्त्वापोऽञ्जलिम् ।।

नीचे लिखे वेद मन्त्र यदि शुद्ध उच्चारण न कर सकें तो केवल "ॐ अद्य अमुक गोत्र" से बोलकर प्रत्येक को ३-३ अञ्जलि देवें ।

ॐ उदीरतामवर उत्परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः । असुं य ईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु ॥ ॐ अद्य अमुक गोत्रः अस्मत्पिता अमुक वसुस्वरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा ॥ (पिता को अंजलि) ॐ अङ्गिरसो नः पितरो नवग्वा अथर्वाणो भृगवः सोम्यासः । तेषां वयꣳ सुमतौ यज्ञियानामपि भद्रे सोमनसे स्याम ॥ ॐ अद्य अमुक गोत्रः अस्मत्पिता अमुक

वसुस्वरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा (दूसरी अंजलि देवें) ॐ आयन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः । अस्मिन्यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥ अद्य अमुक गोत्रः अस्मत्पिता अमुक वसुस्वरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा ॥ (तीसरी अंजलि देवें) ॐ ऊर्ज्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिस्रुतम् । स्वधास्थ तर्पयत मे पितृन् ॥ ॐ अद्य अमुक गोत्रः अस्मत्पितामहः अमुक रुद्रस्वरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा ॥ (दादा को पहली अंजलि देवें) ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः । अक्षन् पितरोऽमीमदन्त पितरोऽतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम् ॥ ॐ अद्य अमुक गोत्रः अस्मत्पितामहः अमुक वसुस्वरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा ॥ (दूसरी अंजलि देवें) ॐ ये चेह पितरो ये च नेह यांश्च विद्म यां उ च न प्रविद्म । त्वं वेत्थ यति ते जातवेदः स्वधाभिर्यज्ञ ᳪ सुकृतं जुषस्व । ॐ अद्य अमुक गोत्रः अस्मत्पितामहः अमुकः रुद्रस्वरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा ॥ (तीसरी अंजलि देवें) ॐ मधु बाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः । माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः ॥ ॐ अद्य अमुक गोत्रः अस्मत्प्रपितामहः अमुक आदित्यस्वरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा (परदादा को पहली अंजलि देवें) ॥ ॐ मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिव ᳪ रजः । मधुद्यौरस्तु नः पिता ॥ ॐ अद्य अमुकगोत्रः अस्मत्प्रपितामहः अमुक आदित्य-स्वरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा ॥ (दूसरी अंजिल देवें) । ॐ मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमां ऽस्तु सूर्यः । माध्वीर्गावो भवन्तु नः ॥ ॐ अद्य अमुक गोत्रः अस्मत्प्रपितामहः अमुक आदित्यस्वरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा (तीसरी अंजलि देवें) ।

जपे होमे तथा दाने स्वाध्याये पितृतर्पणे ।
अशून्यं तु करं कुर्यात्सुर्वणरजतैः कुशैः ॥

नीचे लिखे वाक्य बोलकर एक-एक अंजिल देवें—

ॐ तृप्यध्वम् । ॐ तृप्यध्वम् । ॐ तृप्यध्वम् ।

माता, दादी और परदादी को तीन अंजलि देवें।

ॐ अद्य अमुक गोत्राऽस्मन्माता अमुकी देवी गायत्रीस्वरूपिणी तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा ॥३ ॥ (माता)

ॐ अद्य अमुक गोत्राऽस्मत्पितामही अमुकी देवी सावित्रीस्वरूपिणी तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा ॥३ ॥ (दादी)

ॐ अद्य अमुक गोत्राऽस्मत्प्रपितामही अमुकी देवी सरस्वती स्वरूपिणी तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा ॥३ ॥ (परदादी)

ॐ अद्य अस्मत् सापत्नमाता अमुक गोत्रा अमुकी देवी गायत्रीस्वरूपिणी तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा ॥३ ॥ (सौतेली माता)

नीचे लिखा मन्त्र प्रत्येक बार बोलकर नाना को अंजलि देवे।

देवतानां पितृणां च जले दद्याज्जलाञ्जलीन्।
असंस्कृत प्रणीतानां स्थले दद्याज्जलाञ्जलिम् ॥

ॐ नमो वः पितरो रसाय नमो वः पितरः शोषाय नमो वः पितरो जीवाय नमो वः पितरः स्वधायै नमो वः पितरो घोराय नमो वः पितरो मन्यवे नमो वः पितरः पितरो नमो वो गृहान्नः पितरो दत्त सतो वः पितरो देष्मैतद्वः पितरो वास आधत्त ॥ अद्य अमुक गोत्रोऽस्मन्मातामहः अमुक अग्निस्वरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा-३ ॥ (नाना)

नीचे लिखा मन्त्र प्रत्येक बार बोलकर परनाना को तीन अंजलि देवें।

ॐ नमो वः पितरो० ॥ ॐ अद्य अमुक गोत्रोऽस्मत् प्रमातामहः अमुक वरुणस्वरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा-३ ॥ (परनाना)

नीचे लिखा मन्त्र प्रत्येक बार बोलकर वृद्ध परनाना को तीन अंजलि देवें।

ॐ नमो वः पितरो० ॥ ॐ अद्य अमुक गोत्रोऽस्मद्वृद्ध प्रमातामहः अमुक प्रजापतिस्वरूपस्तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्मै स्वधा-३ ॥

(वृद्धपरनाना)

नानी, परनानी और वृद्ध परनानी को तीन-तीन अंजलि देवें।

ॐ अद्य अमुक गोत्राऽस्मन्मातामही अमुकी देवी गंगा रूपा तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा-३ ॥ (नानी)

ॐ अद्य अमुक गोत्राऽस्मत्प्रमातामही अमुकी देवी यमुनारूपा तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा-३ ॥

यावद्देवानृषींश्चैव पितृंश्चैव न तर्पयेत।
तावन्न पीडयेद्वस्त्रं येन स्नातो न चोदके॥
निष्पीडयति यः पूर्वं स्नानवस्त्रं तु तर्पणात्।
निराशाः पितरस्तस्य यान्ति देवा सहर्षिभिः॥

ॐ अद्य अमुक गोत्राऽस्मद्वृद्ध प्रमातामही अमुकी देवी सरस्वतीरूपा तृप्यतामिदं तिलोदकं तस्यै स्वधा-३ ॥

नीचे लिखे स्वर्गीय सम्बन्धियों का गोत्र, सम्बन्ध तथा नाम उच्चारण कर प्रत्येक को तीन-तीन अंजलि देवें, गुरु, दादा, वृद्धदादा, ताऊ, भ्राता, पुत्र, श्वसुर, मामा और फूफा आदि तथा उन लोगों की पत्नी, अपनी पत्नी बहिन और पुत्री आदि को अंजलि देवें। पश्चात् नीचे लिखे मन्त्र से जल धारा छोड़े।

ॐ देवाऽसुरास्तथा यक्षाः नागाः गन्धर्व-राक्षसाः। पिशाचाः गुह्यकाः सिद्धाः कूष्माण्डास्तरवः खगाः ॥ जलेचराः भूनिलयाः वाय्वाधाराश्च जन्तवः। तृप्तिमेते प्रयान्त्वाशु मद्दत्तेनाऽम्बुनाखिलाः ॥ ॐ नरकेषु समस्तेषु यातनासु च ये स्थिताः। तेषामाप्यायनायैतद्दीयते सलिलं मया ॥ ॐ येऽवान्धवा वान्धवाश्च येऽन्यजन्मनि बान्धवाः। ते तृप्तिमखिला यान्तु यश्चास्मत्तोऽभिवाञ्छति ॥ ये मे कुले लुप्तपिण्डाः पुत्रदारविवर्जिताः। तेषां हि दत्त मक्षय्यमिदमस्तु तिलोदकम्। आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं देवर्षिपितृमानवाः। तृप्यन्तु पितरः सर्वे मातृमातामहादयः ॥ ॐ अतीतकुलकोटीनां सप्तद्वीपनिवासिनाम्। आब्रह्मभुवनांल्लोकानिदमस्तु तिलोदकम् ॥

"अंगोछे की" चार तह कर उसमें तिल तथा जल छोड़कर नीचे लिखे मन्त्र से जल के बाहर बाईं ओर पृथ्वी पर निचोड़े।

ये के चास्मत्कुले जाताः अपुत्रा गोत्रिणो मृताः।
ते तृप्यन्तु मया दत्तं वस्त्रनिष्पीडनोदकम्॥

हाथ में बंटी हुई जो कुशा हैं उन्हें खोलकर त्याग दें किन्तु पवित्री नहीं त्यागें। पश्चात् पूर्वाभिमुख तथा सव्य हो आचमन कर नीचे लिखे मन्त्र से भीष्म पितामह को एक अंजलि देवें।

भीष्म-तर्पणम्

भीष्मः शान्तनवो वीरः सत्यवादी जितेन्द्रियः ।
एभिरद्भिरवाप्नोतु पुत्रपौत्रोचितां क्रियाम् ॥

नीचे लिखे प्रत्येक नाम से एक-एक अंजलि देवें ।

ॐ ब्रह्मणे नमः । ॐ विष्णवे नमः । ॐ रुद्राय नमः । ॐ सूर्याय नमः । ॐ दिग्भ्यो नमः । ॐ दिग्देवताभ्यो नमः । ॐ अग्नये नमः । ॐ पृथिव्यै नमः । ॐ औषधिभ्यो नमः । ॐ वाचे नमः । ॐ वाचस्पतये नमः । ॐ मित्राय नमः । ॐ महद्भ्यो नमः । ॐ अद्भ्यो नमः । ॐ अपाम्पतये नमः । ॐ वरुणाय नमः ।

तर्पणांग-अर्घ्य

नीचे लिखे मन्त्र से सूर्य को अर्घ दें । पश्चात् जल को नेत्रों पर लगावें ।

ॐ नमो विवस्वते ब्रह्मन् भास्वते विष्णुतेजसे ।
जगत्सवित्रे शुचये नमस्ते कर्मदायिने ॥
ॐ देवा गातु विदो गातुं वित्वा गातुमित ।
मनसस्पत इमं देव यज्ञ ᳬ स्वाहा वातेधाः स्वाहा ॥

"कृतेनानेन तर्पणेन पितृरूपी जनार्दनः प्रीयताम्"

क्षमा प्रार्थना–

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् ।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ॥

सूर्यायार्घम्–

नमो विवस्वते ब्रह्मन् भास्वते विष्णुतेजसे ।
जगत्सवित्रे शुचये सवित्रे कर्मदायिने ॥
एषोऽर्घः ॐ भगवते सूर्याय नमः ॥

नमस्कारम्–

ॐ जपा कुसुम संकाशं काश्यपेय महाद्युतिम् ।
तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ॥

प्रदक्षिणम्—

ॐ नमः सवित्रे जगदेक चक्षुषे जगत्प्रसूति स्थिति नाशहेतवे।
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे, विरञ्चि नारायण शंकरात्मने ॥

ब्रह्म-यज्ञ विधि

मण्डल ब्राह्मण तथा उपनिषदादि श्रुति पाठ करें या नीचे लिखा पाठ करें।

"अनुवाकम्"—ॐ विभ्राड् वृहत्पिवतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञ-पतावविह्रुतम्। वातजूतो यो अभिरक्षति त्मना प्रजाः पुपोष पुरुधा विराजति ॥

पुरुषसूक्तम्—ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्। स भूमि॰ सर्वतः स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥

"शिवसंकल्पः"—ॐ यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥

"मण्डल-ब्राह्मणम्"—ॐ यदेतन्मण्डलं तपति तन्महदुक्थन्ता ऋचः स ऋचां लोकोथ यदेतदर्चि दीप्यते तन्महाव्रतं तानि सामानि स साम्नां लोकोथ य एष एतस्मिन् मण्डले पुरुषः सोऽग्निस्तानि यजू॰षि स यजुषां लोकः।

"यजुर्वेदः"—ॐइषे त्वोर्जे त्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजापतीरनमीवा अयक्ष्मा मा व स्तेन ईशत माघश॰सो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात वह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि।

"ऋग्वेदः"—ॐ अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम् ॥

"सामवेदः"—ॐअग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये। निहोता सत्सि बर्हिषि ॥

"अथर्ववेदः"—ॐ शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंय्योरभि स्रवन्तु नः ॥

"अनेन ब्रह्मयज्ञाख्येन कर्मणा श्रीभगवान् परमेश्वरः प्रीयतां न मम'।

नित्य होमविधि

तिलों से आधे चावल, चावलों से आधे जौं, जौं से आधी खांड और यथेष्ट घृत तथा मेवा मिलाकर उसका साकल्य बना लेवें। संकल्प बोलकर "श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं नित्य-होमं करिष्ये" ऐसा कहे। वेदी पर पञ्च भूसंस्कार करके कुशाओं से वेदी साफ कर उन्हें ईशान में फैंक दे। गोबर व जल से लेपन करे। स्रुवा के मूल से पूर्व की ओर उत्तरोत्तर प्रादेश मात्र की तीन लकीरें खींचे। अनामिका और अंगूठे से उन लकीरों में से किञ्चित मिट्टी निकालें। वेदी पर शुद्ध जल छिड़के। अग्निकोण से अग्नि लाकर नीचे लिखे मन्त्र से नैर्ऋत्यकोण में जलती हुई अग्नि पधरावे।

ॐ क्रव्यादमग्निमिति मंत्रस्य प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिष्टुप्-छन्दोऽग्निर्देवताऽग्निसंस्कारे विनियोगः ॥

मन्त्र—ॐ क्रव्यादमग्निं प्रहिणोमि दूर यमराज्यं गच्छतु रिप्रवाहः। इहैवायमितरो जातवेदा देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन्।

अग्नि स्थापनमंत्र

नीचे लिखे मन्त्र से अग्निस्थापन करें।

अयन्ते योनिरिति मन्त्रस्य प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप्छन्दोऽग्निर्देवता अग्निस्थापने विनियोगः।

मन्त्र—ॐ अयन्ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातो अरोचथाः। तञ्जानन्नग्न आरोहाथा नो वर्धया रयिम् ॥

अग्नि परिस्तरण-विधि

नीचे लिखे मन्त्र से वेदी के पूर्व में उत्तराग्र कुशा रखे।

ॐ अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम् ॥

नीचे लिखे मन्त्र से वेदी के दक्षिण में पूर्वाग्र कुशा रखे।

ॐ इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्व मध्या इन्द्राय भागं प्रजावती रनमीवा अयक्ष्मा मा व स्तेन ईशत माघशꣳसो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात् वह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि।

नीचे लिखे मन्त्र से वेदी के पश्चिम में उत्तराग्र कुशा रखें।

ॐ अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये। निहोता सत्सि बर्हिषि।

नीचे लिखे मन्त्र से बेदी के उत्तर में पूर्वाग्र कुशा रखे।

ॐ शं नो देवीरभीष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंय्योरभिस्रवन्तु नः ॥

अग्नि का ध्यान

अग्नि प्रज्वलित कर नीचे लिखे मन्त्र से अग्नि का ध्यान करे।

ॐ चत्वारि शृङ्गास्त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य। त्रिधा बद्धो वृषभो रौरवीति महो देवो मर्त्यां २ आ विवेश ॥

ॐ मुखं यः सर्वदेवानां हव्यभुक् कव्यभुक् तथा।
पितृणां च नमस्तुभ्यं विष्णवे पावकात्मने॥

प्रार्थना—ॐ अग्ने शाण्डिल्य गोत्र मेषध्वज ! मम सम्मुखो वरदो भव ॥

'ॐ पावकाग्नये नमः' इससे अग्नि का पूजन करे। तर्जनी और कनिष्ठिका को अलग रख कर सीधे हाथ से आहुति देवे। ये मृगी मुद्रा है।

ॐ भूः स्वाहा। इदमग्नये न मम ॥१॥ ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे इदं न मम ॥२॥ ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम ॥३॥ ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम ॥४॥ ॐ धन्वन्तरये स्वाहा, इदं धन्वन्तरये न मम ॥५॥ ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्यो स्वाहा, इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यो न मम ॥६॥ ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम ॥७॥ ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते न मम ॥८॥ ॐ देवकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा। इदमग्नये न मम ॥९॥ ॐ मनुष्यकृतस्यैन- सोऽवयजनमसि स्वाहा। इदमग्नये न मम ॥१०॥ ॐ पितृकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा। इदमग्नये न मम ॥११॥ ॐ आत्मकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा, इदमग्नये न मम ॥१२॥ ॐ एनस एनसोऽवयजनमसि स्वाहा, इदमग्नये न मम ॥१३॥ ॐ यच्चाहमेनो विद्वांश्चकार यश्चाविद्वांस्तस्य सर्वस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा। इदमग्नये न मम ॥१४॥

प्रार्थना

ॐ सप्त ते अग्ने समिधः सप्त जिह्वाः सप्त ऋषयः सप्त धाम प्रियाणि। सप्त होत्राः सप्तधा त्वा यजन्ति सप्त योनीरापृणस्व घृतेन स्वाहा। इदमग्नये न मम ॥१५॥ "अनेन होमेन श्रीपरमेश्वरः प्रीयतां न मम ॥ ॐ तत्सद् इति ब्रह्मार्पणमस्तु ॥

पूजन-सामग्री को शुद्ध करके यथास्थान रखकर विधिपूर्वक पूजन करें। स्रुवा में भस्म लगाकर मन्त्र से लगा कुशा वेदी में पधराये।

व्रत परिचय

अष्टभैरव— असितांगो रुरुश्चण्डः क्रोध उन्मत्त भैरवः ।
कालभीषण संहाराः भैरवाश्चाष्ट कीर्तिताः ॥

षड्विनायक— मोदश्चैव प्रमोदश्च सुमुखो दुर्मुखस्तथा ।
अविघ्नो विघ्नहर्ता च षडैते विघ्न नायकाः ॥

पंचदेवता— आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम् ।
पंच दैवतमित्युक्तम् सर्वकर्मसु पूजयेत ॥

अष्टवसु— आपोध्रुवश्च सोमश्च धरश्चैवानिलोऽनलः ।
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ प्रकीर्तितः ॥

सप्तर्षि— कश्यपोऽत्रिभरद्वाजो विश्वामित्रोऽथ गौतमः ।
जमदग्निर्वसिष्ठश्च सप्तैते ऋषयः स्मृताः ॥

सप्तनदियां— गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वती ।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥

सप्तमोक्षपुरि— अयोध्यामथुरामाया काशी कांची अवन्तिका ।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैते मोक्षदायिकाः ॥

दशशक्ति— विभूतिरुन्नतिःकान्तिः सृष्टि कीर्तिश्च सन्मतिः ।
व्युष्टिरुत्कृष्टि ऋद्धिश्च सिद्धिश्च दश शक्तयः ॥

दशदान— गोभूतिलहिरण्याज्य वासो धान्य गुडानि च ।
रौप्यं लवणमित्येवं दशदानं प्रकीर्तितम् ॥

व्रत परिचर्चा

यद्यपि भारतीय साहित्य में वैदिक संस्कृति का अपना ही महत्त्वपूर्ण स्थान है तथापि यह संस्कृति सभी संस्कृतियों की जननी मानी जाती है। वैदिक संस्कृति आर्य होने के नाते हमारे ऊपर तीन ऋण बताती है—१. देव ऋण, २. पितृ ऋण, ३. मातृ ऋण। देव आराधना से देव ऋण, पितृ वर्ग की सेवा से पितृ ऋण, मातृ भूमि की सेवा-बलिदान से हम तीनों ऋणों से विमुक्त हो जाते हैं।

देव आराधना में अर्चन, पूजन, ध्यान, व्रत, उपवास का अपना विशिष्ट स्थान है। भारत में उपवास-ब्रह्म का सर्व व्यापी प्रचार है, सभी श्रेणी के नर-नारी, शैव, वैष्णव, शाक्त एकभुक्त साध्य व्रत से लेकर कई दिनों तक अन्नपानादि वर्जित व्रतों को बड़ी आस्था एवं श्रद्धा से करते हैं, व्रतों से अनेक अंशों में प्राणिमात्र का और विशेष कर मानव जाति का बड़ा भारी उपकार होता है, यदि सत्य निष्ठा एवं श्रद्धा का समावेश हो। वेद भी कहता है—

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् ।
दक्षिणया श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥

अर्थात् व्रत से दीक्षा, दीक्षा से दक्षिणा, दक्षिणा से श्रद्धा और श्रद्धा से सत्य की प्राप्ति होती है।

तत्त्व वेत्ता महर्षियों ने वैदिक दृष्टि से ही नहीं अपितु वैज्ञानिक दृष्टि से भी व्रत की महिमा प्रदर्शित की है। एक साधारण सा प्राणी भी जानता है कि अजीर्ण, उदर शूल, ज्वर, मलावरोध से लेकर कुष्ठ, जलोदर, अग्निमान्द्य, राजयक्ष्मा महाव्याधियां भी व्रतों के प्रयोग से निर्मूल होकर आरोग्यता प्रदान करती हैं।

रोग भी पाप हैं, ऐसे पाप व्रतों से दूर हो जाते हैं, तथापि कायिक, वाचिक, मानसिक पाप भी व्रतों से दूर होते हैं, उनके समूल नाश का प्रत्यक्ष प्रमाण यही है कि व्रतारम्भ पहिले पाप युक्त प्राणियों का मुख हतप्रभ-सा रहता है। व्रत की समाप्ति होने पर वह सूर्योदय के समय कमल की तरह खिल उठता है।

"कलौ अन्नमयः प्राणः" कलियुग में अन्न में ही प्राण हैं।

व्रतों के प्रभाव से मानव जनों की आत्मा शुद्ध होती है। सङ्कल्प शक्ति बढ़ती है। बुद्धि, विचार-शक्ति, ज्ञान-तन्तु विकसित होते हैं। मनुष्यों के कल्याण के लिए व्रत "स्वर्ग सोपान" संसार में तारने वाली प्रत्यक्ष नौका है। ऐसा दूसरा कौन-सा साधन हैं, जिनके करने से अनेक लाभ होते हैं। व्रत के विषय में देवल ऋषि का कथन है कि व्रत, उपवास के नियम पालन से शरीर को तपाना ही तप है—

वेदोक्तेन प्रकारेण कृच्छ्रचान्द्रायणादिभिः ।
शरीर शोषणं यत् तत् तप इत्युच्यते बुधैः ॥

लोक प्रसिद्धि में व्रत और उपवास दो हैं—ये कायिक, वाचिक, मानसिक, नित्य नैमित्तिक काम्य चान्द्रायण, प्राजापत्य, एक-भुक्त अयाचित, मितभुक् रूप में किए जाते हैं।

व्रत और उपवास दोनों एक हैं, व्रत में भोजन किया जाता है, उपवास में निराहार रहना पड़ता है, शस्त्रघात, मर्माघात हिंसा के त्याग से कायिक, सत्य बोलने और निर्वैर रहने से वाचिक, मन को शान्त रखने की दृढ़ता से मानसिक व्रत होता है। चान्द्रायण व्रत पुण्य सञ्चय के लिए, एकादशी "नित्य" व्रत, पापक्षय के लिए चान्द्रायाणादि "नैमित्तिक" व्रत, सौभाग्यादि प्राप्ति के लिए, वटसावित्री आदि "काम्य" व्रत माने गए हैं।

चन्द्र की प्रसन्नता के लिए तथा चन्द्र लोक प्राप्ति के लिए पापादि निवृत्ति के लिए "चान्द्रायण" व्रत किया जाता है। प्राजापत्य बारह दिनों में होता है। इसमें पहिले तीन दिनों में प्रतिदिन २२ ग्रास भोजन करें, फिर तीन दिन २६ ग्रास प्रतिदिन, फिर तीन दिन पूर्ण पकाया अन्न २४ ग्रास प्रतिदिन, तीन दिन सर्वथा निराहार रहे, इस प्रकार बारह दिन में प्राजापत्य होता है।

एकभुक्त—दिनार्ध व्यतीत होने पर 'स्वतन्त्र' एकभुक्त मध्याह्न में "अन्याङ्ग" किया जाता है, "प्रतिनिधि" आगे पीछे भी किया जा सकता है, यह तीन भेदों वाला होता है।

अयाचित व्रत में बिना मांगे जो प्राप्त हो उसी को निषेध काल बताकर दिन या रात जब भी अवसर हो तभी भोजन करे। "मित भुक्" में प्रतिदिन दस ग्रास (नियत-प्रमाण) का भोजन करें।

इतिहास, पुराणों में जिस तपस्या का इतना महत्त्व बताया गया है वह भी वेदोक्त कृच्छ्र-चान्द्रायणादि उपवासों के अतिरिक्त कुछ दूसरा नहीं है। कूर्म पुराण में लिखा है।

व्रतोपवासैर्नियमै र्होमैः ब्राह्मण तर्पणैः ।
तेषां वै रुद्र सायुज्यं जायते तत्प्रसादतः ॥

व्रतोपवास से भगवान शिव की प्राप्ति कही गयी है।

राजर्षि धुन्धुमार ने व्रतों के प्रभाव से शत पुत्र प्राप्त किए। महाराज दशरथ के नित्य व्रत करने से मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री रामचन्द्रने पुत्र रूप में जन्म लिया।

संक्षेपतः व्रत उपवास हिन्दू संस्कृति एवं धर्म के प्राण हैं। व्रतों पर वेद, धर्मशास्त्रों पुराणों तथा वेदाङ्गों में बहुत कुछ कहा गया है। व्रत राज, व्रतार्क, जयसिंह कल्पद्रुम, हेमाद्रि व्रत खण्ड आदि विशाल ग्रन्थों की रचना तो केवल व्रतों पर ही की गई है। व्रत से मनुष्य की अन्तरात्मा शुद्ध होती है। अकेला उपवास उत्तम स्वास्थ्य एवं दीर्घ जीवन प्रदान करता है, यह सर्वथा निर्विवाद है।

"व्रियते स्वर्गं, व्रजन्ति स्वर्ग गमनेन वा"।

जिससे स्वर्ग में गमन अथवा स्वर्ग का वरण होता हो इस अर्थ में व्रत शब्द की निरुक्ति होती है।

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यमकल्मषम् ।
एतानि मानसान्याहुर्व्रतानि व्रत चारिणाम् ॥
एकभक्तं तथा नक्तमुपवासादिकं च यत् ।
तत् सर्वं कायिकं पुंसां व्रतं भवति नान्यथा ।

(वाराह पुराणे)

जिस व्रत सम्बन्धी कर्म के लिए शास्त्रों में जो समय नियत है उस समय यदि व्रत की तिथि हो तो उसी दिन व्रत सम्बन्धी कार्य ठीक समय पर करना चाहिए। तिथ्यादि निर्णय में विशद वर्णन किया गया है।

तिथ्यादि निर्णय—सूर्योदय की तिथि यदि दोपहर तक न हो तो वह खण्डा होती है, उसमें व्रत की समाप्ति एवं प्रारम्भ दोनों वर्जित हैं। सूर्योदय से सूर्यास्त तक रहने वाली तिथि अखण्डा है। यदि गुर्वस्त, शुक्रास्त न हो उसमें व्रत का प्रारम्भ श्रेष्ठ है।

जो तिथि व्रत के लिए आवश्यक नक्षत्र और योग से युक्त है वह यदि तीन मुहूर्त हो तो वह भी श्रेष्ठ होती है।

जिस २ तिथि में सूर्योदय या अस्त हो वह तिथि स्नान जप दानादि में सम्पूर्ण उपयोगी होती है।

यां तिथिं समनु प्राप्य उदयं याति भास्करः ।
सा तिथि सकला ज्ञेया स्नानदान जपादिषु ॥ (देवल)

१. **उदयस्था तिथिर्या हि न भवेद् दिनमध्यगा ।**
सा खण्डा न व्रतानां स्यादारम्भञ्च समापनम् ॥ (हेमाद्रि व्र० ख०)

२. **अखण्ड व्याप्ति मार्तण्डा यद्यखण्डा भवेत तिथिः ।**
व्रत प्रारम्भणं तस्यामनस्तं गुरु शुक्र युक् तथा ॥ (हेमाद्रि)

३. **या तिथिर्ऋक्ष संयुक्ता या च योगेन नारद ।**
मुहूर्तत्रय मात्रापि सापि सर्वा प्रशस्यते ॥ (गोभिल)

पूर्वाह्न देवों का, मध्याह्न मनुष्यों का और अपराह्न पितरों का समय है, जिसका जो समय हो उसका पूजनादि कार्य उसी समय करना चाहिए।

पूर्वाह्नो वै देवानां मध्याह्नो मनुष्याणाम् पराह्नः पितृणाम् । (श्रुति)
पूर्वाह्नो दैविकः कालो मध्याह्नश्चापि मानुषः ।
अपराह्नः पितृणां तु सायाह्नो राक्षसः स्मृतः ॥ (व्यास)

आज के सूर्योदय से कल के सूर्योदय तक एक दिन होता है, पूर्व भाग दिन में प्रातः सन्ध्या, मध्याह्न सन्ध्या तथा उत्तर भाग रात में सायाह्न और निशीथ हैं। सूर्योदय से तीन २ मुहूर्त के प्रातः काल **संगव**, मध्याह्न अपराह्न, सायाह्न ये पांच भाग हैं त्रिंशद् घटी प्रमाण के दिनमान का पन्द्रहवां हिस्सा मुहूर्त होता है। यदि दिनमाग ३४ घड़ी का हो तो सवा दो और २६ का हो तो पौने दो का मुहूर्त होता है।

प्रदोष काल सूर्यास्त के बाद दो घड़ी तक माना गया है **"प्रदोषोऽस्तमयादूर्ध्वं घटिका द्वयमिष्यते", तिथ्यादि तत्त्वम्। उषाकाल** सूर्योदय से पहिले होता है।

व्रत के अधिकारी आचार-विचार में रत रहते हों। निष्कपट, निर्लोभी, सत्यवादी, वेदानुयायी मनुष्य व्रताधिकारी होते हैं।

नास्ति स्त्रीणां पृथक्यज्ञो, न व्रतं नाप्युपोषणम् ।
भर्तृशुश्रूषयेवेता लोकानिष्टान् व्रजन्ति हि ॥ (स्कन्द पुराण)

केवल सौभाग्यवती स्त्रियों के लिए लिखा है कि पति की सेवा के सिवाय उनके लिए न कोई यज्ञ, न व्रत और न उपासना है। ये पति सेवा से अभीष्ट लोकों में जा सकती हैं। फिर भी पति

की आज्ञा से वह व्रत कर सकती हैं। यथा—

"पत्नी पत्युरनुज्ञाता व्रतादिष्वधिकारिणी" **(व्यास)**

अतः उसके लिए पति का व्रत ही कल्याणकारी है। बृहस्पति का अस्त, और शुक्र का अस्त होने से पहिले तीन दिन वृद्धत्व, उदय होने के पश्चात् तीन दिन बाल्यत्व में वर्जित हैं। ऐसे अवसर में व्रतादि का आरम्भ और उत्सर्ग नहीं करना चाहिए। मलमास भद्रादि भी त्याज्य हैं।

अस्तगे च गुरौ शुक्रे बाले वृद्धे मलिम्लुचे ।
उद्यापनमुपारम्भं व्रतानां नैव कारयेत् ॥ **(गार्ग्य)**

नियम—व्रत करने वाला उषा काल में उठ कर शौच स्नानादि से निवृत्त हो, प्रातः काल भोजन किए बिना सूर्य और व्रत देवता को निवेदन कर व्रत का आरम्भ करे।

यथा— अभुक्त्वा प्रातराहारं स्नात्वाऽऽचम्य समाहितः ।
सूर्याय देवताभ्यश्च निवेद्य व्रतमाचरेत् ॥ **(देवल)**
व्रतारम्भे मातृपूजां नान्दीश्राद्धं समारभेत् । **(शातातप)**

प्रारम्भ में गणपति, मातृका, पञ्चदेव पूजन नान्दी श्राद्ध करे। व्रत देवता की सुवर्णमयी मूर्ति बनवा कर उसका पञ्चोपचार, षोडशोपचार पूजन करे।

यथाविधि व्रत करके उसके समाप्त होने पर वित्तानुसार उद्यापन करे। उद्यापन किए बिना व्रत निष्फल होता है।

कुर्यादुद्यापनं चैव समाप्तौ यदुदीरितम् ।
उद्यापनं बिना यत्तु तद्व्रतं निष्फलं भवेत् ॥ **(नन्दि पुराण)**

व्रत के समय बार-बार जल पीने से, दिन में सोने से, ताम्बूल चबाने से, सहवास करने से व्रत बिगड़ जाता है।

असकृज्जलपानाच्च, सकृत्ताम्बूलभक्षणात् ।
उपवासः प्रणश्येत् दिवा स्वापाच्च मैथुनात् ॥ **(विष्णु)**

जल, फल, मूल, दूध, विप्रेच्छा, औषधि और गुरु के वचन से व्रत नहीं बिगड़ते हैं।

अष्टौ तान्यव्रतघ्नानि आपो मूलं फलं पयः ।
हविर्ब्राह्मणः काम्या च गुरुर्वचनमौषधम् ॥

व्रत करने वाले मोहवश बिना आचमन किए क्रिया करें तो उनका व्रत वृथा होता है, नहाते, धोते, खाते-पीते, छींक लेते हुए गलियों में घूमकर आने पर आचमन किया भी हो तो दुबारा आचमन करे। यदि जल न मिले तो दक्षिण कर्ण का स्पर्श करे। आचमन लेते समय दाहिने हाथ की अङ्गुलियों को मिलाकर सीधी करे, उनमें से कनिष्ठा तथा अङ्गूठे को अलग रख कर आचमन करे। यद्वा दाहिने हाथ के पेरुओं को बराबर करके हाथ को गौ के कान जैसा बनाकर आचमन करे।

स्नात्वा पीत्वा क्षुते सुप्ते भुक्त्वा रथ्योपसर्पणे ॥
आचान्तः पुनराचामेद् वासो परिधाय च । **(याज्ञवल्क्य)**
संहताङ्गुलिना तोयं गृहीत्वा पाणिना द्विजः ।
मुक्ताङ्गुष्ठ कनिष्ठेन शेषेणाचमनं चरेत् ॥ **(नागदेव)**

आयतं पर्वणां कृत्वा गोकर्णा कृतिवत् करम् ।
एतेनैव विधानेन द्विजो ह्याचमनं चरेत् । (भारद्वाज)

उसवास और श्राद्ध में दातुन नहीं करनी चाहिए।

उपवासे तथा श्राद्धे न कारयेत् दन्त धावनम् ॥ (स्मृत्यन्तर)
बहुकालिक संकल्पो गृहीतश्छ पुरा यदि ।
सूतके मृतके चैव व्रतं तन्नैव दुष्यति ॥ (शुद्धि तत्त्व)
काम्योपवासे प्रक्रान्ते त्वन्तरा मृत सूतके ।
तत्र काम्य व्रतं कुर्याद् दानार्चन विवर्जितम् ॥ (कूर्म पुराणे)

बहुत दिनों में समाप्त होने वाले व्रत का पहले संकल्प किया हो तो जन्म-मरण का सूतक नहीं लगता।

इसी प्रकार किसी कामना के व्रत में सूतक आ जाए तो दान और पूजन के सिवा व्रत में बाधा नहीं आती।

प्रारब्ध दीर्घ तपसां नारीणां यद् रजो भवेत् ।
न तत्रापि व्रतस्य स्यादुपरोधः कदाचन ॥ (सत्यव्रत)

दीर्घ व्रत का प्रारम्भ करने पर स्त्री रजस्वला हो जाए तो उससे भी व्रत में कोई रुकावट नहीं आती।

कन्या, शय्या गृहं चैव देयं यद् गोस्त्रियादिकम् ।
एका एकस्य दातव्या न बहुभ्यः कथंचन ॥

कन्या, शय्या, मकान, गौ और स्त्री एक ही को देने चाहिएं। बहुतों को देने पर विभाजन होने से पाप लगता है।

यज्ञोपवीत धारण करते समय **यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं** का उच्चारण करे। **एतावद्दिन पर्यन्तम्** विसर्जन के समय क्षमा मांगे, वांयें कन्धे पर रहने में सव्य, दाहिने कन्धे पर अपसव्य, गले में रहने से कण्ठी होता है।

मल-मूत्रादि के त्याग के समय कर्णस्थ रखना चाहिए। इसके बिना मल मूत्र का त्याग रखना नितान्त आवश्यक है।

सूतके मृतके चैव गते मास चतुष्टये ।
नव यज्ञोपवीतानि धृत्वा पूर्वाणि संत्यजेत् ॥ (मुक्तक)

धारण किए हुए यज्ञोपवीत को चार मास हो जाए या जन्म मरणादिक सूतक आ जाए तो उसे बदल लेना चाहिए।

कलश, सोने चांदी या तांबे या मिट्टी का मंगल कार्यों में मङ्गलकारी होता है।

हेमो वा राजतस्ताम्रो मृण्मयो वापि ह्यभ्रणः । (कर्म प्रदीपः)
प्रवाहितं ब्रह्मतोयं क्षात्रतोयं सरोवरम् ।
कूपोदकं वैश्य तोयं गृहभाण्डेषु शूद्रवत् । (मुक्तक)

जल नदी का बहता हुआ, ब्राह्मण वर्णवत्, सरोवर का क्षत्रियवर्णवत्, कुएं का वैश्य वर्णवत् और घर के बर्तनों में रखा हुआ शूद्र वर्णवत् माना गया है।

दुग्धत्रितय—दूध-दही-घी ये तीनों गौ के उत्तम माने जाते हैं।

मधुत्रय—घी-दूध और शहद मुख्य हैं।

मधुपर्क—दही एक भाग, शहद दो भाग और घी एक भाग मिलाने से होता है।

काल चतुष्टय—रात्रि व्यतीत होने पर समय ५५ घड़ी ऊषा काल, ५७ पर अरुणोदय, ५८ पर प्रातः काल, ६० सूर्योदय होता है।

पञ्च पञ्च ऊषाः कालः सप्त पञ्चारुणोदयः ।
अष्ट पञ्च भवेत्प्रातस्ततः सूर्योदयः स्मृतः ॥ (विष्णुः)

वेद—ऋक्-यजुः साम और अथर्व चार वेद हैं।

पञ्चदेव—सूर्य-गणेश-शक्ति-शिव-विष्णु इनकी गणना विष्णु-शिव-गणेश-सूर्य और शक्ति इस क्रम से की जाती है।

पञ्चोपचार—गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य अर्पण करने में पञ्चोपचार पूजा होती है।

पञ्चनदी—भागीरथी, यमुना, सरस्वती, गोदाबरी और नर्मदा ये पांच मुख्य नदियां हैं।

भागीरथी समाख्याता, यमुना च सरस्वती ।
किरणा—धूतपापा च पञ्चनद्यः प्रकीर्तिताः ॥

पञ्चाङ्ग—तिथि वार-नक्षत्र-योग और करण पञ्चाङ्ग हैं।

षट्कर्म—स्नान, सन्ध्या, जप, होम, पठन-पाठन, देवार्चन, वैश्व-देवार्चन, अतिथि-सत्कार।

षडङ्ग—हृदय, मस्तक, शिखा, नेत्र द्वय, भुजा द्वय, कर स्पर्श।

वेदषडङ्ग—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष।

अष्टांग अर्घ्य—जल, पुष्प, कुशाग्र भाग, दही, अक्षत, केशर, दूर्वा सुपारी इन आठ पदार्थों से अर्घ्य सम्पादन होता है।

दूरस्थं जलमध्यस्थं धावन्तं मद गर्वितम् ।
क्रोधवन्तं चाशुचिकं नमस्कारं विवर्जयेत् ॥
पुष्पहस्तो वारि हस्तस्तैलाभ्यङ्गो जलस्थितः ।
आशीःकर्ता नमस्कर्ता उभयोर्नरकं व्रजेत् । (कर्ण लोचन)

अभिवादन के समय जो मनुष्य दूर हो, जल में हो, दौड़ रहा हो, धन से गर्वित, क्रोध में हो, अपवित्र हो ऐसी अवस्था में उसे नमस्कार नहीं करना चाहिए।

इस प्रकार के आचार विचार, व्रत, उपवास, पूजा पाठ, हरिस्मरण ये सब स्वर्गीय सुख प्राप्ति के प्रधान साधन हैं।

रविवार व्रत—विधानम्

एतद्व्रतं मार्गशीर्षस्य रविवारे प्रगृह्य वर्षपर्यन्तं कार्यम्—प्रातर्नद्यादौ स्नात्वा सन्ध्यातर्पणं नित्यकर्म विधाय देशकालौ स्मृत्वा मम समस्त रोग निरासार्थमायुः आरोग्य पुत्र-पौत्रादि प्राप्ति द्वारा श्री सूर्य नारायण प्रीतये रविवार व्रतं करिष्ये इति सङ्कल्प्य गोमयोपलिप्ते शुचौ देशे पद्मं विलिख्य ताम्रपात्रं निधाय तन्मध्ये रक्त चन्दनादिना अष्टदलं पद्मं कृत्वा तत्र सुवर्णमयीं सूर्य प्रतिमां संस्थाप्य प्रतिमासं रविवारे पुरुष सूक्तेन स्त्री चेन्नाम मन्त्रेण षोडशोपचारैः पूजयेत्।

मार्गशीर्षादि प्रत्येक रविवारे सूर्याय अर्घ्यं दद्यात्। तद्यथा मार्गशीर्षे मित्रो नाम देवता पौषे विष्णुर्देवता, माघे वरुण देवता, फाल्गुणे सूर्य देवता, चैत्रे भानुर्देवता, वैशाखे तपन देवता, ज्येष्ठे इन्द्र देवता, आषाढे रवि देवता, श्रावणे गभस्ति देवता, भाद्रपदे यमो देवता, आश्विने हिरण्यरेत देवता, कार्तिके दिवाकर नाम देवता—एवं वर्ष पर्यन्तं कुर्यात्। अन्ते मार्गशीर्षस्य रविवारे उद्यापनं कुर्यात्। तद्दिने पूजनादिकं होमं कृत्वा वस्त्रादिभिराचार्यं सम्पूज्य सोपस्करां प्रतिमां सवत्सां गां व्रतपूर्तये च दत्त्वा द्वादश ब्राह्मणान् पायसेन भोजयित्वा दक्षिणां दत्त्वा बन्धुभिः सह भुञ्जीत।

भौमवार व्रत विधानम्

मार्गशीर्षे वैशाखे वा शुक्लपक्षे चन्द्रतारा बलान्विते भौमवासरे व्रतं प्रगृह्य वक्ष्यमाणविधानं संवत्सरपर्यन्तमेकविंशति वर्षपर्यन्तं वा कार्यम् तद्यथा।

मङ्गलवारे अरुणोदय वेलायां उत्थाय शौच विधिं विधाय अपामार्ग काष्ठेन मौन पूर्वकम् दन्त धावनं कृत्वा नद्यादौ यथाविधि स्नात्वा संध्यादि नित्यक्रियां समाप्य शिवालये गृहे वा रक्तवासांसि परिधाय रक्तगोमय लिप्त मण्डले स्वासने प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा उपविश्य सपवित्रकरः आचम्य प्राणा-नायम्य देश कालौ संकीर्त्य मम सकल कामनापूर्वक धनधान्य पुत्रपौत्रादि अभीष्ट मनोरथ सिद्धि द्वारा श्रीमङ्गल देवता प्रीत्यर्थं भौमव्रतं तत्पूजनं च करिष्ये, इति सङ्कल्प्य।

अथ देवेश ते भक्त्या करिष्ये व्रतमुत्तमम् ।
ऋण व्याधिविनाशाय धन सन्तान हेतवे ॥ इति प्रार्थ्य

कर्ता स्वदेहे न्यासं कुर्यात् (तद्यथा) ॐ भौमाय नमः अंघ्रयोः; भूमि पुत्राय० जान्वोः, ऋण हर्त्रे० ऊर्वोः, धनप्रदाय० कट्योः, स्थिरासना० गुह्ये, महाकायाय० उरसि, सर्वकामावरोधकाय० वामबाहौ, लोहिताय० दक्षिणबाहौ, लोहिताक्षाय० गले, सामगानां कृपाकराय० मुखे, धरात्मजाय० नासिकायाम्, कुजाय० अक्ष्णोः, भौमाय० ल ॅ भूतिदाय० भ्रुवोर्मध्ये, भूमिनन्दनाय० शिरसि, अङ्गारकाय० शिखायाम्, यमाय० सर्वाङ्गे, सर्वरोगापहारकाय० बाहुद्वये, वृष्टिकर्त्रे० मूर्द्धादिपदपर्यन्तम्, वृष्टिहर्त्रे० चरणादिमस्तकान्तम्, सर्वकामफलप्रदाय० दिक्षु आराय० नाभौ, १ वक्राय० वक्षसि २ भूमिजाय० मूर्ध्नि ३ । एवं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्—

रक्तमाल्यांबरधरः शक्ति शूल गदाधरः ।
चतुर्भुजो मेषगमो वरदः स्याद्धरासुतः ॥

एवं ध्यात्वा अर्घ्यं संस्थाप्य पूजां कुर्यात् । त्रिकोणे स्थण्डिले यथा विधि ताम्रकलशं संस्थाप्य तत्र एकविंशति-कोष्ठाढ्यं त्रिकोणं ताम्रयन्त्रं अथवा रक्तचन्दन निर्मितां शूलशक्तिधरां मेषारूढ़ां भौम-प्रतिमां संस्थाप्य प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा-आवाह्य कुर्यात् ।

ॐ एह्येहि भगवन् ब्रह्मन्नंगारक महाप्रभो ।
त्वयि सर्वं समायातं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥
भौममावाहयिष्यामि तेजोमूर्तिं दुरासदम् ।
रुद्ररूपमनिर्देश्यं वक्रं च रुधिरप्रियम् ॥

ॐ अग्नि मूर्द्धादिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् । अपाᳬरेता ᳬ सिजिन्वति । ॐ अङ्गारकाय विद्महे शक्ति हस्ताय धीमहि तन्नो भौमः प्रचोदयात् । इति भौममावाह्य पाद्यादि रक्त पुष्पान्तैः उपचारैः संपूज्य आवरणपूजां कुर्यात् । मङ्गलाय नमः पादौ पूजयामि, भूमिपुत्राय० जानुनी पू०, ऋणहर्त्रे० उरः, सर्वकर्मावरोधकाय० वामबाहु, लोहिताय० दक्षिणबाहुं, लोकहिताक्षाय० कण्ठं, सामगानां कृपाकराय० मुखं, धरात्मजाय० नासिकां,

कुजाय० नेत्रद्वयं, भौमाय ललाटं, भूमिदाय० भ्रुवोर्मध्ये, भूमि नन्दनाय० मस्तकं, अंगारकाय० शिखां, यमाय० सर्वाङ्गे, सर्वरोगापहारकाय० बाहुद्वयं, वृष्टिकर्त्रे० मूर्धादिपादपर्यन्तं, वृष्ट्यपहर्त्रे० चरणादिमस्तकान्तं, सर्वकाम फलप्रदाय० दिशः पूजयामि । ततो बाह्यत्रिकोणेषु—वक्राय नमः, आराय नमः भूमिजाय नमः, तद्बहिः अष्टदलेपूर्वादि क्रमेण ॐ ब्राह्म्यै नमः, माहेश्वर्य्यै नमः, कौमार्य्यै०, वैष्णव्यै०, इन्द्राण्यै०, चामुण्डायै० महालक्ष्म्यै नमः इति मातृकां पूजयामि ।

तद्बाह्ये भूपुरे पूर्वादि क्रमेण ॐ इन्द्राय नमः अग्नये०, अमाय०, निर्ऋतये०, वरुणाय०, वायवे, कुबेराय०, ईशानाय, ब्रह्मणे०, अनन्ताय नमः । इति दश दिक्पालान् पूजयामि (तद्बाह्ये) वज्राय, नमः, शक्तये०, दण्डाय०, खड्गाय०, पाशाय० अंकुशाय०, गदायै०, त्रिशूलाय०, पद्माय० चक्राय नमः, इत्यस्त्राणि पूजयेत् । एवं आवरण पूजां कृत्वा धूप दीप गोधूमान्न नैवेद्यताम्बूल दक्षिणानीराजनादिभिः सम्पूज्य अर्घ्यं दद्यात् । जलपूर्णे ताम्रपात्रे रक्तचन्दन पुष्प फलानि निक्षिप्य जानुभ्यामवनीं गत्वा ।

"ॐ भूमिपुत्र महातेजः स्वेदोद्भव पिनाकिनः । श्रेयार्थी त्वां प्रपन्नोऽहं गृहणार्घ्यं नमोस्तु ते" ॥१ ॥

प्रसीद देव देवेश विघ्नहारिन्धरात्मज । गृहाणार्घ्यं मया दत्तं मम शांतिप्रदो भव ॥२ ॥ रक्त प्रवाल संकाश जपाकुसुमसन्निभ । महीसुत महाबाहो गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ॥३ ॥ इत्यर्घ्यं दत्त्वा प्रणम्य, एकविंशति प्रदक्षिणाः कृत्वा साष्टांगं प्रणमेत् । ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा प्रार्थयेत्—

धरणी गर्भ सम्भूतं विद्युत्तेजः समप्रभम् ।
कुमारं शक्ति हस्तं च मङ्गलं प्रणमाम्यहम् ॥१ ॥
ऋण हर्त्रे नमस्तुभ्यं दुःख दारिद्रयनाशिने ।
नमामि द्योतमानाय सर्वकल्याण कारिणे ॥२ ॥
अङ्गारक महाभाग भगवन्भक्तवत्सल ।
त्वां नमामि ममाशेषमृणमाशु विमोचय ॥३ ॥

ऋणरोगादि दारिद्रयं ये चान्ये चापमृत्यवः ।
भयक्लेशमनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा ॥४॥
पुत्रान्देहि धनं देहि त्वामस्मि शरणं गतः ।
ऋण दारिद्रय दुःखेन शत्रूणां च भयात्ततः ॥५॥

(इति भौम व्रत विधानम्)

तुलसी महिमा बृहद्धर्म पुराणे

विष्णुरुवाच–

एकतः सर्व नैवेद्यं नानापुष्प विभूषणम् ।
एकतः पत्रमेकं ते द्वादशाक्षर मन्त्रवत् ॥१॥
श्राद्धे च तर्पणे चैव दाने नैवेद्य दापने ।
त्वत्पत्रेण बिना न स्यात्तत्तत्कर्म फलोत्तरम् ॥२॥

दर्शन मन्त्रः–

देवि विष्णु प्रिये मातस्तुलसि प्रिय दर्शने ।
हरि दर्शन दीपार्चिः प्रसीद द्विजवल्लभे ॥३॥

प्रणाम मन्त्र–

विष्णु प्रीतिकरे मातर्नमस्ते तुलसीश्वरि ।
पवित्री कुरु मेऽङ्गानि विष्णवङ्क हर्ष कारिणी ॥४॥

ग्रहण मन्त्र–

मातस्तुलसि कल्याणि गोविन्दचरण प्रिये।
केशवार्थे चिनोमि त्वां प्रसीद शुभ दर्शने ॥५॥ स्कान्दे०।
तुलस्यमृतजन्मासि सदा त्वं केशव प्रिया।
केशवार्थे चिनोमि त्वां वरदा भव शोभने।
तुलसी हेमरूपासि कृष्णरूपेण मंजरी।
शालिग्राम हितार्थाय मम दोषो न दीयते। स्कान्दे।

तुलसी ग्रहणे निषेध काल वायु पुराणे

अस्नात्वा तुलसीं छित्वा यः पूजां कुरुते नरः । सोऽपराधी भवेत्सत्यं तत्सर्वं निष्फलम्भवेत् । पूर्णिमायामामायां च द्वादश्यां रविसङ्क्रमे। तैलाभ्यङ्गे च स्नातेन मध्याह्ने निशि-सन्ध्ययो। अशौचेऽशुचिकाले च रात्रिवासान्वितेऽपि वा। तुलसीं ये च चिन्वन्ति ते छिन्दति हरेः शिरः । पद्म् पुराणे।

देवार्थे तुलसी छेदो होमार्थे समिधा तथा ।
इन्दुक्षये न दुष्येत गवार्थे तु तृणस्य च ॥१॥
पङ्कजं पञ्चरात्रं स्याद् दशरात्रं च विल्वकम् ।
एकादशाहं तुलसी नैव पर्युषिता भवेत् ॥२॥

अथ विल्व पत्र महिमा

धर्म पुराणे

यथा ये त्रीणि नेत्राणि यथा गङ्गाजलं मम ।
तथा प्रियतमो लक्ष्मि त्रिपत्रः श्रीफलच्छदः ॥
स्वर्ण मुक्ता प्रवालादि पुष्पाण्यन्यानि च ध्रुवम् ।
श्रीफलच्छदनेशस्य कलां नार्हन्ति कोटिकाम् ।
ऊर्ध्वपत्रं हरो ज्ञेयः पत्रं वामं विधिः स्वयम् ।
अहं दक्षिणपत्रं च त्रिपत्रं दलमित्यतः ॥३॥

दर्शन मन्त्र— बिल्व वृक्ष महाभाग महेशस्य सदाप्रिय ।
शिवदर्शन कृज्ज्योतिः प्रसीदाब्धि सुतास्तन ॥

प्रणाम— ॐ नमो बिल्वसखे सदा शङ्कर रूपिणे ।
सफलानि ममाङ्गानि कुरुष्व शिव हर्षद ॥

पत्र ग्रहण— पुण्य वृक्ष महाभाग मालूर श्रीफल प्रभो ।
महेश पूजनार्थाय चित्पत्राणि चिनोम्यहम् ॥
पत्रं वा यदि वा पुष्पं फलं नेष्टमधोमुखम् ।
यथोत्पन्नं तथादेयं विल्वपत्रमधोमुखम् ॥

वृहद्धर्म पुराणे– पक्षान्तं द्वादशी सायं मध्याह्नं भिन्नकालतः ।
शाखा भङ्गो न कर्त्तव्यो नैवारोहेत्तथा तरुम् ॥
वरमारुह्य चिनुयान्न शाखा भंजनं क्वचित् ।
षण्मासानन्तरं विल्वपत्रं पर्युषितं भवेत् ।

अथ धात्री (आमलकी) पूजनम्

तच्च आश्विन पूर्णिमामारभ्य कार्तिक पूर्णिमा पर्य्यन्तं कार्यम्-तत्र तावत् धात्री समीपे स्वासने प्राङ्मुखोपविश्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य ममाखिलपापक्षयपूर्वक धर्मार्थकाममोक्षसिद्धिद्वारा परमेश्वर प्रीत्यर्थं धात्रीमूले विष्णुपूजां धात्रीपूजां च करिष्ये इति सङ्कल्प्य गणेशं पूजयेत् । ततो वेदी मध्ये विष्णु प्रतिमां संस्थाप्य षोडशोपचारैः संपूज्य पुष्पाक्षतैरंगपूजां कुर्यात् ।

दामोदरायनमः पादौपूज०, केशवायनमः कटिं पूज०, नारायणाय नमः उदरं पूज०, वामनाय नमः कण्ठं पूज०, श्रीधराय नमः, बाहुद्वयं पूज०, गोविन्दायनमः मुखं पूज०, सहस्राक्षायनमः नेत्रे पूज०, सर्वेश्वराय० ललाटं पूज०, विष्णवे नमः शिरः पूज०, त्रिविक्रमाय नमः सर्वाङ्गं पूज०, ततो नमस्कारानन्तरं विशेष्यार्घ्यं दद्यात् तत्र मंत्र :

नमः सहस्त्रशीर्षाय सहस्त्राक्षाय ते नमः ।
नमस्ते सहस्त्रपदेषु पुरुषाय नमोऽस्तु ते ॥
सहस्त्रनाम्ने देवेश प्रसीद त्वं ममाच्युत ।
अर्घ्यं गृहाण भगवन् सर्वकाम प्रदो भव ॥

प्रार्थयेत्–

भगवन् देव देवेश लोकनाथ जगत्पते ।
अक्षया संतति मेऽस्तु दामोदर नमोऽस्तु ते ॥

ततो धात्री पूजनम्–

धात्र्यै नमः नाम मंत्रेण षोडशोपचारैः संपूज्य ।

अङ्ग पूजा—विश्व रूपायै पादौ पूज०, सुरूपायै० कटी, अब्धि संभवायै० हृदयं पूज०, लोक मात्रे० मुखं पूज०, धात्र्यै नमः शिरः पूज०, ततोऽष्ट दिक्षु दीपान् बलिं च धृत्वा धात्र्यै नमः, सूत्रेण वेष्टयित्वा अष्टौ प्रदक्षिणां कृत्वा

नमस्कारान् च कुर्यात्। शान्त्यै नमः १, कान्त्यै नमः, २, मेधायै नमः, ३, प्रकृत्यै नमः, ४, विष्णुपत्न्यैनमः, ५, महालक्ष्म्यैनमः, ६, रमायै नमः, ७, कमलायै नमः, ८, इन्दिरायैनमः, ९, कल्याण्यै नमः, १०, कमनीयायै नमः, ११, सावित्र्यै नमः, १२, जगद्धात्र्यै नमः, १३, गायत्र्यै नमः, १४, धृत्यैनमः, १५, अव्यक्तायै नमः,१६।

धात्रि देवि नमस्तुभ्यं सर्व पापक्षयंकरि ।
वर्चस्वं कुरु मां देवि धनवन्तं तथा कुरू ॥
पुत्रान् पौत्रान्बलं प्रज्ञां देहि मे जगदीश्वरि ।
संवत्सर कृतं पापं दूरी कुरु ममाक्षये ॥ इति प्रार्थयेत्।

धात्री मूले सव्येन तर्पणं कुर्यात्—

पिता पितामहाश्चान्ये अपुत्रा ये च गोत्रिणः ।
वृक्ष योनिं गता ये च ये कीटत्त्वं गताः ॥१॥
तिर्यग्योनिं गता ये च ये च ब्रह्माण्ड मध्यगाः ।
पिशाचत्वं गता ये च ये च प्रेतत्वमागताः ॥२॥
ते पिबन्तु मया दत्तं धात्रीमूले ऽक्षयं पयः ॥
ते सर्वे तृप्तिमायान्तु धात्री मूले निषेचनात् ॥३॥

इति धात्री पूजा प्रयोगः ॥

अथ अश्वत्थ पूजन विधिः

आचम्य, प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य मम समस्त पापक्षय पूर्वकाभीष्ट सिद्धि द्वारा श्री परमेश्वर प्रीत्यर्थ मश्वत्थ पूजां करिष्ये इति सङ्कल्प्य षोडशोपचारैः पूजयेत—

आवाहनम्— अश्वत्थाय वरेण्याय सर्वैश्वर्य प्रदायिने ।
अन्ततः शिव रूपाय वृक्षराजाय ते नमः ॥

आसनम्— मूलतो ब्रह्म रूपाय मध्यतो विष्णुरूपिणे ।
नमो दुःस्वप्न नाशाय सुस्वप्न फलदायिने नमः ॥

पाद्यम्— अग्निगर्भः शमीगर्भो देव गर्भः प्रजापतिः ।
हिरण्य गर्भो यज्ञगर्भो भूगर्भो नमोऽस्तुते ॥

अर्घ्यम्— आयुर्वलं यशोवर्चः प्रजाः पशु वसूनि च ।
ब्रह्म प्रज्ञां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते ॥

आचमनीयम्— त्वं क्षीर फलकश्चैव शीतलश्च वनस्पते ।
त्वामाराध्य नरो विद्यां दैहिकामुष्मिकं फलम् ॥

स्नानम्— चलद्दलाय वृक्षाय सर्वदाश्रित विष्णवे ।
बोधि तत्त्वाय देवाय ह्यश्वत्थाय नमो नमः ॥

वस्त्रम्— एकादशात्म रुद्रोऽसि वसूनां च शिरोमणिः ।
नारायणोऽसि देवानां वृक्ष राजसि पिप्पल ॥

यज्ञोपवीतम्— क्षीरदस्त्वं च येनेह येन श्रीस्त्वां निषेवते ।
सत्येन तेन वृक्षेन्द्र मामपि श्री र्निषेवताम् ॥

चन्दनम्— श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं सुर श्रेष्ठ गृहाण देव पिप्पल ॥

पुष्पाणि— यं दृष्ट्वा मुच्यते रोगैः स्पृष्ट्वा पापैः प्रमुच्यते ।
यदाश्रया चिरञ्जीवी तमश्वत्थं नमाम्यहम् ॥

धूपम्— वनस्पति रसोद्भूतं सर्वौषधि विजृंभितः ।
आघ्रेयः सर्व देवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

दीपम्— साज्यं च वर्त्ति संयुक्तं बह्निना योजितं मया ।
दीपं गृहाण देवेश मम ज्ञानप्रदो भव ॥

नैवेद्यम्— नैवेद्यं गृह्यतां देव भक्तिं से ह्यचलां कुरु ।
ईप्सितं च वरं देहि परत्रेह परां गतिम् ॥

पूलीफलताम्बूलञ्च—
आयुः प्रजां धनं धान्यं सौभाग्यं सर्व संपदाम् ।
देहि देव महावृक्ष त्वामहं शरणङ्गतः ॥

दक्षिणा— ऋग्यजुः साम मंत्रात्मा सर्व रूपी परात्पर ।
अश्वत्थो वेद मूलो सा वृषिभिः प्रोच्यते सदा ॥

कर्पूरार्तिक्यम् कृत्वा—ठ

पुष्पाञ्जलिम्— अश्वत्थ यस्मात्त्वयि वृक्षराज,
नारायणस्तिष्ठति सर्वकाले ।

अन्तः श्रुतस्त्वं सततं तरूणां
धन्योऽसि चारिष्टविनाशकोऽसि ॥

इति पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा—सप्त प्रदक्षिणां कुर्यात् ।

यानि कानि च पापानि जन्मान्तर कृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणं पदे पदे ॥

इत्यश्वत्थ पूजनम् ।

अथ नवग्रह मङ्गलाष्टकम्

भास्वान्काश्यप गोत्रजोऽरुण रुचिर्यः सिंह राशीश्वरः, षड्त्रिस्थभोदश शोभनो गुरु शशी भौमेषु मित्रं सदा । शुक्रो मन्द रिपुः कलिङ्ग जनितश्चाग्नीश्वरो देवते, मध्यं वर्तुल पूर्व दिग्दिनकरः कुर्यात्सदा मङ्गलम् ॥१ ॥

चन्द्रः कर्कटक प्रभुः सितनिभश्चात्रेय गोत्रोद्भवः चाग्नेयश्चतुरस्त्रवारण मुखश्चापोप्युमाधीश्वरः । षट् सप्ताग्नि दशैक शोभन फलो शौरिः प्रियोऽर्को गुरुः, स्वामी यामुन देशजो हिमकरः कुर्यात्सदा मङ्गलम् ॥२ ॥

भौमो दक्षिणदिक्त्रिकोण यमदिग्विघ्नेश्वरो रक्तभः, स्वामी वृश्चिक मेषयोः सुर गुरुश्चार्कः शशी सौहृदः । सौरषड्त्रिफलप्रदश्च बसुधा स्कन्दौ क्रमाद्देवते, भारद्वाज कुलोद्भवः क्षिति सुतः कुर्यात्सदामङ्गलम् ॥३ ॥

सौम्योदङ्मुखः पीतवर्णः मगधश्चात्रेय गोत्रोद्भवः, वाणेशान दिशः सुहृच्छनि भृगुः शत्रुः सदाशीतगुः, कन्या युग्म पतिर्दशाष्ट चतुरः षण्नेत्रकः शोभनो, विष्णु पौरुष देवते शशि सुतः कुर्यात्सदा मङ्गलम् ॥४ ॥

जीवश्चांगिर गोत्रजोत्तर मुखो दीर्घोत्तरा संस्थितः पीतोऽश्वत्थ समिच्चसिन्धु जनितश्चापोऽथ मीनाधिपः । सूर्येन्दु क्षितिज प्रियो बुध सितौशत्रू समाश्चापरे, सप्ताङ्क द्विभवः शुभः सुर गुरुः कुर्यात्सदा मङ्गलम् ॥५ ॥

शुक्रो भार्गव गोत्रजः सितनिभः प्राची मुखः पूर्व दिक्पश्चाङ्को वृषभस्तुलाधिप महाराष्ट्राधिपोदुम्बरः इन्द्राणी मघवानुभौ बुध शनी मित्रर्कचन्द्रौ रिपू, षष्ठो द्विर्दश वर्जितो भृगु सुतः कुर्यात्सदा मङ्गलम् ॥६ ॥

मन्दः कृष्णानिभस्तु पश्चिम मुखः सौराष्ट्रकः काश्यपः, स्वामी नक्रभ कुम्भयो र्बुधसितौ मित्रे समश्चाङ्गिराः । स्थानं पश्चिम दिक् प्रजापति यमौ देवौ धनुष्यासनः, षट् त्रिस्थः शुभ कृच्छनि रवि सुतः कुर्यात्सदा मङ्गलम् ॥७ ॥

राहुः सिंहलदेशजश्च निर्ऋतिः कृष्णाङ्ग शूर्पासनो, यः पैठीनसि गोत्र संभव समिद् दूर्वामुखो दक्षिणः । यः सर्पाद्य धिदैवते च निर्ऋतिः प्रत्यऽधिदेवः सदा, षट् त्रिस्थः शुभकृच्च सिंहिका सुतः कुर्यात्सदामङ्गलम् ॥८ ॥

केतु र्जैमिन गोत्रजः कुश समिद्वायव्य कोणे स्थितः, चित्राङ्ग ध्वज लांछनो हिम गुहो यो दक्षिणाशामुखः । ब्रह्मा चैव सचित्र चित्र सहितः प्रत्यधिदेव सदा, षट् त्रिस्थः शुभ कृच्च बर्वरपतिः कुर्यात्सदा मङ्गलम् ॥९ ॥

इत्येतद्ग्रहमङ्गलाष्टकमिदं लोकोपकार प्रदं, पापौघ प्रशमं महच्छुभकरं सौभाग्य संवर्धनम् । यः प्रातः श्रृणुयात्पठत्यनुदिनं श्री कालिदासोदितं, स्तोत्रं मङ्गलदायकं शुभकरं प्राप्नोत्यभीष्टं फलम् ।

इति नवग्रहमङ्गलाष्टकानि

अथ
देवपूजा पद्धतिः

अष्टसिद्धियां— अणिमा महिमा चेति लघिमा गरिमा तथा ।
प्राप्तिःप्राकाम्यमीशित्वं वशित्वं चाष्ट सिद्धयः ॥

नवनिधिः— महापद्मश्च पद्मश्च शंखो मकर कच्छपौ ।
मुकुन्द-कुन्द नीलाश्च खर्वश्च निधयो नव ॥

नवधाभक्ति— श्रवणं कीर्तनं केलिः स्मरणं पादसेवनम् ।
अर्चणं वन्दनं दास्यं-सख्यमात्मनिवेदनम् ॥

एकादशरुद्र— अजैकपादहिर्बुध्न्यो विरूपाक्षोऽथ रैवतः ।
हरश्च बहुरूपश्च त्र्यम्बकश्च सुरेश्वरः ॥
सावित्रश्च जयन्तश्च पिनाकी चापराजितः ।
एते रुद्राः समाख्याताः एकादशा गणेश्वराः ॥

अथवा

रुद्रकल्पद्रुम—
अघोरः पशुपतिः शर्वः विरूपो विश्वरूपः त्र्यम्बकः ।
कपर्दी, भैरवः शूलपाणिः ईशानः महेशान इति एकादश ।

पंचरुद्र— सद्योजातं वामदेवमघोरं तदनन्तरम् ।
ततस्तत्पुरुषं प्रोक्तमीशानं पञ्चकं क्रमात् ॥

द्वादशसूर्य— धाताऽर्यमा च सविता वरुणोऽंशो भगस्तथा ।
इन्द्रो विवस्वान् पूषा च त्वष्टा पर्जन्य एव च ।
इत्येते द्वादशादित्याः ज्वलन्ते दीप्त तेजसः ॥

———

अथ देवपूजा प्रकरणम्

नाङ्गुष्ठैर्मर्दयेद्देवं नाधः पुष्पैः समर्चयेत् ।
कुशाग्रैर्न क्षिपेत्तोयं वज्रपातसमं भवेत् ॥

देवता को अंगूठे से नहीं रगड़े और अधोमुख पुष्प नहीं चढ़ावे तथा कुशा के अग्रभाग से देवताओं पर जल नहीं छिड़के ऐसा करना वज्रपातक तुल्य है।

त्रिभिर्देवेभ्यः प्रक्षालयेत् सकृत् पितृभ्यः ॥

देवताओं को तीन बार और पितरों को एक बार प्रक्षालित कर अक्षत चढ़ावें।

पूजा में त्याज्य-वस्तु

नाक्षतैरर्चयेद्विष्णुं न तुलस्या गणाधिपम् ।
न दूर्वया यजेद् दुर्गां विल्वपत्रैश्च भास्करम् ॥
दिवाकरं वृन्तहीनैर्विल्वपत्रैः समर्चयेत् ॥

विष्णु भगवान् को चावल, गणेशजी को तुलसी, दुर्गा देवी को दूर्वा और सूर्यनारायण को विल्वपत्र नहीं चढ़ावे। किन्तु डण्डी तोड़कर विल्वपत्र सूर्यनारायण को चढ़ा सकते हैं।

पुष्पज्ञान

अधोवस्त्रधृतं चैव जलेऽन्तः क्षालितं च यत् ।
देवतास्तन्न गृह्णन्ति पुष्पं निर्माल्यतां गतम् ॥

धोती में रखा हुआ और जल में डुबोया हुआ पुष्प निर्माल्य हो जाता है। इसलिये देवता उसे ग्रहण नहीं करते हैं।

देवत्याज्य-पुष्प

शिवे विसर्जयेत् कुन्दमुन्मत्तं च तथा हरौ ।
देवनीमर्कमन्दारौ सूर्यस्य तगरं तथा ॥

शिव जी के लिये कुन्द, विष्णु भगवान को धतूरा, देवीमाता को आक तथा मदार और सूर्य-नारायण को तगर का पुष्प नहीं चढ़ावें।

तुलसी-मञ्जरीभिर्यः कुर्यात् हरिहरार्चनम् ।
न स गर्भगृहं याति मुक्तिभागी न संशयः ॥

तुलसी की मञ्जरी से जो विष्णु भगवान् तथा शंकरजी की पूजा करता है। अथवा तुलसी की मंजरियों से जो हरि-हरात्मक भगवान् की अर्चना करता है, उसको गर्भ में वास नहीं करना पड़ता, वह अवश्यक मुक्ति पाता है।

पत्रं वा यदि वा पुष्पं फलं नेष्टमधोमुखम् ।
यथोत्पन्नं तथा देयं विल्वपत्रमधोमुखम् ॥

पत्र, पुष्प तथा फल का मुख नीचे करके नहीं चढ़ावें। वे जैसे उत्पन्न होते हैं, उनको वैसे ही चढ़ाना चाहिए। किन्तु विल्वपत्र उल्टा करके चढ़ावें।

पर्णमूले भवेद् व्याधिः पर्णाग्रे पापसम्भवः ।
जीर्णपत्रं हरत्यायुः शिरा वुद्धिविनाशिनी ॥

पान की डंडी से व्याधि और अग्रभाग से पाप होता है। सड़ा पान आयु और शिरा बुद्धि को नष्ट करती है। इसलिये डण्डी अग्रभाग और शिर पान में से निकाल देना आवश्यक हैं।

वृक्ष से तुलसी ग्रहण-मन्त्र

तुलस्यमृतजन्मासि सदा त्वं केशवप्रिया ।
केशवार्थे चिनोमि त्वां वरदा भव शोभने ॥
तुलसी हेम रूपासि कृष्णरूपेण मंजरी ।
शालिग्राम हितार्थाय मम दोषो न दीयते ॥
विष्णुप्रीतिकरे मातर्नमस्ते तुलसीश्वरि ।
पवित्रीकुरु मेऽंगानि विष्ण्वंक हर्षकारिणि ॥

संक्रान्ति, द्वादशी, अमवस्या, पूर्णिमा, रविवार और सन्ध्या के समय तुलसी तोड़ना निषिद्ध है। यदि विशेष आवश्यक हो तो नीचे लिखे मन्त्र से तोड़ सकते हैं।

त्वदंगसम्भवेन त्वां पूजयामि यथा हरिम् ।
तथा नाशय विघ्नं मे ततो यान्ति परांगतिम् ॥

पूर्वाभिमुख बैठकर बाईं ओर घण्टा, धूप तथा दाहिनी ओर शंख जल-पात्र तथा पूजन की सामग्री रखकर आचमन, प्राणायाम करके संकल्प वाक्य के अन्त में "शालिग्राम पूजनं तदंगत्वेन गणपत्यादिदेवानां मण्डले स्थापनं पूजनञ्च करिष्ये" कहकर जलादि छोड़ें।

देवदीप–पूजा

घृत का दीपक अपनी बाईं तरफ तथा तेल का दाहिनी तरफ पूर्व या उत्तर दिशा की ओर बत्ती करके चावल आदि पर रख प्रज्वलितकर हाथ धोकर नीचे लिखी प्रार्थना करें।

भो दीप ! देवरूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत् ।
यावत्कर्मसमाप्तिः स्यात् तावत्त्वं सुस्थितो भव ॥

देवघण्टा—पूजनं

आवाहन के लिये घंटा बजाने के पश्चात् घण्टा का पूजन करें।

आगमनार्थन्तु देवानां निगमनार्थन्तु रक्षसाम् ।
घण्टा-नादं प्रकुर्वीत पश्चात् घण्टां प्रपूजयेत् ॥

देवशंख—पूजनं

शंख में जल भरकर शंख-मुद्रा दिखा कर पूजा कर नीचे लिखी प्रार्थना करें।

त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विष्णुना विधृतः करे ।
निर्मितः सर्वदेवैश्च पाञ्चजन्य ! नमोऽस्तुते ॥

देव-पूजनं

देवपूजने उपचाराः निरूप्यन्ते—

पाद्यम्—पाद प्रक्षालनार्थमुदकम् । अर्घः = रक्तविल्वाक्षतै पुष्पैः दधिदूर्वाकुशैस्तिलैः । सामान्यः सर्वदेवानामर्घोऽयं परिकीर्तितः । **आचमनीयम्** = आचमनार्थं शुद्धोदकम् ॥ **स्नानीयम्** = घृत-तैल-दधि-क्षीर-इक्षुरस-जल-प्रभृति स्नान द्रव्याणि यथाविहितानि ॥ **गन्धम्** = चन्दन अगरु-कर्पूर-कुङ्कुमाऽन्यतमस्य समुदितस्य वा पङ्कम् ॥ **पुष्पाणि** = त्वरण्यादि-वाटिका-सम्भवानि सुरभीणि निश्छिद्राणि प्रोक्षितानि ॥ करवीरनाग-पुन्नाग-मल्लिका-अशोक-चम्बक- रक्तोत्पलनीलोत्पलव- कुल-पद्म पुष्पाणि ॥ **धूपम्** = धूपः सघृतगुग्गलुः **दीपम्** = घृतं विहितं शिवभिन्ने तैलमपि । **नैवेद्यम्** = भक्ष्य-भोज्य-कन्दमूल-फलान्नपानकादीनि ॥

गौ के शुद्ध गोबर से लिपी हुई वा तीर्थ जलों से प्रोक्षण की हुई पवित्र-भूमि में सर्व प्रथम गेहूं के चूर्ण का चौक लगावे। तदनन्तर-सुन्दर चौकी वा आम्र पट्टा पर यथाविधिः देवताओं की स्थापना करे। यजमान सुमुहूर्त में मंगल-स्नान-करके, स्वच्छ पवित्र वस्त्रोपवस्त्रादि धारण कर, पूर्वाभिमुख होकर अपने आसन पर बैठे और शुद्ध-जल का एक पात्र अपने दक्षिण हाथ की तरफ रक्खें।

इसके अनन्तर यजमान बाएं-हाथ में जल लेकर सीधे हाथ की [अनामिका + अंगुष्ठ मिली मुद्रा] अंगुलियों से अपने शरीर एवं पूजन सामग्रियों पर अधो-लिखित मन्त्र बोलता हुआ जल छिड़के—

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं, सः बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥ ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ॥३ ॥

तदनन्तर इसी प्रकार मार्जन द्वारा अष्ट-अंग शुद्धि करे—

मन्त्रो-यथा-ॐ आपोहिष्ठामयो भुवः ॥१॥ ॐ तानऽऊर्ज्जे दधातन ॥२॥ ॐ महेरणाय चक्षसे ॥३॥ ॐ यो वः शिवतमोरसः ॥४॥ ॐ तस्य भाजयतेह नः ॥५॥ ॐ उशतीरिव मातरः ॥६॥ ॐ तस्माऽअरंगमामवः ॥७॥

भूमौ जल-प्रोक्षणम्

ॐ यस्य क्षयाय जिन्नवथ ॥८॥ [शिरसि] ॐ आपोजनयथाचनः ॥९॥

पुनः यजमान नीचे-लिखे मन्त्र से शिखा-बन्धन करे—

ॐ मानस्तोके तनये मानऽआयुषि मानो गोषुमानोऽअश्वेषुरीरिषः । मानो वीरान्- रुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सद्मित्वा हवामहे ॥

पुनः यजमान हाथ धोकर सीधे-हाथ की अंजलि द्वारा तीन आचमन करे—

आचमन

ॐ केशवाय नमः स्वाहा ॥१॥

ॐ नारायणाय नमः स्वाहा ॥२॥

ॐ माधवाय नमः स्वाहा ॥३॥

[हस्तप्रक्षालन करे] ॐ गोविन्दाय नमः ॥

पुनः पृथ्वी पर जल छोड़ता हुआ विनियोग पढ़े—

ॐ पृथ्वीतिमंत्रस्य मेरुपृष्ठऋषिः सुतलं छन्दः कूर्मो देवता आसने विनियोगः ॥

नीचे लिखे मन्त्र से आसन पर जल छिड़के—

"ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोकाः देवि त्वं विष्णुना धृता । त्वञ्च धारय मां देवि ! पवित्रं कुरु चासनम् ॥"

अथ श्रीगौरी-वन्दना

ॐ सर्वमंगलमांगल्ये ! शिवे ! सर्वार्थसाधिके !
शरण्ये त्र्यम्बके ! गौरि नारायणि ! नमोऽस्तुते ॥

शान्ति-पाठः (ऋग्वेदोक्त)

ॐ स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः । स्वस्तिः पूषा असुरो दधातु नः स्वस्तिद्यावा पृथिवी सुचेतना ॥१॥ स्वस्तये

वायुमुपब्रवामहे सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः । बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥२ ॥ विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्नि स्वस्तये । देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्तिनो रुद्रः पात्वहंसः ॥३ ॥ स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति । स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि ॥४ ॥ स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्य्यान्द्रमसाविव । पुनर्ददताऽघ्नता जानता संगमेमहि ॥५ ॥ स्वस्त्ययनं तार्क्ष्यमरिष्टनेमिं महद्भूतं वायसं देवतानाम् । असुरघ्नमिन्द्रसखं समत्सु वृहद्यशो नावमिवारुहेम ॥६ ॥ अंहो मुचमांगिरसं गमञ्च स्वस्त्या त्रेयम्मनसा च तार्क्ष्यम् । प्रयतपाणिः शरणं प्रपद्ये स्वस्ति सम्बाधेष्वभयन्नो अस्तु ॥७ ॥

आनो भद्रसूक्तम्

पुनः यजमान हाथ में अक्षत लेकर 'भद्रसूक्त' पढ़े—

ओं आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः देवानो यथा सद्मिद्वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे ॥१ ॥ देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवाना ᳪ रातिरभिनो निवर्तताम् । देवानां सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुःप्रतिरन्तु जीवसे ॥२ ॥ तान्पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदितिं दक्षमस्त्रिधम् । अर्यमणं वरुण ᳪ सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥३ ॥ तन्नो वातो मयो भुवातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः । तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयो भुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम् ॥४ ॥ तमीशानं जगतस्तस्थुषपस्पतिं धियंजिन्वमवसे हूमहे वयम् ॥ पूषा नो यथावेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥५ ॥ स्वस्तिन इन्द्रोवृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु ॥६ ॥ पृषदश्वामरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो विदथेषु जग्मयः । अग्निजिह्वां मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसागमन्निह ॥७ ॥ भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा ᳪ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥८ ॥ शतमिन्नु शरदोअन्ति देवा यत्रानश्चक्रा जरसं तनूनाम् । पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मानो मद्ध्या रीरिषतायुर्गन्तोः ॥९ ॥ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः । विश्वेदेवा अदितिः पंचजना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् ॥१० ॥

द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शांतिरोषधयः शांतिः। वनस्पतयः शांतिर्विश्वेदेवाः शांतिर्ब्रह्म शांतिः। सर्वँ शांतिःशांति रेव शांतिः सामा शांतिरेधि ॥१२॥ यतोयतः समीहसे ततो नोअभयंकुरु। शन्नः कुरु प्रजाभ्यो ऽभयन्न पशुभ्यः ॥१२॥ सुशांतिर्भवतु ॥

अथ गुरु—वन्दना

ॐ गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात्परब्रह्म, तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥१॥

अखण्ड-मण्डलाकरं, व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥२॥

अज्ञानतिमिरान्धस्य, ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन, तस्मै श्री गुरवे नमः ॥३॥

श्रीमन्महागणाधिपतये नमः ॥१॥ श्रीलक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः ॥२॥ श्री उमामहेश्वराभ्यां नमः ॥३॥ श्री शचीपुरन्दराभ्यां नमः ॥४॥ वाणी-हिरण्यगर्भाभ्यां नमः ॥५॥ मातृ पितृचरणकमलेभ्यो नमः ॥६॥ इष्टदेवताभ्यो नमः ॥७॥ कुलदेवताभ्यो नमः ॥८॥ ग्रामदेवताभ्यो नमः ॥९॥ वास्तुदेवताभ्यो नमः ॥१०॥ स्थानदेवताभ्यो नमः ॥११॥ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ॥१२॥ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः ॥१३॥ सर्वेभ्यो परमर्षिभ्यो नमः ॥१४॥ श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमो नमः ॥१५॥ ॐ परब्रह्मणे नमः ॥१६॥

स्वस्तिवाचनम् (यजुर्वेदोक्त)

(आनोभद्रसूक्त न पढ़ना चाहें तो स्वस्तिवाचन पढ़ें)

हरिः ॐ स्वस्तिन इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु, ॥१॥ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥२॥ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णो र्ध्रुवोसि। वैष्णवमसि विष्णवे त्वा ॥३॥ अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता रुद्रा देवतादित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता

वरुणो देवता ॥४॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शांतिः पृथिवी शांतिरापः शांतिरोषधयः शांतिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मा शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शांतिः सामा शांतिरेधि ॥५॥ ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्नआसुव ॥६॥ एतन्ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे । तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव ॥७॥ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनो त्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमं दधातु । विश्वेदेवा स इहमादयन्ता मो-३ म्प्रतिष्ठ ॥८॥ एष वै प्रतिष्ठ नाम यज्ञो यत्रैतेन यज्ञेन यजन्तेन सर्वमेव प्रतिष्ठितं भवति ॥९॥ ॐ ३।न्तिः ३॥

ॐ 'ऋद्धि-बुद्धि सहिताय श्रीमन्महागणाधिपतये नमः—इस प्रकार कहता हुआ यजमान, अक्षतों को 'स्वस्तिक-आसन' पर विराजमान श्रीगणेशजी के निकट रख देवे और हाथ जोड़कर श्रीगणेशादि देवताओं का ध्यान करे।

पुनः यजमान जल-अक्षत-द्रव्य हाथ में लेकर प्रधान संकल्प करे—

प्रधान संकल्पः

ॐ विष्णु र्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्री ब्रह्मणोऽह्नि-द्वितीये प्रहरार्द्धे, श्रीश्वेतवाराह-कल्पे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टा- विंशतितमेकलियुगे, कलिप्रथमचरणे, भूर्लोके, जम्बूद्वीपे, भरतखण्डे, भारतवर्षे, आर्यावर्तै- कदेशान्तर्गते श्री विक्रमादित्यराज्यतोऽ- मुकसंख्याकेऽमुकनाम्नि सम्वत्सरे, अमुकायनेऽमुकसंख्याकेऽमुकनाम्नि, श्री गगनचक्रचूड़ामणावमुकर्तौ, मांगल्यप्रदेऽमुक मासेऽमुकपक्षेऽमुकतिथाव- मुकवासरे, प्रवर्तमानेऽमुकनक्षत्रेऽमुक राशिस्थिते श्रीदेवगुरौ ग्रहेषु यथा- राशिस्थानस्थितेषु सत्सु, एवं ग्रहगुणविशेषणविशिष्यायां शुभ-तिथौ, अमुक- गोत्रोत्पन्नोऽमुक शाखाऽध्यायी, अमुकनाम (शर्मा-वर्मा-गुप्तोऽहं) मम सकुटुम्बस्य सर्वारिष्ट-निवारणार्थमखण्ड-लक्ष्मी-प्राप्त्यर्थञ्च (अमुकमनो- कामनासिद्धयर्थं) श्री गण- पत्यादि-देवतानां पूजनमहं करिष्ये ।

गणपति पूजनं—आवाहनम्

ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनांत्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसोमम । आहमजानि गर्भधमात्वंजासि गर्भधम् ॥

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः ।

लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥
शुक्लाम्वर धरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्व विघ्नोप शान्तये ॥
अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः ।
सर्वविघ्न हरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ॥
सर्व मंगल मांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममंगलम् ।
येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनं हरिः ॥
तदेव लग्नं सुदिनं तदेव तारावलं चन्द्रबलं तदेव ।
विद्यावलं देवबलं तदैव लक्ष्मीपते तेंऽघ्रियुगं स्मरामि ॥
लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः ।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥
यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीःविजयो भूतिः ध्रुवा नीतिः मतिर्मम ॥
सर्वेष्वारम्भकार्येषु त्रयः त्रिभुवनेश्वरः ।
देवाः दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशान जनार्दनाः ॥
विश्वेशः माधवं ढुण्डि दण्डपाणिं च भैरवम् ।
वन्दे काशीं गुहां गंगां भवानीं मणिकर्णिकाम् ॥
वक्रतुण्डमहाकाय कोटिसूर्य समप्रभ ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्व कार्येषु सर्वदा ॥
श्री गणेशाम्बिकाभ्यां नमः ॥
ॐ नमो महागणपतये ऋद्धि-बुद्धिसहिताय आवाहयामि स्थापयामि ॥

उक्त मन्त्र से पुष्प अक्षत गणेशजी पर चढ़ावे ।

गणपति अम्बिका—ध्यान

सुपारी पर कलावा लपेट चावलों पर स्थापित कर नीचे लिखा ध्यान करके आवाहन मंत्र से अक्षत छोड़ें। मूर्ति हो तो पुष्प छोड़े।

एकदन्तं शूर्पकर्णं गजवक्त्रं चतुर्भुजम्। पाशांकुशधरं देवं ध्यायेत् सिद्धिविनायकम् ॥ गजाननं भूतगणादिसेवितं कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम्। उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वर-पाद पंकजम्।

ॐ अम्बे अम्बिके अम्वालिके न मानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ॥ आवाहनं—आगच्छ भगवन् देव ! स्थाने चात्र स्थिरो भव। यावत्पूजां करिष्यामि तावत्त्वं सन्निधोभव ॥ विनायक नमस्तेऽस्तु उमामल समुद्भव। इमां मया कृतां पूजां गृहाण सुर सत्तम् ॥ आवा० ॥ प्रतिष्ठा—अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च। अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ॥ गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, प्रतिष्ठापयामि।

आसनं—रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्वसौख्यकरं शुभम्। आसनञ्च मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ॥ गणेशाम्बिकाभ्यां नमः आ० समर्पयामि।

पाद्यं— गौरीप्रिय नमस्तेऽस्तु शंकरप्रियसर्वदा।
भक्त्या पाद्यं मया दत्तं गृहाण प्रणतप्रिय ॥
उष्णोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्यसंयुतम्।
पादप्रक्षालनार्थाय दत्तं ते प्रतिगृह्यताम् ॥ पा० स०।

अर्घ्यं— अर्घ्यं गृहाण देवेश गन्धपुष्पाक्षतैः सह।
करुणां कुरु मे देव ! गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ॥
॥आ० स० ॥

आचमनं— सर्वतीर्थसमायुक्तं सुगन्धि निर्मलं जलम्।
आचम्यतां मया दत्तं गृहीत्वा परमेश्वर ॥ अ० स०।

स्नानं— गंगा-सरस्वती-रेवा-पयोष्णी-नर्मदाजलैः।
स्नापितोऽसि मया देव तथा शान्तिं कुरुष्व मे ॥
॥ स्ना० स०।

दुग्धस्नानं— कामधेनुसमुत्पन्नं सर्वेषां जीवनं परम्।
पावनं यज्ञहेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम् ॥
॥ दु० स्ना० पुनः जलं स०।

दधिस्नानं— पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम् ।
दध्यानीतं मया देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
गणेशाम्बिकाभ्यां नमः द० स्नानं० ।

घृतस्नानं— नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसन्तोषकारकम् ।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
घृत० स्ना० स० पु० ज० स० ।

मधुस्नानं— तरुपुष्पसमुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु ।
तेजःपुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
गणेशाम्बिकाभ्यां नमः मधुस्नानं पु० ज० स० ।

शर्करास्नानं— इक्षु सारसमुद्भूता शर्करा पुष्टिकारिका ।
मलापहारिका दिव्या स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
गणेशाम्बिकाभ्यां नमः श० स्ना० शुद्ध स्नानम् स० ।

पञ्चामृतस्नानं— पयो दधि घृतं चैव मधु च शर्करायुतम् ।
पंचामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
गणेशाम्बिकाभ्यां नमः प० स्ना० स० शुद्ध स्नानं
सम० ।

शुद्धस्नानं— मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्वपापहरं शुभम् ।
तदिदं कल्पितं देव ! स्नानार्थं प्रति गृह्यताम् ॥

वस्त्रं— सर्वभूषाधिके सौम्ये लोकलज्जानिवारणे ।
मयोपपादिते तुभ्यं वाससी प्रतिगृह्यताम् ॥ वस्त्रं स०

उपवस्त्रं— सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमाऽसदत्स्वः ।
वसोअग्ने विश्वरूप ᳲ सं व्यवस्व विभावसो ॥
। उ० स० ।

यज्ञोपवीतं— नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम् ।
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ॥ यज्ञो० आच० ।

मधुपर्कं— कांस्ये विहितो दधिमध्वाज्यसंयुतः ।
मधुपर्को मयानीतः पूजार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
। म० आच० ।

गन्धं— श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ ! चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ।। गं० स० ।

रक्तचन्दनं— रक्तचन्दनसंमिश्रं पारिजातसमुद्भवम् ।
मयादत्तं गृहाणाशु चन्दनं गन्धसंयुतम् ।। र० स० ।

रोली— कुङ्कुमं कामनादिव्यं कामनाकामसम्भवम् ।
कुङ्कुमेनार्चितो देव गृहाण परमेश्वर ! ।। कुं० स० ।

सिन्दूरं— सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्धनम् ।
शुभदं कामदं चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् । सि० स० ।

अक्षतं— अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ताः सुशोभिताः ।
मया निवेदिताः भक्त्या गृहाण परमेश्वर ।। अ० स० ।

पुष्पं— पुष्पैर्नानाविधैर्दिव्यैः कुमुदैरथ चम्पकैः ।
पूजार्थं नीयते तुभ्यं पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम् ।। पु० स० ।

माला— माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो ।
मयानीतानि पुष्पाणि गृहाण परमेश्वर ।। पु० मा० स० ।

बिल्वपत्रं— त्रिशाखैर्बिल्वपत्रैश्च अच्छिद्रैः कोमलैः शुभैः ।
तव पूजां करिष्यामि गृहाण परमेश्वर ! बि० प० स० ।

दूर्वा— त्वं दूर्वेऽमृतजन्मासि वन्दितासि सुरैरपि ।
सौभाग्यं सन्ततिं देहि सर्व कार्यकरी भव ।।
। दूर्वा० स० ।

दूर्वांकुरं— दूर्वांकुरान् सुहारितानमृतान् मंगलप्रदान् ।
आनीतांस्तव पूजार्थं गृहाण गणनायक । दूर्वा० स० ।

दूर्वांकुरपूजा—ॐ गणाधिपनमस्तेऽस्तु । ॐ उमापुत्र नमस्ते० । ॐ अघनाशन नमस्ते० । ॐ विनायक नमस्ते० । ईशपुत्र नमस्ते० । सर्वसिद्धिप्रदायक नमस्ते० । एकदन्त नमस्ते० । इभवक्त्र नमस्ते० । मूषकवाहन नमस्ते० । कुमारगुरोः तुभ्यं नमस्ते । चतुर्थीश नमस्ते० । ॐ काण्डात्कण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि । एवानो दूर्वे प्रतनुसहस्रेण शतेन च ।

शमीपत्रं— शमी शमय मे पापं शमी लोहितकंटका ।।
धारिण्यर्जुनवाणानां रामस्य प्रतिवादिनी ।। श० स० ।

आभूषणं— अलंकरान्महादिव्यान्नानारत्न-विनिर्मितान् ।
गृहाण देवदेवेश ! प्रसीद परमेश्वर ॥ आ० स० ।

अंवीरगुलालं— अंवीरं च गुलालं च चोवा चन्दनमेव च ।
अंवीरेणार्चितो देव ! अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
गणेशाम्बिकाभ्यां नमः अ० स० ।

सुगन्धतैलं— चम्पकाशोकबकुलमालतीमोगरादिभिः ।
वासितं स्निग्धताहेतुं तैलं चारु प्रगृह्यताम् ॥ सु० स० ।

धूपं— वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ धूपं स० ।

दीपं— आज्यं च वर्तिसंयुक्तं बह्निना योजितं मया ।
दीपं गृहाण देवेश ! त्रैलोक्यतिमिरापहम् ॥ दी० स० ।

नैवेद्यं— शर्कराघृतसंयुक्तं मधुरं स्वादु चोत्तमम् ।
उपहार समायमुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ।
। नै० निवेदयामि ।

मध्ये पानीयं— अतितृप्तिकरं तोयं सुगन्धि च पिवेच्छया ।
त्वयि तृप्ते जगत्तृप्तं नित्यतृप्तं महात्मनि ॥
गणेशाम्बिकाभ्यां नमः म० पा० स० ।

ऋतुफलं— नारिकेलफलं जम्बूफलं नारंगमुत्तमम् ।
कूष्माण्डं पुरतोभक्त्या कल्पितं प्रतिगृह्यताम् ॥
ऋ० स० ।

आचमनं— गङ्गाजलं समानीतं सुवर्णकलशे स्थितम् ।
आचम्यतां सुरश्रेष्ठ ! शुद्धमाचमनीयकम् ॥
आ० स० ।

अ० फलं— इदं फलं मया देव ! स्थापितं पुरतस्तव ।
तेन मे सफला वाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥

ताम्बूलपूगीफलं— पूगीफलं महादिव्यं नागवल्लीदलयुतम् ।
एलाचूर्णादिसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥
गणेशाम्बिकाभ्यां नमः ता० स० ।

दक्षिणा— हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ।
अनन्तं पुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
द० द्रव्यं स० ।

आरती— चन्द्रादित्यौ च धरणी विद्युदग्निस्तथैव च ।
त्वमेव सर्वज्योतींषि आर्तिक्यं प्रतिगृह्यताम् ॥
आ० स० ।

मन्त्रपुष्पांजलिः

ॐ निषुसीद गणपते गणेशत्वामाहुर्विप्रतमं कवीनाम् । न ऋते त्वत् क्रियते किंचनारे महामर्कं मघवन् चित्रमर्चम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ऋद्धिबुद्धि सहिताय श्रीमन्महागणपतये नमः ॥ मन्त्रपुष्पांजलिं समर्पयामि ॥

नानासुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च । पुष्पाञ्जलिर्मया दत्ता गृहाण परमेश्वर ! ॥ पुं० स० ।

प्रार्थना—रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष ! रक्ष त्रैलोक्य रक्षक ! भक्तानामभयं कर्त्ता त्राता भव भवार्णवात् ॥

गणेशजी की प्रार्थना

ॐ भक्तार्ति नाशन पराय गणेश्वराय ।
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय ।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय ।
भक्तप्रसन्न वरदाय नमो नमस्ते ॥१॥
विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय ।
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ।
नागाननाय सितसर्प विभूषिताय ।
गौरीसुताय गणनाथ ! नमो नमस्ते ॥२॥

उपर्युक्त मन्त्र पढ़ कर गणेश जी की प्रार्थना करे।

अनया पूजया गणेशाम्बिके प्रीयेतां न मम ॥

कलश-पूजनम्

गणपति वेदी पटा पर बनावे उसी पर अष्टदल कमल बनाकर धान्य या चावल रखकर उस पर कलश की स्थापना करे।

भूमि स्पर्श—ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री । पृथिवीं यच्छ दृ ँ ह पृथिवीं मा हिँ सीः ॥ भूमी का स्पर्श करे।

धान्य प्रक्षेप—ॐधान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणाय त्वा दानाय त्वा व्यानाय त्वा। दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धान्देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोऽसि ॥

(कलश के नीचे रखे हुए चावलों का स्पर्श करे।)

सप्तधान्य पर कलशस्थापन—ॐ आजिघ्र कलशं मह्यं त्वा विशन्त्विन्दवः । पुनरूर्जा निवर्तस्व सा नः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्मा विशताद्रयिः ॥

जल—ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनीस्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद ॥ (कलश में जल भरे)

गन्ध—गंधद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्व भूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥

सर्वौषधि—ॐ या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगम्पुरा । मनैनु वभ्रूणामहँ शतं धामानि सप्त च ॥

सप्तमृत्तिका—ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः ॥ स० म० स०

दूर्वा—ॐ काण्डात् काण्डात प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि । एवानो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च ॥ दू० स० ॥

पंच-पल्लव—ॐ अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृथा। गोभाज इत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम् ॥

पूगीफल—ॐ या फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्व ᳲ ह सः । पू० स० ।

पंच-रत्न—ॐ परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् । दधद्रत्नानि दाशुषे ॥ पं० समर्पयामि ॥

सुवर्ण या द्रव्य—ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ द्र० स० ॥

वस्त्र कलावा—ॐ वसो पवित्रमसि शतधारं वसोःपवित्रमसि सहस्रधारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोःपवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः । वस्त्रं समर्पयामि ॥

पूर्णपात्र—ॐ पूर्णादर्वि परा पत सुपूर्णा पुनरापत । वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्ज ᳲ शतक्रतो ॥ पू० पा० स० । पूर्ण पात्र को (कलश) पर रखे ।

श्रीफल—ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्म इषाण सर्वलोकम्म इषाण । श्रीफलं समर्पयामि ॥

नारियल पर लाल वस्त्र लपेट कर पूर्ण पात्र कर रख दे ।

वरुणावाहन—ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह वोध्युरुष ᳲ समान आयुः प्र मोषीः ॥ सायुधं सशक्तिकमावाहयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्री वरुण इहागच्छ, इह तिष्ठ, स्थापयामि, पूजयामि ॥ पंचोपचारैः सम्पूज्य—

प्रतिष्ठा—ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञᳲ समिमं दधातु । विश्वे देवा स इह मादयन्ता मो ३ म्प्रतिष्ठ ॥

अपाम्पतये कलशाय नमः । कलशे वरुणाद्यावाहिताः देवताः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु ॥

कलशाभिमन्त्रणम्

गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् संनिधिं कुरु ॥

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः ।
मूल तस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ।
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा ।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ।
अंगैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः ।
अत्र गायत्री सावित्री शान्ति पुष्टिकरी तथा ॥
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः ॥

ऐसा कहकर कलश का पूजन करे।

कलश की प्रार्थना

देवदानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ ।

उत्पन्नोऽसि यदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम् ।
त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः ॥
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ।
शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ।
आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः ।
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः ।
त्वत्प्रसादादिमां पूजां कर्तुमीहे जलोद्भव ।
सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ॥
नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय सुश्वेतहाराय सुमङ्गलाय ।
सुपाशहस्ताय झषासनाय जलाधिनाथाय नमो नमस्ते ॥
पाशपाणे नमस्तुभ्यं पद्मिनीजीवनायक ।
पुण्याहवाचनं यावत् तावत् त्वं सुस्थिरो भव ॥

पुण्याहवाचनम्

संपूज्य गन्धमाल्याद्यैर्ब्राह्मणान् स्वस्ति वाचयेत् ।
धर्मकर्मणि मांगल्ये संग्रामेऽद्भुतदर्शने ॥

अर्थात् पहले ब्राह्मणों का वरण करके स्वस्तिवाचन कराना चाहिये। एतदर्थ एक कलश तथा दो पात्र होने चाहियें। पुण्याहवाचन कलश का भी स्थापन पूजन हो चुका है। अब एक अभिषेक पात्र कटोरी दूसरा साधारण त्याज्य पात्र या दोनों भी चाहिएं। कई आचार्य भूमि पर भी त्याग करा देते हैं।

अवनिकृतजानुमण्डलः कमलमुकुलसदृशमंजलिं शिरस्याधाय दक्षिणेन पाणिना ताम्रकलशं सश्रीफलं धारयेत् ॥

अर्थात् यजमान दोनों गोडों को जमीन पर टेक देवे (कहीं पर दक्षिण जानु ही टिकाया करते हैं) पीछे मुकुलाकार अंजलि करके उसमें वह ताम्रपात्र कलश नारियल सहित धारण करे, जिसका पूजन वरुण-पूजा में किया जा चुका है।

पश्चाद् वामहस्तं दूरीकारयित्वा आचार्यो हस्ताभ्यां तं कलशं भूमौ स्थापयेत् ।

फिर उसे सिर से लगवा कर बाएं हाथ को हटवा कर आचार्य अपने हाथों से कलश को यथास्थान भूमि पर रख देवे।

पश्चान्निमन्त्राभ्यां यजमानो ब्राह्मणकरेषु तांबूलद्वारा कलशाज्जल-बिन्दून प्रक्षिपेत्। द्विजा अपि प्रथमपात्रे करान् निदध्यु र्येन तज्जलं प्रथमे पात्रे पतेत् ॥

फिर नीचे के दो मन्त्र यजमान बोले और ब्राह्मणों के हाथों पर कलश से तांबूल द्वारा जल गेरे। ब्राह्मण भी प्रथम पात्र पर हाथ रखे जिससे वह जल प्रथम पात्र में गिरता जावे। यह जल अभिषेक के काम में आवेगा।

यज०—दीर्घा नागा नद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णुपदानि च । तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु ॥ अपां मध्ये स्थिता देवाः सर्वमप्सु प्रकीर्तितम्। ब्राह्मणानां करे न्यस्ताः शिवा आपो भवन्तु नः । शिवाः आपः सन्तु ॥

ब्राह्मण—सन्तु शिवा आपः ।

यजमान अब ब्राह्मणों के हाथों में पुष्प दे यथा—

यजमान—लक्ष्मीर्वसति पुष्पेषु लक्ष्मीर्वसति पुष्करे। सा मे वसतु वै नित्यं सौमनस्यं सदास्तु मे ॥

ब्राह्मण—सौमनस्यमस्तु । ऐसा बोले ।

यजमान ब्राह्मणों के हाथों में अक्षत देता हुआ मन्त्र बोले—

यजमान—अक्षतं चास्तु मे पुण्यं दीर्घमायुर्यशो बलम् । यद्यच्छ्रेयस्करं लोके तत्तदस्तु सदा मम ॥ अक्षताः पान्तु ॥

ब्राह्मण—अक्षतं चारिष्टं चास्तु ।

यजमान ब्राह्मणों के हाथों में कुमकुम केसर देकर बोले—

गन्धाः पान्तु ।

ब्राह्मण—मांगल्यं चास्तु' बोले ।

यजमान—'पुष्पाणि पान्तु" से पुष्प दे ।

ब्राह्मण—"सौश्रियमस्तु" बोले ।

यजमान—"अक्षताः पान्तु" से फिर अक्षत दे ।

ब्राह्मण—"आयुष्यमस्तु" ऐसा बोले ।

यजमान—"तांबूलानि पान्तु"बोलकर पान दे ।

ब्राह्मण—"ऐश्वर्यमस्तु" बोले ।

यजमान—"दक्षिणा पान्तु" से कम से कम एक एक रुपया सबको दक्षिणा देवे या जितनी श्रद्धा हो ।

ब्राह्मण—आरोग्यमस्तु । दीर्घमायुः श्रेयः शांतिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्तु । श्रीर्यशो विद्या विनयो वित्तं बहुपुत्रं चारोग्यं चास्तु ।

यजमान—यत्कृत्वा सर्ववेदयज्ञक्रियाकरणकर्मारम्भाः शुभाः शोभनाः प्रवर्तन्ते तमहमोंकारमादिं कृत्वा ऋग्यजुः सामाथर्वाशीर्वचनं बहुऋषिमते समनुज्ञातं भवद्भिरनुज्ञातः पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये ।

ब्राह्मण—वाच्यताम् ।

यजमान-व्रतनियमतपः—स्वाध्यायक्रतुदमदानावशिष्टानां सर्वेषां ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम् ॥

ब्राह्मण—समाहितमनसः स्मः ।

यजमान—प्रसीदन्तु भवन्तः ।

ब्राह्मण—प्रसन्नाः स्मः ।

अथ तत्कलशात् प्रथमे पात्रे किञ्चिज्जलं पुनरादाय यजमानस्य मूर्द्धनि हस्तयोर्वा दूर्वया सेचनं कुर्यात् ।

अब उस कलश से प्रथम पात्र (कटोरी) में थोड़ा जल और लेके दूर्वा से यजमान के मस्तक या हाथों पर अभिषेक करे मन्त्र ये हैं—

ब्राह्मण—शांतिरस्तु पुष्टिरस्तु तुष्टिरस्तु वृद्धिरस्तु ऋद्धिरस्तु अविघ्नमस्तु आयुष्यमस्तु आरोग्यमस्तु शिवमस्तु शिवकर्मास्तु कर्मसमृद्धिरस्तु धर्मसमृद्धिरस्तु वेदसमृद्धिरस्तु शास्त्रसमृद्धिरस्तु पुत्रपौत्रसमृद्धिरस्तु धनधान्यसमृद्धिरस्तु इष्टसंपदस्तु । (द्वितीय पात्रे दूसरे पात्र में)

अनिष्टनिरसनमस्तु, यत्पापं रोगमशुभमकल्याणं तद्दूरेप्रतिहतमस्तु (हस्तयोः) यद्यच्छ्रेयस्तत्तदस्तु । उत्तरकर्मणि निर्विघ्नमस्तु उत्तरोत्तराहरहरभिवृद्धिरस्तु उत्तरोत्तराः क्रियाः शुभाः शोभनाः संपद्यन्तां प्रीयंताम् । तिथिकरणे सुमुहूर्ते सनक्षत्रे सग्रहे सलग्ने सदैवते प्रीयेताम् । दुर्गापांचाल्यौ प्रीयेताम् । अग्नि पुरोगा विश्वेदेवाः प्रीयंताम् । इन्द्रपुरोगा मरुद्गणाः प्रीयंताम् । वसिष्ठपुरोगा ऋषिगणाः प्रीयंताम् । माहेश्वरीपुरोगा उमामातरः प्रीयंताम् । अरुन्धतीपुरोगा एकपत्न्यः प्रीयंताम् । विष्णुपुरोगाः सर्वेवेदाः प्रीयंताम् । ब्रह्मपुरोगा सर्वे वेदाः प्रीयंताम् । आदित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयंताम् । ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च प्रीयंताम् । अंबिकासरस्वत्यौ प्रीयेताम् । श्रद्धामेधे प्रीयेताम् । भगवती कात्यायनी प्रीयताम् । भगवती माहेश्वरी प्रीयताम् । भगवती ऋद्धिकरी प्रीयताम् । भगवती बुद्धिकरी प्रीयताम् । भगवती सिद्धिकरी प्रीयताम् । भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम् । भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम् । भगवंतौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम् । सर्वाः कुलदेवताः प्रीयंताम् । सर्वाः ग्रामदेवताः प्रीयंताम् । सर्वा इष्टदेवताः प्रीयंताम् । (द्वितीयपात्रे) हताश्च ब्रह्मद्विषः हताश्च परिपन्थिनः । हताश्च विघ्नकर्तारः । शत्रवः पराभवं यांतु शाम्यंतु घोराणि शाम्यंतु पापानि शाम्यंत्वीतयः । (पुनः हस्तयोः) शुभानि वर्धन्तां । शिवा आपः सन्तु । शिवा ऋतवः सन्तु । शिवा अग्नयः सन्तु । शिवाःवनस्पतयः संतु । शिवा अतिथयः संतु । अहोरात्रे शिवे स्याताम् । ॐ निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु । फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥

शुक्रांगरकबुधबृहस्ततिशनैश्चरराहुकेतुसोमसहिताः आदित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयंताम् । भगवन्नारायणः प्रीयतां भगवान्स्वामीमहासेनः प्रीयताम् । पुरोनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु । याज्यया यत्पुण्यं तदस्तु । वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु । प्रातः सूर्योदये यत्पुण्यं तदस्तु ।

प्रथमपात्रीयजलेन शिरः संमृज्य द्वितीयपात्रजलं एकान्ते पातयेत् । पात्रं चापि दद्यात् ।

प्रथम पात्र कटोरी के जल से अपना अभिषेक करके दूसरा त्याज्य पात्र किसी गरीब को दिलवा दे, दोना हो तो फिकवा दे फिर यजमान बोले—

अथ यजमानो ब्रूयात्—ब्राह्मं पुण्यमहर्यच्च सृष्ट्युत्पादनकारकम् ।

वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः ॥१ ॥ भो ब्राह्मणाः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे पुण्यं पुण्याहं भवंतो ब्रुवंतु ॥

(ब्रा०) ॐ पुण्याहम् ३ । ॐ पुनन्तु मां देवजनाः पुनंतु मनसा धियः ॥ पुनंतु व्विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि माम् ॥२ ॥

(यजमान) पृथिव्यामुद्धृतायान्तु यत्कल्याणं पुराकृतम् ॥ ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः । भो ब्राह्मणाः मम सपरिवारस्य गृहे कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु ।

(ब्रा०) ॐ कल्याणम् ३ ॥ यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चार्य्याय च स्वाय चारणाय च । प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृध्यतामुपमादो नमतु ॥ (यजमानः) सागरस्य च या ऋद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृता । सम्पूर्णा सुप्रभावा च तामृद्धिं ब्रुवन्तु नः । भो ब्राह्मणाः मम सपरिवारस्य गृहे ऋद्धिं भवंतो ब्रुवन्तु । (ब्राह्मणाः) ॐ ऋद्धयताम् ३ ॥ सत्रस्य ऋद्धिरस्यगन्म ज्योतिरमृता अभूम । दिवं पृथिव्या अध्याऽरुहामाविदाम देवान्त्स्वर्ज्योतिः । (यजमानः) स्वस्त्यस्तु । स्वस्तिस्तुयाविनाशाख्या पुण्यं मंगलदायिनी । विनायकप्रिया नित्यं तां च स्वस्तिं ब्रुवन्तु नः । भो ब्राह्मणाः मम सपरिवारस्य गृहे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु । (ब्रा०) ॐ स्वस्तिः ३ । स्वस्तिः न इन्द्रो बृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु । (यजमानः) समुद्रमथानाज्जाता जगदानन्दकारिका । हरिप्रिया च मांगल्या तां श्रियं च ब्रुवन्तु नः ॥ भो ब्राह्मणाः मम सपरिवारस्य गृहे श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु । (ब्राह्मणाः) ॐ अस्तु श्रीः ३ ॥ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्म इषाण सर्वलोकम्म इषाण ॥

पश्चात् "स्वस्ति न इन्द्रो०" इत्यादि मन्त्र से—

यजमान के तिलक करे और नीचे के मन्त्र से राखी अथवा कलावा बांधे ।

येन वद्धो बलिः राजा दानवेन्द्रो महाबलः ।

तेन त्वामनुबध्नामि रक्षे माचल माचल ॥

फिर अक्षत छोड़ता हुआ बोले

ॐ अंहो मुञ्चमांगिरसं जयं च स्वस्त्यात्रेयं मनसा च तार्क्ष्यम् । प्रयतपाणिः शरणं प्रपद्ये स्वस्तिसंवादेष्वभयं नोऽस्तु ॥ पुण्याहसम्पत्तिरस्तु । मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः । शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तव । शुभं भवतु कल्याणमारोग्यं सुखसम्पदः ॥ सपलाः दुर्ग्रहाः पापाः दुष्टसत्त्वाद्युपद्रवा । तमालपत्रमालोक्य सदासौम्याः भवन्तु ते ॥ शुभं भवतु कल्याणमारोग्यं सुखसंपदः ॥

अभिषेक

कलश के जल से पति-पत्नी पर अभिषेक करे।

ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीयु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः । पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥

ॐ पंचनद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः । सरस्वती तु पंचधा सो देशेऽभवत्सरित् ॥

ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनी स्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद ॥

ॐ पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः ।
पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा ॥

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रिये दधामि बृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ ॥ (शु० य० ९/३०)

॥ इतिपुण्याहवाचनम् ॥

पंचोंकार पूजनम्

ॐ ब्रह्मा देवी च गायत्री तथा गोवर्द्धनेश्वरः ।
पृथ्वी यज्ञपतिश्चैतान्-पंचोंकारान्नमाम्यहम् ॥

ॐ आब्रह्मन् ब्रह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽति व्याधी महारथो जायतामदोग्ध्री देनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरुंध्रिर्योषा जिष्णु रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु पलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो न कल्पताम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः पूर्वे ब्रह्मन् इहागच्छ इहतिष्ठ ब्रह्मणे नमः । ब्रह्माणं आवाहयामि स्थापयामि नमः ॥१ ॥

गणपति वेदी पर ही पंचकोष्ठक चावलों से बनाकर उनके बीच ५ सुपारी की प्रतिमा रखकर पंचोंकार भगवान् का पूजन करे।

ओंकार आवाहनम्

आवाहयाम्यहं देवमोंकारं परमेश्वरम् ।
त्रिमात्रं त्र्यक्षरं दिव्यं त्रिपदं च त्रिदैवकम् ॥
अक्षरं त्रिगुणाधारं सर्वाक्षरमयं शिवम् ।
प्रणवं प्रणवं हंसं स्रष्टारं परमेश्वरम् ॥
अनादि निधनं देवमप्रमेयं सनातनम् ॥
परं परतरं वीर्यं निर्मलं निष्कलं शुभम् ॥
एह्येहि जीवनाथ त्वं सान्निध्यो भव मे सदा ।
श्रेयसे यजमानस्य मन्त्राणां तारणाय च ॥
अयमर्घं इदं पाद्यं धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥
यज्ज्योतिरूपं परमं विधाता ।
जगत्समस्तं हि बिभर्ति गोप्ता ॥
यतात्मनो विश्वमिदं यतः स्यात् तद्ब्रह्म रूपं प्रणवं नमामि ।
आब्रह्मन्निति मंत्रेण मण्डले त्वं समाविश ।

श्री प्रणवाय नमः ॥

षोडश-मातृका–पूजनम्

आमनः कुल देवता १६	लोक मातरः १२	देव-सेना ८	मेधा ४
तुष्टि १५	मातरः ११	जया ७	शची ३
पुष्टि १४	स्वाहा १०	विजया ६	पद्मा २
धृति १३	स्वधा ९	सावित्री ५	गौरी + गणेश ?

गौरी पद्मा शचीमेधा सावित्री विजया जया ।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ।
धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता ।
ॐ गजवक्त्र गणाध्यक्ष सर्वविघ्न विनाशन ।
लम्बोदर त्रिनेत्राद्य आगच्छ गणनायक ॥१॥
ॐ हिमाद्रितनयां देवीं वरदां भैरवप्रियाम् ।
लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम् ॥२॥
ॐ सुवर्णाढ्यां पद्महस्तां विष्णोर्वक्षस्थलेस्थिताम् ।
त्रैलोक्यं पूजितां देवीं पद्मामावहयाम्यहम् ॥३॥
ॐ उत्पलाक्षीं सुवदनां शशि कुण्डलधारिणीम् ।
देवराज प्रियां भद्रां शचीमावाहयाम्यहम् ॥४॥
ॐ वैवस्वत प्रफुल्लाभाममलेन्दीवर स्थिताम् ।
बुद्धि प्रसादिनीं सौम्यां मेधामावाहयाम्यहम् ॥५॥
ॐ जगत्सृष्टीं जगद्धात्रीं पत्नी रूपेण संस्थिताम् ।
ॐकाराक्षीं भगवतीं सावित्रीमावाहयाम्यहम् ॥६॥
ॐ दैत्यक्षयकरीं देवीं देवानां चाभयप्रदाम् ।
गीर्वाण वन्दितां देवीं विजयामावाहयाम्यहम् ॥७॥
ॐ विष्णु रुद्रार्क शक्त्यादि गीर्वाणेषु व्यवस्थिताम् ।
त्रैलोक्ये वन्दितां देवीं जयामावाहयाम्यहम् ॥८॥
ॐ मयूर वाहनारूढ़ां शक्तिखड्ग धनुर्धराम् ।
आवाहयेद्देवसेनां तारकासुर मर्दिनीम् ॥९॥
ॐ कव्यमादाय सततं पितृभ्यो या प्रयच्छति ।
पितृ लोकार्चितां देवीं स्वधामावाहयाम्यहम् ॥१०॥
ॐ हविर्गृहीत्वा सततं देवेभ्यो या प्रयच्छति ।
वह्नि प्रिया तु सा स्वाहा समागच्छतु मेऽध्वरे ॥११॥
ॐ भूतग्राममिमं कृत्स्नं मया प्रीत्यादितं पुरा ।
त्रैलोक्य पूजितां देवीं मातरं चावृणोम्यहम् ॥१२॥

ॐ आवाहयेल्लोकमातरः जगत्पालन संस्थिता ।
शक्ताद्यैः वंदितां देवीं स्तोत्र पाठाभिचारकैः ।
ॐ मनस्तुष्टिकरीं देवीं लोकानुग्रहकारिणीम् ॥१३॥
सर्वकाम समृद्धयर्थं धृतिमावाहयाम्यहम् ॥१४॥
ॐ प्रणतानां हि लोकेऽस्मिन् पुत्र पुष्टि सुखप्रदाम् ।
भक्तेभ्यश्चापि वरदां पुष्टिमावाहयाम्यहम् ॥१५॥
ॐ आवाहयामि तां तुष्टिं सर्वलोक सुखप्रदाम् ।
सन्तोषभावनां देवीं रक्षणीयेऽध्वरे मम ॥१६॥
ॐ त्वमात्मा देहिनां देवी सर्वकाम फलप्रदा ।
वंशरक्षण कर्त्री च आगच्छागच्छ मेऽध्वरे ॥१७॥

प्रतिष्ठापन-मन्त्र

ॐमनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य वृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनो त्वरिष्टं यज्ञ्ँसमिमं दधातु । विश्वेदेवा स इहमादयंतामो ३ म्प्रतिष्ठ । एष वै प्रतिष्ठा नामयज्ञो यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते सर्वमेव प्रतिष्ठितं भवति ॥ गृहा वै प्रतिष्ठासूक्तं तत्प्रतिष्ठितं मया वाचा संस्तव्य तस्माद्यद्यपि दूर इव पशूंल्लभते गृहानि वै नाना जिगमिषति गृहाहि पशूनां प्रतिष्ठा ॥ सुप्रतिष्ठितमस्तु ॥

ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी तथा । वाराही च तथेन्द्राणी चामुण्डासप्तमातरः ॥ ब्राह्मी माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, ऐन्द्री, चामुण्डा, माता की पूजा करते समय उपर्युक्त नामों का उच्चारण आचार्य करे।

चतुःपुष्टि-योगिनी-पूजा

आग्नेय्यां योगिनीं न्यसेत् ॥ चतुष्षष्टि दलात्मके कोष्ठके भिन्नं भिन्नं स्थापयेत् ॥

अग्नि कोण में चौंसठ योगिनी की पटा या चौकी पर स्थापना करे ।

लाल वस्त्र के ऊपर सफेद चावलों से ६४ चौंसठ कोठे बनावे । उनमें निम्न प्रकार से स्थापना कर पूजा करे ॥

ॐ आवाहयाम्यहम् देवीं योगिनीं परमेश्वरीम् । योगाभ्यासेन संतुष्टा परध्यान समन्विता ॥ दिव्य कुण्डलातिसंकाशा दिव्यज्वालात्रिलोचना । मूर्तिमती ह्यमूर्ता च उग्रा चैवोग्ररूपिणी ॥ अनेक भावसंयुक्ता संसरार्णवतारिणी । यज्ञे कुर्वन्तु निर्विघ्नं श्रेयो यच्छन्तु मातरः ॥

दिव्ययोगी महायोगी सिद्धयोगी गणेश्वरी प्रेताशीडाकिनीकाली कालरात्रि निशाचरी । हुंकारीसिद्धवेताली खर्परी भूतगामिनी । ऊर्ध्वकेशी विरूपाक्षी शुष्कांगीमांसभोजनी । फूत्कारी वीरभद्राक्षी धूम्राक्षी कलहप्रिया । रक्ता च घोर रक्ताक्षी विरूपाक्षी भयंकरी । चोरिकामारिका चण्डी वाराही मुंडधारिणी । भैरवी चक्रिणी क्रोधादुर्मुखी प्रेतवासिनी । कालाक्षी मोहिनी चक्री कंकाली भुवनेश्वरी । कुण्डला तालकौमारी यमदूती करालिनी । कौशिकी यक्षिणी यक्षी कौमारी यन्त्रवाहिनी । दुर्घटे विकटे घोरे कपाले विष लंघने । चतुःषष्टि समाख्याता योगिन्यो हि वरप्रदाः । त्रैलोक्ये पूजिता नित्यं देवमानव योगिभिः ।

ॐ भूर्भुव स्वः दिव्ययोगिन्यादि चतुःषष्टि योगिनीभ्यो नमः ॥ इहागच्छत् इह तिष्ठत पूजां गृह्णन्तु मम सम्मुखाः अत्र मण्डले तिष्ठन्तु वरदा भवन्तु ॥

षोडशोपचारैः—सम्पूज्य क्षेत्रपालं—पूजयेत ॥

पाद्य अर्घ्य आचमन स्नान वस्त्र गन्ध अक्षत पुष्प धूप दीप नेवैद्यादिक से पूजन करके क्षेत्रपाल पूजा अवश्य करे :

क्षेत्रपालपूजनम्

ॐ अजराय नमः ॥ आपकुम्भाय नमः ॥ इन्द्रस्तुतये नमः । इडाचाराय नमः ॥ उक्त संज्ञाय नमः ॥ ऊष्मादाय नमः ॥ ऋषिसूदनाय नमः ॥ ऋणमुक्ताय नमः ॥ क्लृप्त केशाय नमः ॥ लृपव्ययाय नमः ॥ एकदंष्ट्रकाय नमः । ऐरावताय नमः । ओघबंधवे नमः ॥ ओषधीशाय नमः ॥ ॐ अंजनाय नमः ॥ अस्त्रवाराय नमः ॥ कवलाय नमः ॥ खरु खानलाय नमः ॥ गोमुख्याय नमः । घण्टादाय नमः । ङ मनसे नमः ॥ चण्ड वारणाय नमः ॥ घटाटोपाय नमः ॥ जटलाय नमः ॥ झंगी वाय नमः । ञंडेश्वराय नमः ॥ टंक पाणये नमः ॥ ठानबंधवे नमः । डमराय नमः ॥ ढक्कारवाय नमः ॥ ण वार्णवाय नमः ॥ तडिद्देहाय नमः ॥ थिराय नमः । दन्तुराय नमः । धनदाय नमः ॥ नित्तक्तान्ताय नमः ॥ प्रचण्डकाय नमः । फट्काराय नमः । वीरसंघाय नमः । भृंगाय नमः ॥ मेघभासुराय नमः ॥ युगान्ताय नमः ॥ रोह्यवाय नमः । लम्बोष्ठाय नमः । वासवाय नमः ॥ ॐ शूकनन्दाय नमः । षडालाय नमः ॥ सुनाम्ने नमः ॥ हम्बुकाय नमः ॥४९॥ ॐ भूर्भुवः स्वः एकोनपंचाशत क्षेत्रपालेभ्यो नमः ॥ षोडशोपचारैः सम्पूज्य प्रार्थयेत् ॥

सप्तघृत-मातृका पूजनम्

आग्नेय्यां भित्तौ कुंकुमादिना बिन्दुकरणेनालङ्करणं कृत्वा मन्त्रं पठन् घृतेन सप्तधारा प्राक्संस्था उदक्संस्था वा कुर्यात् ।

अग्निकोण में दीवार या पट्टे पर कुंकुम (रोली) से क्रमशः ऊपर से नीचे तक एक, दो, तीन, चार, पांच, छः, सात बिन्दुओं तक बना कर उन बिन्दुओं के ऊपर भाग में श्री लिखें ।

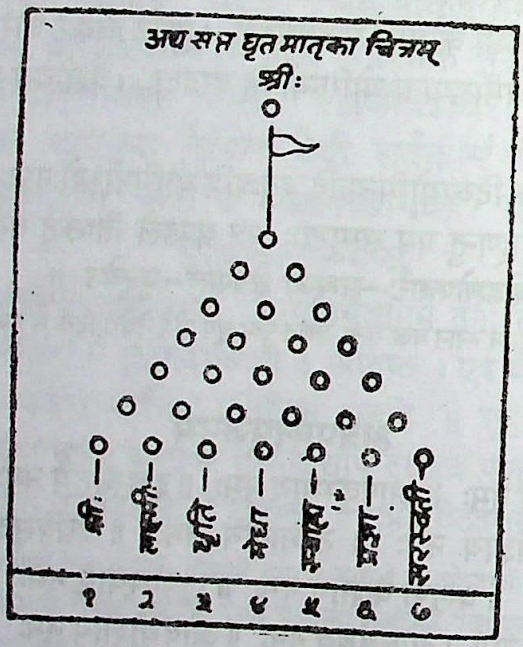

यजमान प्रथम हाथ जोड़कर ७ घृत-मातृकाओं का ध्यान करे । तदनन्तर 'निम्नलिखित' नाम-मंत्रों से अपने बाएं हाथ में पुष्प एवं कुंकुमाक्षत रखकर, सीधे हाथ से प्रत्येक के आसनों पर 'आवाहयामि स्थापयामि' यह कहता हुआ अक्षत आदि छोड़ता जाए—

ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्म इषाण सर्व लोकम्म इषाण ॥ (ध्यायामि)

⊗ "श्रीश्च लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा, स्वाहा प्रज्ञा सरस्वती । मांगल्येषु प्रपूज्यन्ते, सप्तैता घृतमातरः ॥

ॐ श्र्यादिसप्तघृत-मातृकाभ्यो नमः । १. ॐ श्रियै नमः । श्रियमावाहयामि स्थापयामि । २. ॐ लक्ष्म्यै नमः । लक्ष्मीमावाहयामि स्थापयामि । ३. ॐ धृत्यै नमः धृतिमावाहयामि स्थापयामि । ४. ॐ मेधायै नमः मेधामावाहयामि स्थापयामि । ५. ॐ स्वाहायै नमः स्वाहामावाहयामि

स्थापयामि । ६. ॐ प्रज्ञायै नमः प्रज्ञामावाहयामि स्थापयामि । ७. ॐ सरस्वत्यै नमः सरस्वतीमावाहयामि स्थापयामि ।

'ॐ मनोजूतिः'—इस मन्त्र द्वारा प्रतिष्ठापन करे । तदनन्तर नीचे-लिखे मन्त्र से क्रमशः ७ वसोर्धाराएं (घी की धाराएं) करे।

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्र-धारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः ॥

तदनन्तर 'ॐ कामधुक्ष' मन्त्र कहता हुआ सिन्दूर-बिन्दुओं पर गुड़ घी लगावे और कलावा लगावे । पुनः यजमान सप्तघृत-मातृकाओं का पूर्व-विधि-अनुसार 'षोडशोपचार' पूजन करे । और 'ॐ श्रीश्चते०' इस उपरोक्त मन्त्र द्वारा नमस्कार करे।

अनया पूजया वसोर्धारा देवता प्रीयन्ताम् न मम ॥

नवग्रह पूजन-मण्डपम्

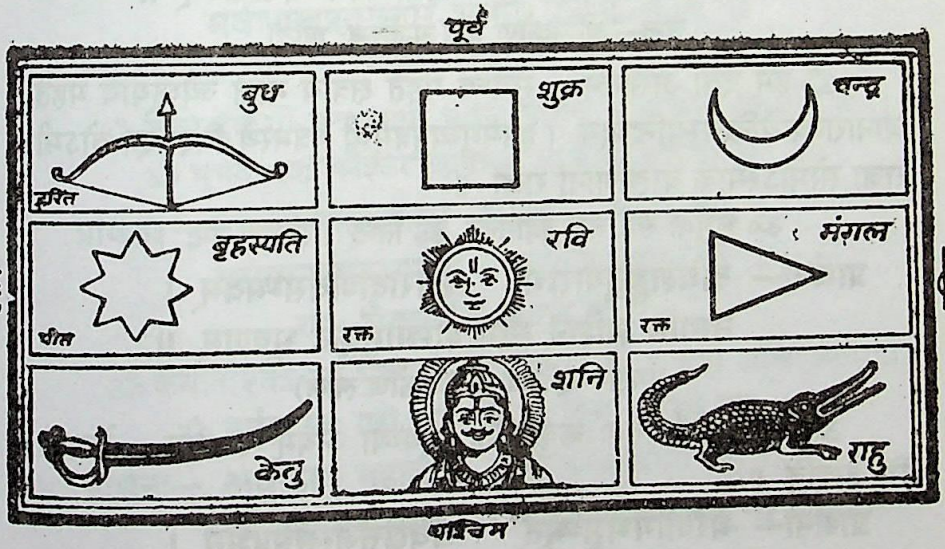

नव-ग्रह-पूजनम्

यजमान हाथ जोड़कर सूर्यादि नव-ग्रहों का ध्यान करे—

ॐ ब्रह्मा, मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी,
भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च ।
गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः,
सर्वे ग्रहाः शान्तिकराः भवन्तु ॥

तदनन्तर यजमान सूर्य का ध्यान करता हुआ, अपने दक्षिण हाथ में जल लेकर निम्नलिखित 'विनियोग' पढ़ें और उस विनियोग के जल को पृथ्वी पर छोड़ दे—

ॐ आकृष्णेनेति मन्त्रस्य, हिरण्यस्तूपांगिरस ऋषिः, सूर्यो देवता, त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यप्रीतये-पूजने (जपे) विनियोगः ।

पुनः यजमान हाथ में (स्वर्ण-रक्त-कमल-पुष्प) कुम-कुम-अक्षत-लेकर निम्नलिखित 'सूर्य मंत्र' द्वारा देव को 'आवाहयामि स्थापयामि' कहकर अक्षत आदि यथास्थान स्थापित करें—

बाएं हाथ में अक्षत ले दाहिने हाथ से प्रत्येक मन्त्र से अक्षत छोड़े।

'सूर्य-मंडल—ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च । हिण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः सूर्य इहागच्छ, इह तिष्ठ । सूर्याय नमः ।

प्रार्थना— जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ।
तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ॥

चन्द्र—'अग्निकोण में' (अर्द्धचन्द्र, श्वेत)

ॐ इमं देवा असपत्न ᳪ सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ्याय महते जानाराज्यायेन्द्रियस्येन्द्रियाय । इमममुष्यपुत्रमुष्यै पुत्रमस्यै विश एष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानां राजा ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः चन्द्र इहागच्छ, इह तिष्ठ । सोमाय नमः ।

प्रार्थना— दधिशङ्खतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम् ।
नमामि शशिनं सोमं शम्भोर्मुकुट भूषणम् ॥

मंगल—'दक्षिण में' (त्रिकोण लाल)

ॐ अग्निमूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् । अपा ᳪ रेता ᳪ सिजिन्वति ॥

प्रार्थना— धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्तेजस्समप्रभम् ।
कुमारं शक्तिहस्तं च मंगलं प्राणमाम्यहम् ॥

बुध—'ईशानकोण में' (हरा बाण)

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्व मिष्टापूर्ते स ᳪ सृजेथा मयं च । अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः बुध इहागच्छ, इह तिष्ठ । बुधाय नमः ।

प्रार्थना— प्रियंगुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् ।
सौम्यं सौम्य गुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम् ॥

वृहस्पति—'उत्तर में' (पीला कमल)

ॐ बृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु ।
यद्दीयदच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः बृहस्पते इहागच्छ, इह तिष्ठ । बृह० नमः ।

प्रार्थना— देवानां च ऋषीणां च गुरुं कांचन सन्निभम् ।
बुद्धिभूतं त्रिलोकानां तं नमामि बृहस्पतिम् ॥

शुक्र—'पूर्व में' (श्वेत चतुष्कोण)

ॐ अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिवत्क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपान ᳪ शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः शुक्र इहागच्छ, इह तिष्ठ । शुक्राय नमः ।

प्रार्थना— हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् ।
सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम् ॥

शनि—'पश्चिम में'

ॐ शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंय्योरभिस्रवन्तु नः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः शनैश्चर इहागच्छ, इह तिष्ठ । शनै० नमः ।

प्रार्थना— नीलांजनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ।
छायामार्तण्डसम्भूतं तं नमामि शनैश्चरम् ॥

राहु—'नैर्ऋत्य' में (काला मकर)

ॐ कयानश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा । कया शचिष्ठयावृता ।

ॐ भूर्भुवः स्वः राहो इहागच्छ, इह तिष्ठ । राहवे नमः ।

प्रार्थना— अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम् ।
सिंहिकागर्भसम्भूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ॥

केतु—'वायव्य कोण में (काली ध्वजा)

ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसो समुषद्भिः रजायथाः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः केतो इहागच्छ इह तिष्ठ । केतवे नमः ।

प्रार्थना— पलाशपुष्प संकाशं ताराग्रहमस्तकम् ।
रुद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम् ॥

ॐ सूर्यादि-नवग्रहेभ्यो नमः । पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करे ।

प्रार्थना—ॐ ब्रह्मामुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानु शशी भूमिसुतो बुधश्च । गुरुश्चशुक्रः शनिराहु-केतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकराः भवन्तु ॥ सूर्यः

शौर्यमथेन्दुरुच्चपवीं सन्मङ्गलं मङ्गलः, सद्बुद्धिं च बुधो गुरुश्च गुरुतां शुक्रः सुखं शं शनिः, राहुर्बाहुबलं करोतु संततं केतुः कुलस्योन्नतिं, नित्यं प्रीतिकराः भवन्तु मम ते सर्वेऽनुकूलाः ग्रहाः ॥

पञ्च-लोकपाल-पूजनम्

बाएं हाथ में अक्षत ले दाहिने हाथ से प्रत्येक मन्त्र से अक्षत छोड़ें—

गणपति—ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसो मम । आहमजानिगर्भध मा त्वमजासि गर्भधम् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपते ! इहागच्छ । इह तिष्ठ । गणपतये नमः ॥

देवी—ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममारातीयतो निदहाति वेदः । स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरि तात्यग्निः ॥

भूर्भुवः स्वः दुर्गे ! इहागच्छ । इह तिष्ठ दुर्गायै नमः ॥

वायु—ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरꣳ सहस्त्रिणीभि रुपयाहि यज्ञम् । वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः बायो । इहागच्छ । इह तिष्ठ । वायवे नमः ।

आकाश—ॐ घृतं घृतपावानः पिवत वसां वसापावानः पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा ॥ दिशः प्रदिशः आदिशो विदिशः उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः आकाश ! इहागच्छ । इह तिष्ठ । आका० नमः ।

अश्विनी—ॐ या वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती । तया यज्ञं मिमिक्षतम् ॥ उपयाम गृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वैष ते योनिर्माध्वीभ्यां त्वा ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विना ! इहागच्छत इह तिष्ठत अश्विभ्यां नमः ॥

(इत्यावाह्य) ॐ गणपत्यादिपञ्चलोकपालेभ्यो नमः ॥

पूजन करे । पश्चात् "अनया पूजया पञ्चलोकपालाः प्रीयन्तां न मम" बोलकर अक्षत छोड़ें ।

दशदिक्पाल-पूजनम्

बाएं हाथ में अक्षत लेकर, दाहिने हाथ से प्रत्येक मन्त्र से अक्षत छोड़ें ।

इन्द्र—(पूर्व) ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिंद्रꣳ हवे हवे सुहवꣳ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रꣳ स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः (इन्द्रायनमः) ।

अग्नि—(अग्निकोण में) ॐ अग्नि दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुपब्रुवे । देवां -२ आ सादयादिह ॥ (अग्नये नमः)

यम—(दक्षिण में) ॐ असि यमो अस्यादित्यो अर्वन्नसि त्रितोगुह्येन व्रतेन । असि सोमेन समया विपृक्तः आहुस्ते त्रीणि दिवि बन्धनानि ॥ (यमाय नमः)

निर्ऋति—(नैर्ऋत्य कोण में) ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छ-स्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य । अन्यमस्मदिच्छ सा न इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु । (नि० नमः) ।

वरुण—(पश्चिम में) ॐ इमं मे वरुण श्रुधी ह्वमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचके । वरुणाय नमः ॥ व० आ० स्था० ।

वायु—(उत्तरकोण में) ॐ वायुरग्रेगा यज्ञप्रीः साकं गन्मनसा यज्ञम् । शिवो नियुद्भिः शिवाभिः । (वायवे नमः) वा० आ० ।

कुबेर—(उत्तर में) ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिंधियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ।(ईशानाय नमः)

ब्रह्मा—(ईशान पूर्व के मध्य में) ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आवः । स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः । (ब्रह्मणे नमः)

अनन्त—(नैर्ऋत्य पश्चिम के मध्य में) ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु । ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ।(अनन्ताय नमः) अनन्तं आ० स्था० ।

ॐ इन्द्रादि दशदिक्पालेभ्यो नमः पूजन करे। पश्चात् 'अनया पूजया दशिदक्पालदेवता प्रीयन्ताम् ।' अक्षत छोड़ें ।

रक्षा विधानम्

बाएं हाथ में पीली सरसों अथवा चावल, द्रव्य और तीन तार की मौली लेकर दाहिने हाथ से ढककर नीचे लिखे मंत्र बोले ।

ॐ गणाधिपं नमस्कृत्य नमस्कृत्य पितामहम् ।
विष्णुं रुद्रं श्रियं देवीं वन्दे भक्त्या सरस्वतीम् ॥

स्थानाधिपं नमस्कृत्य ग्रहनाथं निशाकरम् ।
धरणीगर्भसम्भूतं शशिपुत्रं बृहस्पतिम् ॥
दैत्याचार्यं नमस्कृत्य सूर्यपुत्रं महाग्रहम् ।
राहुं केतुं नमस्कृत्य यज्ञारम्भे विशेषतः ॥
शक्राद्याः देवताः सर्वाः मुनीश्चैव तपोधनान् ।
गर्गं मुनिं नमस्कृत्य नारदं मुनिसत्तमम् ॥
वशिष्ठं मुनिशार्दूलं विश्वामित्रं च गोभिलं ।
व्यासं मुनिं नमस्कृत्य सर्वशास्त्र विशारदम् ॥
विद्याधिका ये मुनयः आचार्याश्च तपोधनाः ।
तान् सर्वान् प्रणमाम्येवं यज्ञरक्षाकरान् सदा ॥

नीचे लिखे मन्त्रों से दशों दिशाओं में पीली सरसों या चावल छोड़े ।

पूर्वे रक्षतु वाराहः आग्नेय्यां गरुडध्वजः ।
दक्षिणे पद्मनाभस्तु नैर्ऋत्यां मधुसूदनः ।
पश्चिमे चैव गोविन्दो वायव्यां तु जनार्दनः ।
उत्तरे श्रीपती रक्षेत् ऐशान्यां तु महेश्वरः ॥
ऊर्ध्वं रक्षतु धाता वो ह्यधोऽनन्तश्च रक्षतु ॥
एवं दशदिशो रक्षेद् वासुदेवो जनार्दनः ॥
रक्षाहीनन्तु यत्स्थानं रक्षत्वीशो ममाद्रिधृक् ।
यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वदा ॥
स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु ।
अपक्रामन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः ।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ।
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचा सर्वतो दिशम् ।
सर्वेषामविरोधेन पूजाकर्म समारभे ॥

पश्चात् कलश-गणेश जी के सम्मुख रख देवे। फिर उसमें से गणपत्यादि समस्त देवताओं को चढ़ाकर रक्षाबन्धन करे।

रक्षोघ्नसूक्तम्

ॐ रक्षोहणं वलगहनं वैष्णवीमिदमहन्तं वलगमुत्किरामि । यम्मे निष्ठयो यममात्यो निच खानेदमहन्तं वलगमुत्किरामि ॥ यम्मे समानो यमसमानो निचखानेदमहन्तं वलगमुत्किरामि । यम्मे सबन्धु यमसबन्धुर्नि च खानेदमहं तं वलगमुत्किरामि यं मे सजातो यमसाजातो निचखानोत्कृत्यां किरामि ॥१ ॥ रक्षोहणो वो बलगहनः प्रोक्षामि वैष्णवानरक्षोहणो वो वलगहनोऽवनयामि वैष्णवानरक्षोहणो वो वलगहनोऽवस्तृणामि वैष्णवानरक्षौहणौ वां वलगहनाऽउपदधामि वैष्णवी रक्षोहणौ वां वलगहनौ पर्य्यूहामि वैष्णवी वैष्णवमसि वैष्णवास्थ ॥२ ॥ रक्षसाम्भागोसि निरस्तं रक्ष इदमह ᳪ रक्षोभि तिष्ठामीद मह ᳪ रक्षो ऽव बाधऽइदमह ᳪ रक्षोऽधमन्तमो नयामि । घृतेन द्यावा-पृथिवी प्रोर्णुवाथांबायो वे स्तोकानामग्निराज्यस्य वेतु स्वाहा स्वाहाकृते ऊर्ध्वनभसमारुतं गच्छतम् ॥३ ॥ रक्षोहा विश्वचर्षणि रभि योनिमयोहते । द्रोणेसधस्थ मासदत् ॥४ ॥

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः ।
ये भूता बिघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम् ।
सर्वेषामविरोधेन यज्ञकर्मसमारभे ॥

यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वतः ।
स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु ॥
नमस्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ।
सुब्रह्मण्य नमस्तेऽस्तु महापुरुष पूर्वज ।
भूतानि राक्षसावापि येऽत्र तिष्ठन्ति केचन ।
ते सर्वेऽप्यपगच्छन्तु यज्ञमत्र करोम्यहम् ।
भूत प्रेतपिशाचाद्या अपक्रामन्तु राक्षसाः ।
स्थानादस्माद् व्रजंत्वन्यत् स्वीकरोमि भुवं त्विमां ॥

इति मन्त्रैरीशानादि सर्वदिक्षु सर्षपं विकिरेत् ॥

अथ पंचगव्य-मेलन-विधिः

गोमूत्रमंत्र—गायत्र्या गोमूत्रं, गन्धद्वारामिति गोमयं, आप्यायस्वेति गोक्षीरम्, दधिक्राब्णो इतिदधि, घृतंमिमिक्षे वा तेजोसीति आज्यम् देवस्य त्वेति कुशोदकम् ॥ ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

गोमूत्रम्—ॐ गायत्री त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्पंक्त्या सह । वृहत्युष्णिहा ककुप्सूचीभिः शम्यन्तुत्त्वा ।

गोमय मंत्र—ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥

क्षीर मंत्र—ॐ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोमवृषण्यं । भवावाजस्य संगथे ॥

दधि मंत्र—ॐ दधिक्राब्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः । सुरभि नो मुखाकरत् प्रण आयूंषि तारिषत् ॥

आज्य मंत्र—ॐ तेजोऽसी शुक्रमस्यमृतमसिधामनामसि । प्रियं देवाना मनाधृष्टं देवयजनमसि ॥

कुशोदकम्—ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनो बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरस्वत्यै वाचो यन्तु यन्त्रिये दधामि वृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभिषिंचाम्यसौ । !

प्रोक्ष्य मंत्र—ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां ॥ ॐ [illegible]ति प्रणव[illegible]ण कुशं वा यज्ञकाष्ठेन आलोक्य सर्वं गृहवस्तुं यज्ञभूमिं प्रोक्षयेत ॥

ॐ शुचीवो हव्या मरुतः शु[illegible]चिहिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः । ऋतेन सत्यमृतसाप आयन्शुचि [illegible]ः पावकाः अग्निः शुचिव्रत तमः शुचिर्विप्रः शुचिः कविः । शु[illegible]हुतः उदग्ने शुचयस्तव शुक्रा भ्राजन्त ईरते । तव ज्योतींष्यर्चयः ॥ एत[illegible]न्वन्द्रस्त वामशुद्धं मुद्धेन साम्ना । शुद्धै रुक्यैर्वावृध्वां संशुद्धं आशीर्वान्ममत्तु । इन्द्रशुद्धोनऽआगहि शुद्धः शुद्धाभिरूतिभिः शुद्धोरयिं निधास्य शुद्धो मसद्धि सोम्यः । इन्द्र शुद्धो हि नो

रयिं शुद्धौ रत्नानि दाशुषे । शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धोवाजं सिषामसि ॥ अपवित्रः पवित्रों वा सर्वावस्थांगतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यंतरः शुचिः ।

इति आत्मानं पूजा संभारान् च प्रोक्षयेत् ॥

अथ पंचगव्य-प्राशन-मन्त्र

ॐ यत्त्वगस्थिगतं पापं देहे तिष्ठंति मामके । प्राशनं पंचगव्यस्य दहत्वग्निरिबेन्धनं ओम् ॥ इति प्राश्य आचामेत् एवं त्रिः ।

ब्राह्मण के रक्षाबन्धन

ब्राह्मण के हाथ में दक्षिणा देकर रक्षा बांधे ।

ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाऽप्नोति दक्षिणाम् ॥ दक्षिणया श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥

ब्राह्मण के तिलक

ॐ नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मण हिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥

यजमान-रक्षाबन्धन मंत्र

येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः ।
तेन त्वामनुबध्नामि रक्षे मा चल मा चल ॥

यजमान-तिलक मन्त्र

शतमानं भवति शतायुर्वै पुरुषः ।
शतेन्द्रिय आयुरेवेन्द्रियं वीर्यमात्मन् धत्ते ॥

श्रीसत्यनारायण-पूजन-विधि
अथवा
शालग्रामपूजन-विधि

शालग्राम—

शालग्राम शिला यत्र तत्र सन्निहितो हरिः।
कामासक्तोऽपि यो नित्यं भक्तिभावविवर्जितः ।
शालग्राम शिलां चक्रं पूजयेत्सोऽच्युतो भवेत् ॥
शालग्राम शिला यत्र यत्र द्वारवती शिला ।
उभयोः सङ्गमो यत्र तत्र सन्निहितो हरिः ॥

ध्यानम्—सशंख-चक्रं सकिरीटकुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसी रुहेक्षणम् । सहार वक्षस्थल कौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ॥

सत्यनारायण तथा प्रतिष्ठित मूर्ति में आवाहन नहीं करें। केवल पुष्प छोड़े।

आवाहन—ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्। सभूमिꣳ सर्वत स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ आवा० ॥

आगच्छ भगवन् देव स्थाने चात्र स्थिरो भव ।
यावत् पूजां करिष्यामि तावत्त्वं सन्निधौ भव ॥
आवाहनार्थे पुष्पं समर्पयामि ॥

आसन—ॐ पुरुष एवेदꣳ सर्वं यद् भूतं यच्च भाव्यम् ॥ उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ।आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि ।।

रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्वसौख्यकरं शुभम् ।
आसनं हि मया दत्त गृहाण परमेश्वर ॥

पाद्य—ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः। पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥

गंगोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्यसंयुतम् ।
पाद प्रक्षालनार्थाय दत्तं ते प्रतिगृह्यताम् ॥
पादयोः पाद्यं समर्पयामि ॥

अर्घ्य—ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः । ततो विष्वङ्व्यक्राम- त्साशनानशने अभि ॥

अर्घ्यं गृहाण देवेश गन्धपुष्पाक्षतैः सह ।
करुणाकर मे देव गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते ॥
हस्तयोरर्घ्यं सम० ॥

आचमन—ॐ ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः । सः जातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमथो पुरः ॥

सर्व तीर्थसमायुक्तं सुगन्धि निर्मलं जलम् ।
आचम्यतां मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ॥
आचमनीय जलं सम० ॥

स्नान—ॐ तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् । पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥

गंगासरस्वतीरेवा पयोष्णी नर्मदाजलैः ।
स्नापितोऽसि मया देव तथा शान्तिं कुरुष्व मे ॥
स्नानीय जलं सम० ॥

दुग्ध—ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः । पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥

कामधेनुसमुत्पन्नं सर्वेषां जीवनं परम् ।
पावनं यज्ञहेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम् ॥
दु० स्ना० स० ॥

शुद्ध स्नानम्—शुद्धबालः सर्व शुद्धवालो मणिवालस्तआश्विना । श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्तेरुद्राय पशुपतये कर्णायाग्ना अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः ॥

दधि—ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः । सुरभि नो मुखा करत् प्रण आयुंषि तारिषत् ॥

पयस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम् ।
दध्यानीतं मया देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
द० स्ना० शुद्ध स्नानं च ॥

घृत स्नान—ॐ घृतं घृतपावानः पिवत वसां वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा । दिशः प्रदिशः आदिशो विदिश उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसंतोषकारकम् ।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
घृ० स्ना० स० शुद्ध स्नानं च ।

मधुस्नान—ॐ मधुवाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः ॥ मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिव ᳪ रजः । मधुद्यौरस्तु नः पिता ॥ मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमांऽअस्तु सूर्यः । माध्वीर्गावो भवन्तु नः ॥

पुष्परेणु समुत्पन्नं सर्व सन्तोष कारकम् ।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
मधु० स्ना स० शुद्धा जलं सं ।

शर्करा—ॐ अपा ᳪ रसमुद्वयस ᳪ रसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयाम गृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥

इक्षुरससमुद्भूतां शर्करां पुष्टिदां शुभाम् ।
मलापहारिकां दिव्यां स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
शर्करा स्ना० स० शुद्ध स्ना० स० ।

पञ्चामृत स्नान—ॐ पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः सरस्वतीं तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ।

पयोदधिघृतं चैव मधुशर्करयान्वितम् ।
पंचामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
पं० स्ना० ।

शुद्धोदक स्नान—कावेरी नर्मदा वेणी तुंगभद्रा सरस्वती । गंगा च यमुना चैव ताभ्यः स्नानार्थं मयाहृतम् ॥ गृहाण त्वं रमाकांत स्नानाय श्रद्धया जलम् ॥शु० स्ना० स० ।

वस्त्र—तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे । छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥

सर्वभूषाधिके सौम्ये लोक लज्जा निवारणे।
मयोपपादिते तुभ्यं गृह्यतां वाससी शुभैः ।
व० उपवस्त्रं स० । पुनराचमनीयं समर्पयामि ।

यज्ञो०—ॐ तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः । गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥

नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम् ।
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ॥
य० स० यज्ञोपवीतान्ते आचमनम् ।

गन्धं— ॐ तं यज्ञं वर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः । तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ॥

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥
गन्धं समर्पयामि ।

अक्षत—(श्वेत तिल या जौ चढ़ावे किन्तु चावल नहीं) ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत । अस्तोषत स्वभानवो प्रिया नविष्ठया मती योजान्विन्द्रते हरी ।

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ताः सुशोभिताः ।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ॥
अक्षतान् स० ।

पुष्पं—ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाꣳ सुरे स्वाहा ॥ पु० समर्पयामि ॥

पुष्पमाला—ॐ ओषधीः प्रति मोदध्वं पुष्पवती प्रसूवरीः । अश्वा इव सजित्वरी र्वीरुध पारयिष्णवः ।

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो ।
मयानीतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
पु० माला० स० ।

तुलसीपत्रं—ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्। मुखं किमस्यासीत् किंबाहू किमूरू पादा उच्येते ॥

तुलसीं हेमरूपां च रत्नरूपाञ्च मञ्जरीम् । भवमोक्षप्रदां तुभ्यमर्पयामि हरिप्रियाम् । ॐ विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे । इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥ तु० समर्पयामि नमः ।

अंगपूजनम्

ॐ दामोदराय नमः पादौ पूजयामि । ॐ माधवाय नमः जानुनीः पूजयामि । ॐ पद्मनाभाय नमः नाभिं पूजयामि । ॐ विश्वमूर्तये नमः उदरं पूजयामि । ॐ ज्ञानगम्याय नमः हृदयं पूजयामि । ॐ श्रीकण्ठाय नमः कण्ठं पूजयामि । ॐ सहस्रभानवे नमः बाहू पूजयामि । ॐ योगिने नमः नेत्रे पूजयामि । ॐ उरगाय नमः ललाटं पूजयामि । ॐ नाकसुरेश्वराय नगः नासिकां पूजयामि । ॐ श्रवणेशाय नमः श्रोत्रे पूजयामि । ॐ सर्वकर्मप्रदाय नमः शिखां पूजयामि । ॐ सहस्रशीर्ष्णे नमः शिरः पूजयामि । ॐ सर्वस्वरूपिणे नमः सर्वाङ्गं पूजयामि ।

ॐ मत्स्याय नमः । ॐ कूर्माय नमः । ॐ वराहाय नमः । ॐ नारसिंहाय नमः । ॐ वामनाय नमः । ॐ परशुरामाय नमः । ॐ रामाय नमः । ॐ कृष्णाय नमः । ॐ बौद्धाय नमः । ॐ कल्किने नमः । ॐ महाविष्णवे नमः॥ इति तुलसीदलानि समर्पयेत् ।

विल्वपत्रं— **तुलसीविल्वनिम्बैश्च जांवीरैरामलैः शुभैः ।**
पञ्चविल्वमिति ख्यातं प्रसीद परमेश्वर ॥ वि० स० ।

दुर्वा— **ॐ काण्डात्काण्डात् प्ररोहन्ती पुरुषः परुषस्परि ।**
एवा नो दूर्वे प्र तनु सहस्रेण शतेन च ॥
विष्ण्वादिसर्वदेवानां दूर्वे त्वं प्रीतिदा सदा ।
क्षीर सागर सम्भूते ! वंशवृद्धिकरी भव ॥ दू० स० ।

शमीपत्र— **शमी शमयते पापं शमी शत्रु विनाशिनी ।**
धारिण्यर्जुनबाणानां रामस्य प्रियवादिनी ॥ श० स० ॥

आभूषण— **ॐ रत्नकंकणवैदूर्यमुक्ताहारादिकानि च ।**
सुप्रसन्नेन मनसा दत्तानि स्वीकुरुष्व भोः ॥ आ० स० ।

अबीर गुलाल—

नानापरिमलैर्द्रव्यैर्निर्मितं चूर्णमुत्तमम् ।
अबीरनामकं चूर्णं गन्धं चारु प्रगृह्यताम् । आ० स० ।

सु० तै०—

अहिरिव भौगेः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः ।
हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमा पुमांसं परिपातु विश्वतः ॥
ॐ तैलानि च सुगन्धीनि द्रव्याणि विविधानि च ।
मया दत्तानि लेपार्थं गृहाण परमेश्वर ॥ सु० तैल० स० ॥

धूप—ॐ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः । उरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां—शूद्रो अजायत ॥ ॐ धूरसि धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्वयं वयं धूर्वामः देवानामसि वह्नितमं—सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमन्देवहूतमम् ॥

वनस्पति रसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥
धूपमाघ्रापयामि ॥

दीप—ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत ! श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ॥

साज्यं च वर्ति संयुक्तं वह्निना योजितं मया ।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम् ॥
दीपं दर्शयामि ।

नैवेद्यं—(तुलसी के साथ पांच ग्रास मुद्रा दिखावे)

'प्राणाय स्वाहा'—कनिष्ठा, अनामिका और अंगूठा मिलावे ॥१॥

'अपानाय स्वाहा'—अनामिका, मध्यमा और अंगूठा मिलावे ॥२॥

'व्यानाय स्वाहा'—मध्यमा तर्जनी और अंगूठा मिलावे ॥३॥

'उदानाय स्वाहा'—तर्जनी, मध्यमा अनामिका और अंगूठे मिलावे ॥४॥

'समानाय स्वाहा'—सब अंगुलियां तथा अंगूठा मिलावे ।

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत । पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकां २ अकल्पयन् । नैवेद्यं निवे० मध्ये पानीयं ।

एलोशीरलवंगादि कर्पूरपरिवासितम् । प्राशनार्थं कृतं तोयं गृहाण परमेश्वर । म० जलं समर्पयामि ।

ऋतुफल—

बीजपूराम्रमनस-खर्जूरी-कदली फलम् ।
नारिकेलफलं दिव्यं गृहाण परमेश्वर ॥ ऋ० स०

आचमनं—

कर्पूरवासितं तोयं मन्दाकिन्याः समाहृतम् ।
आचम्यतां जगन्नाथ ! मया दत्तं हि भक्तितः ॥ आ० स० ॥

अखण्ड ऋतुफल—

फलेन फलितं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ।
तस्मात् फलप्रदानेन पूर्णाः सन्तु मनोरथाः ॥ अ० स० ॥

ताम्बूल-पूगीफल—

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवाः यज्ञमतन्वत ।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः । तां० स० ।
पूगीफलादि सहितं कर्पूरेण च संयुतम् ।
ताम्बूलं कोमलं दिव्यं गृहाण परमेश्वर ॥

दक्षिणा—हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम ।

पूजाफलसमृद्ध्यर्थं दक्षिणा च तवाग्रतः ।
स्थापिता तेन मे प्रीतः पूर्णान् कुरु मनोरथान् ॥ दक्षिणा स० ।

आरती

प्रथम चरणों की चार, नाभी की दो, मुख की एक या तीन बार और समस्त अंगों की सात बार आरती करे। पश्चात् शंखजल भक्तों पर छिड़के ।

ॐ आ रात्रि पार्थिवꣳरजः पितुरप्रायि धामभिः । दिवः सदाꣳसि वृहती वि तिष्ठ स आत्त्वेषां वर्त्तते तमः ॥

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरन्तु प्रदीपितम् ।
आरार्तिक्यमहं कुर्वे पश्य मां वरदो भव ॥

विष्णुस्तुति

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं ।
विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभांगम् ॥
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं ।
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥१॥
आदौ देवकीदेवगर्भजननं गोपीगृहे वर्द्धनम् ।
मायापूतनजीवितापहरणं गोवर्द्धनोद्धारणम् ॥
कंसच्छेदनकौरवादि हननं कुन्तीसुतापालनम् ।
एतद्भागवतं पुराणकथितं श्रीकृष्ण लीलामृतम् ॥२॥
कस्तूरीतिलकं ललाटपटले वक्षःस्थले कौस्तुभम् ।
नासाग्रे वरमौक्तिकं करतले वेणु करे कंकणम् ॥
सर्वांगे हरिचन्दनं सुललितं कण्ठे च मुक्तावली ।
गोपस्त्री परिवेष्टितो विजयते गोपालचूड़ामणि ॥३॥
फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं वर्हावतंसप्रियम् ।
श्रीवत्सांकमुदार कौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम् ।
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गोगोप संघावृतम् ।
गोविन्दं कलवेणुवादन परं दिव्यांगभूषं भजे ॥४॥
यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्र मरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवैः
वेदैः सांगपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः ॥
ध्यानावस्थित-तद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो ।
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणाः देवाय तस्मै नमः ॥५॥

नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्त्रमूर्तये ।
सहस्त्रपादाक्षि शिरोरुबाहवे ।
सहस्त्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते ।
सहस्त्रकोटियुगधारिणे नमः ॥६॥

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥७॥

आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम् ।
सर्वदेव नमस्कारः केशवं प्रतिगच्छति ॥८॥
मूकं करोति वाचालं पंगुं लंघयते गिरिम् ।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम् ॥९॥
त्वमेव माता च पिता त्वमेव ।
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव।
त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥१०॥
पापोऽहं पापकर्माहं पापात्मा पापसम्भवः ।
त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष ! सर्व-पापहरो भव ॥११॥
कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनन्दनाय च ।
नन्दगोपकुमाराय गोविन्दाय नमोनमः ॥१२॥
ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्टदोहं ।
तीर्थास्पदं शिवविरञ्चिनुतं शरण्यम् ।
भृत्यार्तिहं प्रणतपालभवाब्धिपोतम् ।
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम् ॥१३॥
एकोऽपि कृष्णस्य कृतः प्रणामो ।
दशाश्वमेधावभृतेन तुल्यः ।
दशाश्वमेधी पुनरेति जन्म ।
कृष्णप्रणामी न पुनर्भवाय ॥१४॥

पुष्पांजलि

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् । ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥ ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने । नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे । स मे कामान् कामकामाय मह्यम् । कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु । कुवेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः ॥ ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भोज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात् सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापरार्धात् पृथिव्यै

समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति । तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुतस्यावसन् गृहे आवीक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासदः ॥ पुष्पांजलिं समर्पयामि ॥ ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात् । संबाहुभ्यां धमति सं पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव एकः । कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा वुद्धयात्मना वानुसृतस्वभावात् । करोमि यद्यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पये तत् ॥

प्रदक्षिणा

ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषंगिणः ।
तेषा ᳵ सहस्त्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि ॥

क्षमा-प्रार्थना

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं जनार्दन ।
यत्पूजितं मया देव ! परिपूर्णं तदस्तु मे ॥
यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव ! प्रसीद परमेश्वर ।
अनेन यथाशक्ति पूजनेन भगवान् श्रीविष्णुः
प्रीयतां न मम ॥

विसर्जन

यजमानहितार्थाय पुनरागमनाय च ।
गच्छन्तु च सुरश्रेष्ठाः ! स्वस्थाने परमेश्वराः ।

यजमान आशीर्वाद मन्त्र (अक्षत देवे)

अक्षतान् विप्रहस्तात्तु नित्यं गृह्णन्ति ये नराः ।
चत्वारि तेषां वर्धन्ते आयुर्विद्यायशो बलम् ॥
मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः ।
शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तव ॥
श्रीवर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात् पवमानं महीयते ।
धनं धान्यं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसम्बत्सरं दीर्घमायुः ॥

चरणामृत ग्रहण विधिः

वामहस्त पर वस्त्र रखकर दक्षिण हस्त रखे, पश्चात् चरणामृत लेकर पान करे। पृथ्वी पर नहीं गिरने दे।

तुलसी ग्रहण मन्त्र

पूजनानन्तरं विष्णोरर्पितं तुलसीदलम् ।
भक्षयेद् देहशुद्ध्यर्थं चान्द्रायणशताधिकम् ॥

श्रीकृष्ण चरणामृत-ग्रहण-मन्त्र

कृष्ण ! कृष्ण ! महाबाहो ! भक्तानामार्तिनाशन् ।
सर्वपापप्रशमनं पादोदकं प्रयच्छ मे ।

चरणामृत पान का मन्त्र

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् ।
विष्णुपादोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥

नैवेद्य ग्रहण मन्त्र

नैवेद्यमन्नं तुलसीविमिश्रितं विशेषतः पादजलेन विष्णोः । योऽश्नाति नित्यं पुरतो मुरारेः प्राप्नोति यज्ञायुतकोटिपुण्यम् ।

अथ शिव-पूजनम्

पवित्र होकर आचमन प्राणायाम करने के बाद संकल्प के अन्त में 'श्रीसाम्बसदाशिवप्रीत्यर्थं गणपत्यादि-सकल देवता-पूजनपूर्वकं श्री भवानीशंकरपूजनं करिष्ये ।' ऐसा कहकर संकल्प छोड़े। नीचे लिखे आवाहन मन्त्रों से मूर्तियों के समीप पुष्प छोड़े । मूर्ति न हो तो आवाहन करके पूजन करे।

शिव पूजने—विना भस्मत्रिपुण्ड्रेण विना रुद्राक्षमालया । शिवपूजा न कर्त्तव्या कृता तु विफला भवेत् ॥ हरो महेश्वरश्चैव शूलपाणिः पिनाकधृक् । पशुपतिः शिवश्चैव महादेवेति सर्जयेत् ॥

गणपति पूजनम्—ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे, निधीनां त्वा निधिपतिꣳ हवामहे, वसोमम । आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम् ॥

आवाहयामि पूजार्थं रक्षार्थं च मम क्रतोः ।
इहागत्य गृहाण त्वं पूजां यागं च रक्ष मे ।

पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करे ।

प्रार्थना— लम्बोदर ! नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥

पार्वती पूजन— हिमाद्रितनयां देवीं वरदां शंकरप्रियाम् ।
लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम् ।

पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करे।

ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन । ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ॥

नन्दीश्वर-पूजन

आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः। पितरञ्च प्रयन्त्स्वः ॥

गंध पुष्पादि से पूजा कर प्रार्थना करे ।

प्रैतु वाजी कनिक्रदन्नानद्द्रासभः पत्वा ।
भरन्नग्निं पुरीष्यं पाद्यायुषं पुरा ॥

वीरभद्रपूजन

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरंगैस्तुष्टुवाꣳ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ।

पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करे।

भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रारातिः सुभग भद्रो अध्वरः । भद्रा उत प्रशस्तयः ॥

स्वामी कीर्तिकेय पूजन

यदक्रन्द प्रथमं जायमान उद्यन्त्समुद्रादुत वा पुरीषात् । श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहु उपस्तुत्यं महि जातं ते अर्वन् ।

पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करे।

यत्र वाणाः सम्पतन्ति कुमाराः विशिखा हव । तन्न इन्द्रो वृहस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु ॥

कुवेर—पूजन

कुविदं यवमन्तो यव चिद्यथा दान्त्यनुपूर्वं वियूय। इहेहैषां, कृणुहि भोजनानि ये बर्हिषो नम उक्तिं यजन्ति ॥

पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करें।

वयꣳ सोम व्रते तब मनस्तनूषु विभ्रतः प्रजावंतः सचेमहि ॥

कीर्तिमुख पूजन

असवे स्वाहा वसवे स्वाहा विभवे स्वाहा विवस्वते स्वाहा गणश्रिये स्वाहा गणपतये स्वाहाभिभुवे स्वाहाऽधिपतये स्वाहा शूपायस्वाहा सꣳ सर्पाय स्वाहा चन्द्राय स्वाहा ज्योतिषे स्वाहा मलिम्लुचाय स्वाहा दिवापतये स्वाहा ॥

पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करें ।

ओजश्च मे सहश्च मे आत्मा च मे तनूश्चमे शर्म च मे वर्म च मेऽङ्गानि च मेऽस्थीनि च मे पुरुषि च मे शरीराणि च मे आयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥

जलहरी में सर्प का आकार हो तो सर्प का पूजन कर पश्चात् शिव पूजन करे ।

शिवपूजन

ध्यानम्—

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजत गिरिनिभं चारु चन्द्रावतंसं,
रत्ना कल्पोज्ज्वलांगं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् ।
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणै र्व्याघ्रकृत्तिं वसानं,
विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पंचवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥

आवाहन—ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः । साम्वसदा शिवाय नमः आवाहयामि ।

आसन—ॐ याते रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनी । तयानस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभि चाकशीहि ॥ साम्वसदा शिवायः नमः आसनं समर्पयामि ।

पाद्य—ॐ नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे । अथो ये अस्य सत्वानो हन्तेभ्योऽकरं नमः ॥

अर्घ्य—यामिषुं गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे । शिवां गिरित्र तां कुरु मा हिꣳसीः पुरुषं जगत् ॥ अ० स० ॥

आचमनीयम्—ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ॥ आ० स० ॥

स्नानं—असौ यस्ताम्रो अरुण उत बभ्रुः सुमङ्गलः । ये चैनꣳरुद्रा अभितो दिक्षुश्रिताः सहस्रशोऽवैषाꣳहेड ईमहे ॥

दुग्धस्नानं —पयः पृथिव्यां पयः ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः । पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् । गौक्षीरधामन् देवेश ! गोक्षीरेण मया कृतम् । स्नपनं देवदेवेश ! गृहाण शिवशंकर ॥ दु० स्ना०, पुनर्जलस्नानं समर्पयामि ।।

दधिस्नान—दधिक्राब्णोऽअकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः । सुरभिनो मुखा करत् प्रणआऽयुꣳषि तारिषत् ॥ दध्वा चैव मया देव ! स्नपनं क्रियते तव । गृहाण भक्त्या दत्तं मे सुप्रसन्नो भवाव्यय ! ॥ द० स० पुनर्जल-स्नानं समर्पयामि ।

घृतस्नानं—घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिः घृते श्रितो घृतम्वस्य धाम । अनुष्वधमा वह मादयस्व स्वाहाकृतं वृषभ वक्षिहव्यम् । सर्पिषा देवदेवेश ! स्नपनं क्रियते मया । उमाकान्त ! गृहाणेदं श्रद्धया सुरसत्तम ॥ घृ० स्ना० पुनर्जलस्नानं समर्पयामि ।

मधुस्नानं—मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः । मध्वीर्नः सन्त्वोषधीः । मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳरजः । मधुद्यौरस्तुनः पितः । मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमां २ अस्तु सूर्यः । माद्ध्वीर्गावो भवन्तु नः । इदं मधु मया दत्तं तव तुष्ट्यर्थमेव च । गृहाण शम्भो ! त्वं भक्त्या मम शांतिप्रदो भव ॥ म० स्ना० शु० स्ना० ।

शर्करास्नानं—अपाꣳ रसमुद्वयसꣳ सूर्य्ये सन्त समाहितम् । आपाꣳरसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयाम गृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येषते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् । सितया देवदेवेश ! स्नपनं क्रियते मया । गृहाण शंभो ! मे भक्त्या मम शान्तिप्रदो भव ॥

श्री भगवते साम्वसदाशिवाय नमः शर्करास्नानं समर्पयामि । शर्करा स्नानान्ते शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि ॥

पञ्चामृतस्नान—

पञ्चामृतं मयानीतं पयोदधि समन्वितम् ।
घृतं मधु शर्करया सह स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।

पं० स्नानं स० ।

शुद्धोदक स्नानं—ॐ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त आश्विनः । श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णायामा अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः ॥ शुद्ध स्नानं समर्पयामि नमः ॥

रुद्र अभिषेक (जलधारा छोड़ें)

ॐ नमस्ते रुद्र मन्यव उतो त इषवे नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः ॥१॥ या ते रुद्र शिवा तनूरघोरा पापकाशिनी । तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभि चाकशीहि ॥२॥ यामिषुङ्गिरि शन्त हस्ते विभर्ष्यस्तवे । शिवां गिरित्र तां कुरु मा हिꣳ सीः पुरुषञ्जगत् ॥३॥ शिवेन वचसा त्वागिरिशाच्छा वदामसि । यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मꣳ सुमना असत् ॥४॥ अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् । अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन् सर्वांश्च यातुधान्यो धराचीः परासुव ॥५॥ असौ यस्ताम्रो अरुण उत बभ्रुः सुमङ्गलः । ये चैनꣳ रुद्रा अभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशो वैषा ꣳ हेड ईमहे ॥६॥ असौ योऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः । उतैनङ्गोपा अदृशन्नदृशन्नुदहार्यः स दृष्टो मृडयाति नः ॥७॥ नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे । अथो ये अस्य सत्वानोऽहं तेभ्योऽकरन्नमः ॥८॥ प्रमुंच धन्वनस्त्वमुभयो रार्त्योर्ज्याम् । याश्च ते हस्त इषवः पराता भगवो वप ॥९॥ विज्यन्धनुः कपर्दिनो विशल्यो बाणवां २ उत । अनेशन्नस्य या इषव आभुरस्य निषङ्गधिः ॥१०॥ या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः । तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज ॥११॥ परि ते धन्वनो हेतिरस्मान् वृणक्तु विश्वतः । अथो य इषुधिस्तवारे अस्मिन्नि धेहि तम् । ।१२॥ अवतत्य धनुष्ट्वꣳ सहस्राक्ष शतेषुधे । निशीर्य शल्यानाम्मुखा शिवो नः सुसमुना भव ॥१३॥ नमस्ते आयुधाया नातताय धृष्णवे । उभाब्भ्यामुत ते नमो बाहुभ्यां तव धन्वने ॥१४॥ मानो महान्तमुत मा नो अर्भकम्मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् । मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्ररीरिषः ॥१५॥ मा नस्तोके तनये मा न आयुषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः । मानो वीरान्रुद् भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सद्मित्वा हवामहे ॥१६ । । अभिषेकं समर्पयामि ।

विजया—ॐ विज्यं धनुः कपर्दिनो विशल्यो बाणवां २ उत । अनेशन्नस्य या इषव आभुरस्य निषंगधिः ॥ वि० स० ॥

वस्त्रं—ॐ असौ योऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः । उतैनं गोपा अदृश्रन्नदृश्रन्नुदहार्यः स दृष्टो मृडयाति नः ॥ वस्त्रं स० ॥

उपवस्त्रम्—ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमाऽसदत्स्वः । वासो अग्ने विश्वरूपꣳ संव्ययस्व विभावसो ॥ उपवस्त्रं समर्पयामि ॥

यज्ञोपवीतम्—नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे । अथो ये अस्य सत्वानोऽहं तेभ्योऽकरं नमः ॥

गंधम्—ॐ प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोर्रात्न्योर्ज्याम् । याश्च ते हस्त इषवः परा ता भगवो वप ॥ गन्धं समर्पयामि ॥

सुगन्धित द्रव्य—ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥ सुगन्धिद्रव्यं समर्पयामि ॥

पुष्पमाला—

ॐ विज्यं धनु कपर्दिनो विशल्यो बाणवां २ उत ।
अनेशन्नस्य या इषवः आभुरस्य निषंगधिः ॥
पुष्पमालां समर्पयामि ॥

अक्षतं—ॐ नमः शम्भवाय च मयोभवाय नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥ अ० स० ॥

पुष्पं—ॐ नमः पार्याय चावार्याय च नमः प्रतरणाय चोत्तरणाय च नमस्तीर्थ्याय च कूल्याय च नमः फेन्याय च । पुष्पं समर्पयामि ।

पुष्पमाला—नानापंकजपुष्पैश्च ग्रथितां पल्लवैरपि । विल्वपत्रयुतां मालां गृहाण सुमनोहराम् ॥ मा० स० ॥

विल्वपत्र—ॐ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो वर्मिणे च वरूथिने च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च ॥१ ॥

काशीवास निवासी च कालभैरव पूजनम् ।
प्रयागे माघमासे च विल्वपत्रं शिवार्पणम् ॥
त्रिशाखैर्बिल्वपत्रैश्च कोमलैश्चातिसुन्दरैः ।
त्वां पूजयामि विश्वेश प्रसन्नोभव सर्वदा ॥
अमृतोद्भवं श्री वृक्षं शंकरस्य सदाप्रियम् ।
तत्ते शम्भो प्रयच्छामि विल्वपत्र सुरेश्वर ॥

दर्शनं विल्वपत्रस्य स्पर्शनं पापनाशनम् ।
अघोरपापसंहार विल्वपत्रं शिवार्पणम् ॥
त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रं च त्रिधायुतम् ।
त्रिजन्मपापसंहारं विल्वपत्रं शिवार्पणम् ।
अखण्डैर्विल्वपत्रैश्च पूजये च्छिवशंकरम् ।
कोटिकन्यामहादानं विल्वपत्रं शिवार्पणम् ॥
गृहाण विल्वपत्राणि सपुष्पाणि महेश्वर ।
सुगन्धीनि भवानीश शिव त्वं कुसुमप्रिय ॥
विल्वपत्राणि समर्पयामि नमः ॥

दूर्वा–

ॐ काण्डात् काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि ।
एवा नो दूर्वे प्र तनु सहस्त्रेण शतेन च ॥ दूर्वां समर्पयामि ॥

शमीपत्र–

अमंगलानां शमनीं शमनी दुष्कृतस्य च ।
दुःस्वप्न नाशिनीं धन्यां प्रपद्येऽहं शमीं शुभाम् ।
श० समर्पयामि ।

आभूषण–

वज्र-माणिक्य वैदूर्य मुक्ता-विद्रुममण्डितम् ।
पुष्पराग-समायुक्तं भूषणं प्रति गृह्यताम् ॥ आ० स० ॥

परिमल द्रव्याणि—(अतर) अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिवाधमानः । हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्पुमा पुमांसं परि पातु विश्वतः ॥ सु० तैलं स० ॥

दिव्यगन्धसमायुक्तं महापरिमलाद्भुतम् । गन्धद्रव्यमिदं भक्त्या दत्तं स्वीकुरु शंकर ॥ श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः सुगन्धि द्रव्यं समर्पयामि ।

सिन्दूरम्—सिन्धोरिव प्राद्ध्वने शूघनासो । वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः । घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्त्यूर्मिभिः पिन्वमानः ॥ सिन्दूरं स० ॥

धूपं—ॐ नमः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च। नमो गिरिशयाय च शिपिविष्टाय च नमो मीढुष्टमाय चेषुमते च ॥ धूपमाघ्रापयामि ॥

दीपं—ॐ नमः आशवे चाजिराय च नमः शीघ्र्याय च शीभ्याय च नमः ऊर्म्याय चावस्वन्याय च नमो नादेयाय च द्वीप्याय च॥ दीपं दर्शयामि (हस्तप्रक्षालनम्) ॥

अंगपूजा

गन्ध, अक्षत और पुष्प आदि से भगवान् शिव की इस प्रकार अंगपूजा करें—

ॐ ईशानाय नमः पादौ पूजयामि ॥१॥ ॐ शंकराय नमः जंघे पूजयामि ॥२॥ ॐ शूलपाणये नमः गुल्फौ पूजयामि ॥३॥ ॐ शम्भवे नमः कटी पूजयामि ॥४॥ ॐ स्वयम्भुवे नमः गुह्यं पूजयामि ॥५॥ ॐ महादेवाय नमः नाभिं पूजयामि ॥६॥ ॐ विश्वकर्त्रे नमः उदरं पूजयामि ॥७॥ ॐ सर्वतोमुखाय नमः पार्श्वे पूजयामि ॥८॥ ॐ स्थाण्वे नमः स्तनौ पूजयामि ॥९॥ ॐ नीलकण्ठाय नमः कण्ठं पूजयामि ॥१०॥ ॐ शिवात्मने नमः मुखं पूजयामि ॥११॥ ॐ त्रिनेत्राय नमः नेत्रे पूजयामि ॥१२॥ ॐ नागभूषणाय नमः शिरः पूजयामि ॥१३॥ ॐ देवाधिदेवाय नमः सर्वांगं पूजयामि ॥१४॥

आवरणपूजा

ॐ अघोराय नमः ॥१॥ ॐ पशुपतये नमः ॥२॥ ॐ शिवाय नमः ॥३॥ ॐ विरूपाय नमः ॥४॥ ॐ विश्वरूपाय नमः ॥५॥ ॐ त्र्यम्बकाय नमः ॥६॥ ॐ भैरवाय नमः ॥७॥ ॐ कपर्दिने नमः ॥८॥ ॐ शूलपाणये नमः ॥९॥ ॐ ईशानाय नमः ॥१०॥ ॐ महेशाय नमः ॥११॥

एकादश-शक्तिपूजा

ॐ उमायै नमः ॥१॥ ॐ शंकरप्रियायै नमः ॥२॥ ॐ पार्वत्यै नमः ॥३॥ ॐ गौर्यै नमः ॥४॥ ॐ काल्यै नमः ॥५॥ ॐ कालिन्द्यै नमः ॥६॥ ॐ कोटर्यै नमः ॥७॥ ॐ विश्वधारिण्यै नमः ॥८॥ ॐ ह्रां नमः ॥९॥ ॐ ह्रीं नमः ॥१०॥ ॐ गंगादेव्यै नमः ॥११॥

गणपूजा

ॐ गणपतये नमः ॥१॥ ॐ कार्तिकेयाय नमः ॥२॥ ॐ पुष्पदन्ताय नमः ॥३॥ ॐ कपर्दिने नमः ॥४॥ ॐ भैरवाय नमः ॥५॥ ॐ शूलपाणये नमः ॥६॥ ॐ ईश्वराय नमः ॥७॥ ॐ दण्डपाणये नमः ॥८॥ ॐ नन्दिने नमः ॥९॥ ॐ महाकालाय नमः ॥१०॥

अष्टमूर्तिपूजा—ॐ शर्वाय क्षितिमूर्तये नमः, ॐ भवाय जलमूर्तये नमः। ॐ रुद्राय अग्निमूर्तये नमः। ॐ उग्रायवायुमूर्तये नमः। ॐ भीमाय आकाश मूर्तये नमः। ॐ ईशानाय सूर्यमूर्तये नमः। ॐ महादेवाय सोममूर्तये नमः। ॐ पशुपतये यजमान मूर्तये नमः।

तर्पण—ॐ भवाय देवाय नमः। ॐ शर्वाय देवाय नमः। ईशानाय देवाय नमः। पशुपतये देवाय नमः। रुद्राय देवाय नमः। उग्राय देवाय नमः। भीमाय देवाय नमः। महतो देवाय नमः। ॐ भवस्य देवस्य पत्न्यै नमः। ॐ शर्वस्य देवस्य पत्न्यै नमः। ॐ ईशानस्य देवस्य पत्न्यै नमः। ॐ पशुपते देवस्य पत्न्यै नमः। ॐ रुद्रस्य देवस्य पत्न्यै नमः। ॐ उग्रस्य देवस्य पत्न्यै नमः। ॐ भीमस्य देवस्य पत्न्यै नमः। ॐ महतो देवस्य पत्न्यै नमः।

एकादश रुद्रपूजा

ॐ अघोराय नमः ॥१॥ ॐ पशुपतये नमः ॥२॥ ॐ शर्वाय नमः ॥३॥ ॐ विरूपाक्षाय नमः ॥४॥ ॐ विश्वरूपिणे नमः ॥५॥ ॐ त्र्यम्बकाय नमः ॥६॥ ॐ कपर्दिने नमः ॥७॥ ॐ भैरवाय नमः ॥८॥ ॐ शूलपाणये नमः ॥९॥ ॐ ऐशानाय नमः ॥१०॥ ॐ महेश्वराय नमः ! ॥११॥

अष्टोत्तरशतशिवनाम–पूजा

(शिव के १०८ नामों से पुष्प, अक्षत आदि से शिव-पूजन करें)

ॐ अस्य श्रीशिवाष्टोत्तरशतनाममन्त्रस्य नारायणऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्रीसदाशिवो देवताः गौरी उमाशक्तिः श्रीसाम्बसदाशिवप्रीतये अष्टोत्तरशतनामभिः शिवपूजने विनियोगः।

शान्ताकारं शिखरिशयनं नीलकण्ठं सुरेशं,
विश्वाधारं स्फटिकसदृशं शुभ्रवर्णं शुभाङ्गम्।

गौरीकान्तं त्रितयनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं,
वन्दे शम्भुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥

ॐ शिवायः नमः ॥१॥ ॐ महेश्वराय नमः ॥२॥ ॐ शम्भवे नमः ॥३॥ ॐ पिनाकिने नमः ॥४॥ ॐ शशिशेखराय नमः ॥५॥ ॐ वामदेवाय नमः ॥६॥ ॐ विरूपाक्षाय नमः ॥७॥ ॐ कपर्दिने नमः ॥८॥ ॐ नीललोहिताय नमः ॥९॥ ॐ शंकराय नमः ॥१०॥ ॐ शूलपाणये नमः ॥११॥ ॐ खट्वाङ्गिने नमः ॥१२॥ ॐ विष्णुवल्लभाय नमः ॥१३॥ ॐ शिपिविष्टाय नमः ॥१४॥ ॐ अम्बिकानाथाय नमः ॥१५॥ ॐ श्रीकण्ठाय नमः ॥१६॥ ॐ भक्तवत्सलाय नमः ॥१७॥ ॐ भवाय नमः ॥१८॥ ॐ शर्वाय नमः ॥१९॥ ॐ त्रिलोकीशाय नमः ॥२०॥ ॐ शितिकण्ठाय नमः ॥२१॥ ॐ शिवप्रियाय नमः ॥२॥ ॐ उग्राय नमः ॥२३॥ ॐ कपालिने नमः ॥२४॥ ॐ कामारये नमः ॥२५॥ ॐ अन्धकासुरसूदनाय नमः ॥२६॥ ॐ गंगाधराय नमः ॥२७॥ ॐ ललाटाक्षाय नमः ॥२८॥ ॐ कालकालाय नमः ॥२९॥ ॐ कृपानिधये नमः ॥३०॥ ॐ भीमाय नमः ॥३१॥ ॐ परशु हस्ताय नमः ॥३२॥ ॐ मृगपाणये नमः ॥३३॥ ॐ जटाधराय नमः ॥३४॥ ॐ कैलासवासिने नमः ॥३५॥ ॐ कवचिने नमः ॥३६॥ ॐ कठोराय नमः ॥३७॥ ॐ त्रिपुरान्तकाय नमः ॥३८॥ ॐ वृषाङ्काय नमः ॥३९॥ ॐ वृषभारूढ़ाय नमः ॥४०॥ ॐ भस्मोद्धूलितविग्रहाय नमः ॥४१॥ ॐ सामप्रियाय नमः ॥४२॥ ॐ स्वरमयाय नमः ॥४३॥ ॐ त्रिमूर्त्तये नमः ॥४४॥ ॐ अश्विनीश्वराय नमः ॥४५॥ ॐ सर्वज्ञाय नमः ॥४६॥ ॐ परमात्मने नमः ॥४७॥ ॐ सोमसूर्य्याग्निलोचनाय नमः ॥४८॥ ॐ हविषे नमः ॥४९॥ ॐ यज्ञमयाय नमः ॥५०॥ ॐ पञ्चवक्त्राय नमः ॥५१॥ ॐ सदाशिवाय नमः ॥५२॥ ॐ विश्वेश्वराय नमः ॥५३॥ ॐ वीरभद्राय नमः ॥५४॥ ॐ गणनाथाय नमः ॥५५॥ ॐ प्रजापतये नमः ॥५६॥ ॐ हिरण्यरेतसे नमः ॥५७॥ ॐ दुर्धर्षाय नमः ॥५८॥ ॐ गिरीशाय नमः ॥५९॥ ॐ गिरिशाय नमः ॥६०॥ ॐ अनघाय नमः ॥६१॥ ॐ भुजंगभूषणाय नमः ॥६२॥ ॐ भर्गाय

नमः ॥६३ ॥ ॐ गिरिधन्वने नमः ॥६४ ॥ ॐ गिरि प्रियाय नमः ॥६५ ॥ ॐ अष्टमूर्त्तये नमः ॥६६ ॥ ॐ अनेकात्मने नमः ॥६७ ॥ ॐ सात्विकाय नमः ॥६८ ॥ ॐ शुभविग्रहाय नमः ॥६९ ॥ ॐ शाश्वताय नमः ॥७० ॥ ॐ खण्डपरशवे नमः ॥७१ ॥ ॐ अजाय नमः ॥७२ ॥ ॐ पाशविमोचकाय नमः ॥७३ ॥ ॐ कृत्तिवाससे नमः ॥७४ ॥ पुरारातये नमः ॥७५ ॥ ॐ भगवते नमः ॥७६ ॥ ॐ प्रमथाधिपाय नमः ॥७७ ॥ ॐ मृत्युञ्जयाय नमः ॥७८ ॥ ॐ सूक्ष्मतनवे नमः ॥७९ ॥ ॐ जगद्व्यापिने नमः ॥८० ॥ ॐ जगद्गुरवे नमः ॥८१ ॥ ॐ व्योमकेशाय नमः ॥८२ ॥ ॐ महासेनाय नमः ॥८३ ॥ ॐ जनकाय नमः ॥८४ ॥ ॐ चारुविक्रमाय नमः ॥८५ ॥ ॐ रुद्राय नमः ॥८६ ॥ ॐ भूतपतये नमः ॥८७ ॥ ॐ स्थाणवे नमः ॥८८ ॥ ॐ अहिर्बुध्न्याय नमः ॥८९ ॥ ॐ दिगम्बराय नमः ॥९० ॥ ॐ मृडाय नमः ॥९१ ॥ ॐ पशुपतये नमः ॥९२ ॥ ॐ देवाय नमः ॥९३ ॥ ॐ महादेवाय नमः ॥९४ ॥ ॐ अव्ययाय नमः ॥९५ ॥ ॐ हरये नमः ॥९६ ॥ ॐ पुष्पदन्तभिदे नमः ॥९७ ॥ ॐ भगनेत्रभिदे नमः ॥९८ ॥ ॐ अपवर्गप्रदाय नमः ॥९९ ॥ ॐ अव्यग्राय नमः ॥१०० ॥ ॐ अव्यक्ताय नमः ॥१०१ ॥ ॐ अनन्ताय नमः ॥१०२ ॥ ॐ दक्षाध्वरहराय नमः ॥१०३ ॥ ॐ सहस्राक्षाय नमः ॥१०४ ॥ ॐ तारकाय नमः ॥१०५ ॥ ॐ हराय नमः ॥१०६ ॥ ॐ सहस्रपदे नमः ॥१०७ ॥ ॐ श्रीपरमेश्वराय नमः ॥१०८ ॥

नैवेद्य—ॐ अवतत्य धनुष्ट्वꣳ सहस्राक्ष शतेषुधे । निशीर्य शल्यानां मुखा शिवो नः सुमना भव ॥

मध्ये पानीयं—ॐ नमः सोम्याय च प्रतिसर्याय च नमो याम्याय च क्षेम्याय च नमः श्लोक्याय चावसान्याय च नमः ऊर्वर्याय च खल्वाय च नमोवन्याय ॥ मध्ये पानीयं समर्पयामि ।

ऋतुफलं—ॐ याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वꣳ हसः ॥

फलानि यानि रम्याणि स्थापितानि तवाग्रतः । तेन से सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥ ऋ० स० ॥

आचमनं—

त्रिपुरान्तक दीनार्तिनाश श्रीकण्ठ शाश्वत ।
गृहाणाचमनीयं च पवित्रोदककल्पितम् ॥ आ० स० ॥

धतूरफलम्—कार्षिरसि समुद्रस्य त्वा क्षित्या उन्नयामि । समापोऽअद्भिरग्मत समोषधीभि रौषधीः ॥ धत्तूरफल० ॥

अखण्डफलं—

कूष्माण्डं मातुलुंगञ्च नारिकेल फलानि च ।
रम्याणि पार्वतीकान्त सोमेश प्रतिगृह्यताम् ॥ आ० म० ॥

ताम्बूलपूगीफलं—ॐ इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्रभरामहे मतीः । यथा शमसद् द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्ननातुरम् । ता० पू० फ० समर्पयामि ।

दक्षिणा—मा नो महान्तमुतमा नोऽअर्भकं मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् । मा नो बधीः पितरं मोत मातरं मा न प्रियास्तन्वोरुद्ररीरिषः ॥

न्यूनातिरिक्तपूजायां सम्पूर्णफलहेतवे ।
दक्षिणां कांचनीं देव स्थापयामि तवाग्रतः ॥ द० द्रव्यं स० ।

नमस्कार—ॐ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च । नमः शिवाय च शिवतराय च ।

तव तत्त्वं न जानामि कीदृशोऽसि महेश्वर ।
यादृशोऽसि महादेव तादृशाय नमो नमः ॥
त्रिनेत्राय नमस्तुभ्यं उमादेहार्धधारिणे ।
त्रिशूल धारिणे तुभ्यं भूतानां पतये नमः ॥
गंगाधर नमस्तुभ्यं वृषभध्वजनमोऽस्तुते ।
आशुतोष नमस्तुभ्यं भूयो भूयो नमो नमः ॥

साम्ब सदाशिव आरती

आरात्रि पार्थिवꣳ रजः पितुरप्रायि धामभिः दिव सदाꣳ सि बृहती वितिष्ठस आत्त्वेषं वर्त्तते तमः ॥ अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवतादित्या देवता मरुतो देवता । विश्वेदेवा देवता वृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ॥

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम् । सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानीसहितं नमामि ॥

शिवस्तुति (पुष्पांजलि)

असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे ।
सुरतरुवरशाखा लेखनीपत्रमुर्वी ।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं ।
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ॥
वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुं वन्दे जगतकारणं ।
वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वन्दे पशूनाम्पतिम् ॥
वन्दे सूर्य-शशाङ्क-वह्नि नयनं वन्दे मुकुन्दप्रियम् ।
वन्दे भक्तजनाश्रयञ्च वरदं वन्दे शिवं शंकरम् ॥
शान्तं पद्मासनस्थं शशिधरमुकुटं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं ।
शूलं वज्रं च खड्गं परशुमभयदं दक्षिणांगे वहन्तम् ॥
नागं पाशं च घण्टां डमरुकसहितम् साङ्कुशं बामभागे ।
नानाल ङ्कारयुक्तं स्फटिक मणिनिभं पार्वतीशं नमामि ॥

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचराश्चिताभस्मालेपः स्त्रगपि नृकरोटीपरिकरः ॥

अमंगल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं ।
तथापि स्मर्तृणां वरद परमं मंगलमसि ।
त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देवदेव ।
पापोऽहं पापकर्माहं पापात्मा पापसम्भवः ।
त्राहि मां पार्वतीनाथ सर्वपापहरोभव ।

'कालहर कण्टकहर दुःखहर दरिद्र्यहर हरहर महादेव शिवशम्भो वं लहरी । जै जै लहरी ।

आगे लिखे मन्त्रों से गाल बजाते हुए बम् बोलकर जलहरी का जल नेत्रों पर लगावे ।

निरावलम्बस्य ममावलम्बं विपाटिताशेषविपत्कदम्बम् ।
मदीयपापाचलपातशम्बं प्रवर्ततां वाचि सदैव बम् बम् ।

पञ्चांग-प्रणाम—मन में स्मरण, नेत्रों से दर्शन, वाणी से नामोच्चारण करते हुए, दोनों हाथ जोड़कर मस्तक झुकाकर प्रणाम करे।

प्रदक्षिणा (अर्धप्रदक्षिणा) करें

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे ॥

क्षमा-प्रार्थना— प्रपन्नं पाहि मामीश भीतं मृत्युग्रहार्णवात् ।
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् ।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्य-भावेन रक्ष मां परमेश्वर ॥
अनेन पूजनेन श्रीसाम्बसदाशिवः प्रीयताम् ॥

पार्थिव-शिव-पूजनम् (भूमि-प्रार्थना)

पवित्र होकर संकल्पवाक्य के अन्त में 'पार्थिवलिंगपूजनं करिष्ये' कह कर संकल्प का जल छोड़ें। सूर्य को अर्घ्य देकर नीचे लिखे मन्त्र से भूमि की प्रार्थना करें।

ॐ सर्वाधार धरे देवी त्वद्रूपां मृत्तिकामिमाम्।
गृहीष्यामि प्रसन्ना त्वं लिंगार्थं भव सुप्रभे॥

'ॐ ह्रां पृथिव्यै नमः नीचे लिखे मन्त्र से मृत्तिका को ग्रहण करे।

उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना। मृत्तिके त्वां च गृह्णामि प्रजया च धनेन च॥ ॐ हराय नमः "जल को अभिमन्त्रित करे। "ॐ महेश्वराय नमः" मिट्टी की शिवजी की मूर्ति बनावे "ॐ शूलपाणये नमः" मूर्ति की स्थापना करे।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य विष्णु महेश्वरा ऋषयः ऋग्यजुः सामानिच्छंदांसि क्रियामयवपुः प्राणाख्या देवता आं बीजं ह्रीं शक्तिः क्रौं कीलकं, देवप्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः॥

ॐ अस्य श्रीविशपञ्चाक्षरमन्त्रस्य वामदेव ऋषिरनुष्टुप् छन्दः श्रीसदाशिवो देवता ॐ बीजं, नमः शक्तिः, शिवाय कीलकं मम साम्बसदाशिवप्रीत्यर्थं न्यासे पूजने च विनियोगः।

अङ्गन्यासः—ॐ वामदेवाय ऋषये नमः शिरसि। ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। सदाशिव-देवतायै नमः। हृदि। ॐ बीजाय नमः गुह्ये। ॐ शक्तये नमः पादयोः। ॐ शिवाय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे। नं तत्पुरुषाय नमः हृदये। ॐ मं अघोराय नमः पादयोः। ॐ शिं सद्योजाताय नमः गुह्ये। ॐ वां वामदेवाय नमो मूर्ध्नि। ॐ यं ईशानाय नमः मुखे।

करन्यास—ॐ अंगुष्णभ्यां नमः। ॐ नं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ मं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ शिं अनामिकाभ्यां हुँ। ॐ वां कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ॐ यं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षंड्गन्यासः—ॐ हृदयाय नमः। ॐ नं शिरसे स्वाहा। ॐ में शिखायै वषट्। ॐ शिं कवचाय हुँ। ॐ वां नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ यं अस्त्राय फट्।

ऋष्यादि न्यास—ॐ ब्रह्मा-विष्णु-रुद्रऋषिभ्यो नमः शिरसि। ऋग्यजुः सामछन्दोभ्यो नमो मुखे। प्राणाख्यदेवतायै नमः हृदि। आं बीजाय नमः हृदि। आं बीजाय नमो गुह्ये। ह्रीं शक्तये नमः पादयोः। क्रौं कीलकाय नमः सर्वांगे। इति ऋष्यादिन्यासं कृत्वा।

अंगन्यास—ॐ ब्रह्मविष्णु रुद्र ऋषिभ्यो नमः शिरसि। ॐ ऋग्यजुः सामछन्दोभ्यो नमः, मुखे। ॐ प्राणाख्यदेवतायै नमः, हृदि। ॐ आं बीजाय नमः गुह्ये। ॐ ह्रीं शक्त्यै नमः पादयोः। ॐ क्रौं कीलकाय नमः, सर्वाङ्गेषु।

पार्थिव लिंग का स्पर्श करें—ॐ आं ह्री क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं सःसोऽहं शिवस्य प्राणाः इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं सःसोऽहं शिवस्य जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं सःसोऽहं शिवस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनः त्वक्चक्षुश्रोत्रघ्राणजिह्वा-पाणिपादपायूपस्थानि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

नीचे लिखे मंत्र से पुष्प समर्पण करें।

ॐ भूः पुरुषं साम्बसदाशिवं आवाहयामि।
ॐ भुवः पुरुषं साम्बसदाशिवं आवाहयामि।
ॐ स्वः पुरुषं साम्ब सदाशिवं आवाहयामि इत्यावाहयेत्।
स्वामिन् सर्व जगन्नाथ यावत्पूजावसानकम्।
तावत्त्वं प्रीतिभावेन लिंगेऽस्मिन् संनिधिं कुरु॥

"ॐ नमः शिवाय"। इति मन्त्रं जपेत्॥

पूजन कर नीचे लिखे मन्त्र से विसर्जन करे।

विसर्जन—हरो महेश्वरश्चैव शूलपाणिः पिनाक्धृक्। शिवः पशुपतिश्चैव महादेव विसर्जनम्॥

दुर्गा-पूजा विधिः

शुद्ध मृत्तिका में यव अथवा गेहूं रोपण कर उस पर कलशस्थापन विधि से कलश स्थापन करें, आचमन प्राणायाम करके संकल्पवाक्य के अन्त में 'ममेहजन्मनि' दुर्गा-प्रीति द्वारा सर्वापच्छान्तिपूर्वकं दीर्घायुविपुलधनपुत्र-पौत्राद्य विच्छिन्नसंतति-बुद्धि, स्थिर लक्ष्मी, कीर्त्तिलाभ-शत्रुपराजय प्रमुख-चतुर्विध पुरुषार्थ सिद्धयर्थं कलश-स्थापनं दुर्गापूजनं करिष्ये। तत्र निर्विघ्नतासिद्धयर्थं स्वस्तिवाचनम्, पुण्याहवाचनम्, गणपत्यादिपूजनं च करिष्ये।'

यह कह कर संकल्प करें। पश्चात् नीचे लिखे संकल्प से ब्रह्मा का वरण करें।

ॐ अद्य दुर्गापूजन पूर्वकं मार्कण्डेय पुराणान्तर्गतदुर्गासप्तशती-पाठकरणार्थं एभिर्वरणद्रव्यैः अमुक गोत्रं अमुकशर्माणं ब्राह्मणं त्वामहं वृणे॥ पश्चात् ब्राह्मण 'वृतोऽस्मि' कहे।

पूर्वोक्त विधि से स्वस्तिवाचन, पुण्याहवाचन, गणपति-गौरी-पूजन कलशस्थापन, नवग्रह, पंचलोकपाल, दशदिक्पाल, षोडशमातृका तथा चतुःषष्टियोगिनी का पूजन करके भगवती का, वाहन तथा भैरव, क्षेत्रपाल ध्वजा आदि का पूजन करे।

भैरव-पूजनम्

ॐ करकलितकपालः कुण्डली दण्डपाणि—
स्तरुणतिमिर नीलो व्यालयज्ञोपवीती॥

क्रतुसमय सपर्या विघ्नविच्छेदहेतु-
र्जयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥

देवी-ध्यानम्

देव पूजन करके नीचे लिखा ध्यान करे।

ॐ विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिं स्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभि-रासेविताम् ॥
हस्तैश्चक्रगदासिखेटविशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं।
विभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥

आवाहनं— हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजां।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥
आगच्छ वरदे देवी दैत्यदर्प निषूदिनि।
पूजां गृहाण सुमुखी नमस्ते शंकर प्रिये ॥
आवाहनार्थंपुष्पं सर्मपयामि।

आसनं—तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥

अनेकरत्नसंयुक्तं नानामणिगणान्वितम्।
कार्तस्वरमयं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम् ॥ आ० स०।

पाद्यं—अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम्। श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मादेवी जुषताम् ॥

गंगादि-सर्वतीर्थेभ्यो मया प्रार्थनयाहृतम्।
तोयमेतन्मुखस्पर्शं पाद्यार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ पा० स०।

अर्घ्यं—कांसोस्मितां हिरण्यप्राकार मार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् ॥ पद्मेस्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥

गन्धपुष्पाक्षतैर्युक्तमर्घ्यं सम्पादितं मया।
गृहाण त्वं महादेवि प्रसन्ना भव सर्वदा ॥ अ० स०।

आचमन—चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टा-मुदाराम्। तां पद्मनीमीं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मेनश्यतां त्वां वृणोमि ॥

आचम्यतां त्वया देवि ! भक्तिं मे ह्यचलां कुरु।
ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च पराङ्गतिम्॥ आ० स०।

स्नान—पंचनद्यः सरस्वती मपियन्ति सस्रोतसः। सरस्वती तु पञ्चधा सोद्देशेऽभवत्सरित।

जाह्नवी तोयमानीतं शुभं कर्पूरसंयुतम्।
स्नापयामि सुरश्रेष्ठे त्वां पुत्रादिफलप्रदाम्॥ स्ना० स०।

दुग्धस्नान—ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयःस्वती प्रदिशः सन्तुमह्यम्।

कामधेनु समुत्पन्नं सर्वेषां जीवनं परम्।
पावनं यज्ञहेतुश्च पयः सनानार्थमर्पितम्॥
पयः स्नानं समर्पयामि। शुद्ध जलेन स्नापयामि।

दधिस्नानम्—ॐ दधि क्राब्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः। सुरभिनो मुखाकरत् प्रण आयूꣳषि तरिषत॥

पयस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम्।
दध्यानीतं मया देवि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥
दधि स्नानं सम०। शुद्ध जलेन स्नापयामि।

घृतस्नानम्—ॐ घृतं घृतपावानः पिवत वसां वसा-पावानः पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा। दिशः प्रदिशः आदिशो विदिशः उद्दिशो दिगभ्यः स्वाहा।

नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसन्तोषकारकम्।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥
घृत स्नानं सम०। शुद्ध जलेन स्नापयामि।

मधुस्नानम्—ॐ मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः॥ मधुनक्त मुतोषसोमधुमत् पार्थिवꣳरजः मधुद्यौरस्तु नः पिता॥ मधुमान्नो वनस्पतिः मधुमाँ-२ अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः॥

तरु पुष्प समुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु।
तेजः पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥
मधुस्नानं समर्पयामि। शुद्ध जलेन स्नापयामि॥

शर्करास्नानम्—ॐ अपाꣳरसमुद्वयसꣳसूर्ये सन्त समाहितम्। अपाꣳरसस्य यो रसः तं वो गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्॥

इक्षुरस समुद्भूता शर्करा पुष्टिकारका।
मलापहारिका दिव्या स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥
शर्करा स्नानं समर्पयामि। शुद्ध जलेन स्नापयामि॥

पञ्चामृतस्नानं—यन्मधुनो मधव्यं परमꣳरूपमन्नाद्यम्। तेनाहं मधुनो मधव्येन परमेण रूपेणान्नाद्येन परमो मधव्योऽअन्नादोऽसानि॥

पयोदधिघृतं चैव मधु शर्करयान्वितम्।
पञ्चामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥ प० स०।

शुद्धोदकस्नानं—शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त आश्विनाः। श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा वामाऽअवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः॥

ॐ परमानन्दबोधाब्धिनिमग्ननिजमूर्तये।
साङ्गोपाङ्गमिदं स्नानं कल्पयाम्यहमीशिते। शु० स्नानं स०।

वस्त्रं—ॐ उपैतुमां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह। प्रादुर्भूतोऽस्मिराष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिं वृद्धिं ददातुमे॥

वस्त्रञ्च सोमदैवत्यं लज्जायास्तु निवारणम्।
मया निवेदितं भक्त्या गृहाण परमेश्वरि॥ वस्त्रं० स०।

उपवस्त्रं—आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथविल्वः। तस्य फलानि तपसानु-दन्तु मायान्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः॥

ॐ यामाश्रित्य महामाया जगत्सम्मोहिनी सदा।
तस्यै ते परमेशायै कल्पया- म्युत्तरीयकम्॥ उपवस्त्रं स०।

गन्धं—गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्॥

परमानन्दसौभाग्य पूरिपूर्णदिगन्तरे।
गृहाण परमं गन्धं कृपया परमेश्वरि॥ गन्धं समर्पयामि।

कुंकुम—क्षुत्पिपासा मलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्। अभूतिमसमृद्धिं च सर्वं निर्णुद मे गृहात्॥

कुंकुमं कान्तिदं दिव्यं कामिनीकामसम्भवम्।
कुंकुमेनार्चिते देवि प्रसीद परमेश्वरि॥ कु० स०।

आभूषणम्—उपैतु मां देवसखा कीर्तिश्च मणिना सह। प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिं वृद्धिं ददातुमे॥ सैभाग्य सूत्रं स०।

हारकङ्कणकेयूरमेखलाकुण्डलादिभिः।
रत्नाढ्यं कुंडलोपेतं भूषणं प्रतिगृह्यताम्॥ आ. स.।

सिन्दूरं—सिन्धोरिव प्राद्ध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति बह्वाः। घृतस्यधारा अरुषो न वाजीकाष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः॥

सिन्दूरमरुणाभासं जपाकुसुमसन्निभम्।
पूजितासि मया देवि प्रसीद परमेश्वरि॥ सि० स०।

कज्जलं—वृत्रस्यासि कनीनकश्चक्षुर्दा असि चक्षुर्मे देहि॥

चक्षुर्भ्यां कज्जलं रम्यं सुभगे शान्तिकारिके।
कर्पूरज्योतिरुत्पन्नं गृहाण परमेश्वरि॥ क० स०।

सौभाग्यद्रव्यं—

सौभाग्यसूत्रं वरदे ! सुवर्णमणिसंयुते।
कण्ठे बध्नामि देवेशि ! सौभाग्यं देहि मे सदा।
सौ० द्र० स०।

सुगन्ध तैलं (अतर) —

चन्दनागरुकर्पूरैः संयुतं कुंकुमं तथा।
कस्तूर्यादि- सुगन्धांश्च सर्वाङ्गेषु विलेपनम्॥ सु० स०।

परिमलद्रव्यं—अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुर्ज्याया हेतिं परिवाधमानः। हस्तघ्नो विश्वावयुनानि विद्वान पुमा पुमांसं परिपातु विश्वतः॥

हरिद्रारञ्जिते देवि सुखसौभाग्यदायिनि।
तस्मात्त्वां पूजयाम्यत्र सुखशान्तिं प्रयच्छ॥ परि द्र० स०।

अक्षतं—अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रिया अधूषत। अस्तोषत् स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजान् विन्द्रते हरी ॥

रञ्जिताः कुंकमौघेन अक्षताश्चातिशोभनाः ।
ममैषा देवि दानेन प्रसन्ना भव शोभने॥ अ० स० ।

पुष्प— मन्दारपारिजातादि पाटलीकेतकानि च।
जातीचम्पकपुष्पाणि गृहाणेमानि शोभने ॥ पु० स० ।

पुष्पमाला—श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्या वहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाण मुम्म इषाण सर्वलोकं म इषाण ॥

सुरभिपुष्पनिचयैः ग्रथितां शुभमालिकाम् ।
ददामि तव शोभार्थं गृहाण परमेश्वरि॥ पु० मा० स० ॥

अङ्गपूजनम्

ॐ दुर्गायै नमः पादौ पूजयामि। ॐ महाकाल्यै नमः गुल्फौ पूजयामि। ॐ मङ्गलायै नमः जानुद्वयं पूजयामि। ॐ कात्यायिन्यै नमः ऊरुद्वयं पूजयामि। ॐ भद्रकाल्यै नमः कटिं पूजयामि। ॐ कमलवासिन्यै नमः नाभिं पूजयामि। ॐ शिवायै नमः उदरं पूजयामि। ॐ क्षमायै नमः हृदयं पूजयामि। ॐ कौमार्यै नमः स्तनौ पूजयामि। ॐ उमायै नमः हस्तौ पूजयामि। ॐ महागौर्यै नमः दक्षिणबाहुं पूजयामि। ॐ वैष्णव्यै नमः वामबाहुं पूजयामि। ॐ रमायै नमः स्कन्धौ पूजयामि। ॐ स्कन्दमात्रे नमः कण्ठं पूजयामि। ॐ महिषासुरमर्दिन्यै नमः नेत्रे पूजयामि। ॐ सिंहवाहिन्यै नमः मुखं पूजयामि। ॐ माहेश्वर्यै नमः शिरः पूजयामि। ॐ कात्यायिन्यै नमः सर्वाङ्गं पूजयामि।

इत्यङ्गपूजनम्

अथ आवरणपूजनम्

तत्र यन्त्रषट्कोणस्थपश्चिमकोणे महालक्ष्मीपृष्ठभागे सरस्वतीब्रह्मभ्यां नमः; सरस्वतीब्रह्माणमावाहयामीत्येवं सर्वत्रवाहने वाच्यम्०१। एवं नैर्ऋत्यकोणे—गौरी- रुद्राभ्यां०२। वायुकोणे—लक्ष्मीहृषीकेशाभ्यां०३। पूर्वकोणे—अष्टादशभुजायै०४। अग्निकोणे—दशाननायै०५। ईशान-कोणे—अष्टभुजायै०६। दयाब्धे त्राहि संसार- सर्पान्मां शरणागतम्। भक्त्या

समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्। अनेन प्रथमावरणार्चनेन भगवती श्रीमहाकाली प्रीयताम् ॥१ ॥

पुनः षट्कोणेषु प्रागादिषु—ॐ नं नन्दजायै०१। ॐ रं रक्तदन्तिकायै०२। ॐ शां शाकम्भर्यै०३। ॐ दुं दुर्गायै०४। ॐ भीं भीमायै०५। ॐ भ्रां भ्रामर्यै०६। दयाब्धे त्राहि० द्वितीयावरणार्चनम्। अनेन द्वितीयावरणार्चनेन भगवती श्री महाकाली प्रीयताम् ॥२ ॥

षट्कोणाद् बहिराग्नेयादिचतुर्भागेषु—जं जयायै०१। ॐ विं विजयायै०२। ॐ जं जयन्त्यै०३। ॐ अं अपराजितायै०४। षट्कोणपार्श्वयोः दक्षिणभागे—ॐ सिंहाय०५। उत्तरभागे—ॐ महिषाय०६। दयाब्धे० तृतीयावरणार्चनम्। अनेन तृतीया वरण पूजनेन भगवती दुर्गा प्रीयताम् ॥३ ॥

अष्टपत्रेषु प्रागादिषु—ॐ ब्रां ब्राह्म्यै०। ॐ मां माहेश्वर्यै०२। ॐ कौं कौमार्यै०३। ॐ वैं वैष्णव्यै०४। ॐ वां वाराह्यै०५। ॐ नां नारसिंह्यै०६। ॐ ऐं ऐन्द्र्यै०७। ॐ शिं शिवदूत्यै नमः८। ॐ चां चामुण्डायै०९। दयाब्धे० चतुर्थावरणार्चनम्। अनेन० ॥४ ॥

पुनरष्टदलेषु प्रागादिषु—ॐ अं असितांगभैरवाय०१। रुं रुरुभैरवाय०२। ॐ चं चण्डभैरवाय०३। ॐ क्रों क्रोधभैरवाय०४। ॐ उं उन्मत्तभैरवाय०५। ॐ कं कपालभैरवाय०६। ॐ भीं भीषणभैरवाय०७। ॐ सं संहारभैरवाय०८। दयाब्धे० पञ्चमावरणार्चनम्। अनेन पञ्चमावरणार्चनेन भगवती प्रीयताम् ॥५ ॥

चतुर्विंशतिदलेषु प्रागादिक्रमेण—ॐ विं विष्णुमायायै०१। ॐ चें चेतनायै०२। ॐ बुं बुद्ध्यै०३। ॐ निं निद्रायै०४। ॐ क्षुं क्षुधायै०५। ॐ छां छायायै०६। ॐ शं शक्त्यै०७। ॐ तृं तृष्णायै०८। ॐ क्षां क्षात्र्यै०९। ॐ जां जात्यै०१०। ॐ लं लज्जायै०११। ॐ शां शान्त्यै०१२। ॐ श्रं श्रद्धायै०१३। ॐ कां कान्त्यै०१४। ॐ लं लक्ष्म्यै०१५। ॐ वं वृत्त्यै०१६। ॐ धृं धृत्यै०१७। ॐ स्मृं स्मृत्यै०१८। ॐ दं दयायै०१९। ॐ तुं तुष्ट्यै०२०। ॐ पुं पुष्ट्यै०२१। ॐ मां मात्रे०२२॥ ॐ भ्रां भ्रान्त्यै०२३। ॐ चिं चित्यै०२४। दयाब्धे० षष्ठावरणार्चनम्। अनेन षष्ठावरणार्चनेन भगवती प्रीयताम् ॥६ ॥

भूगृहरव्युदयप्रागादिषु—ॐ लं इन्द्राय०१ । ॐ रं आग्नेये०२ । ॐ मं यमाय०३ । ॐ क्षं निर्ऋत्यै०४ । ॐ वं वरुणाय०५ । ॐ यं वायवे०६ । ॐ सं सोमाय०७ । ॐ हं रुद्राय०८ । ऐशानीप्रागन्तराले—ॐ आं ब्रह्मणे०९ । वरुणनिर्ऋत्यन्तराले—ॐ ह्रीं शेषाय०१० । दयाब्धे० सप्तमावरणार्चनम् । अनेन सप्तमावरणार्चनेन भगवती प्रीयताम् ॥७ ॥

धूप—धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्व वयं धूर्वामः । देवानामसि वह्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम् ॥

दशाङ्गगुग्गुलं धूपं चन्दनागरुसंयुतम् ।
समर्पितं मया भक्त्या महादेवि ! प्रगृह्यताम् । धूपमाघ्रापयामि ।

दीपं—चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्य्यो अजायत । श्रोत्राद् वायुश्च प्राणश्च मुखादग्नि रजायत ।

घृतवर्तिसमायुक्तं महातेजो महोज्ज्वलम् ।
दीपं दास्यामि देवेशि सुप्रीता भव सर्वदा ॥
दीपं दर्शयामि । हस्तप्रक्षालनम् ।

नैवेद्यं—आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिंगलां पद्ममालिनीम् । चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।

अन्नं चुतर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम् ।
नैवेद्यं गृह्यतां देवि भक्तिं मे ह्यचलां कुरु ।
नैवेद्यं निवेदयामि । मध्ये पानीयम् ।

ऋतुफलं—या फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणी । वृहस्पतिः प्रसूतास्तान्नो मुञ्चन्त्वꣳहसः ॥

द्राक्षाखर्जूरकदलीपनसाम्रकपित्थकम् ।
नारिकेलेक्षुजम्वादि फलानि प्रतिगृह्यताम् । ऋ० स० ॥

आचमनं—

कामारिवल्लभे देवि कुर्वाचमनमंबिके ।
निरंतरमहं वन्दे चरणौ तव चण्डिके ॥आ० स० ।

अखण्ड-ऋतुफलं—

नारिकेलं च नारिङ्गं कलिङ्गं मज्जिरं तथा।
उर्वारुकं च देवेशि फलान्येतानि गृह्यताम्॥ अ०ऋ०स०।

ताम्बूलपूगीफलं—ॐ आर्द्रां यःकरिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्। सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥

एलालवङ्गकस्तूरीकर्पूरैः पुष्पवासिताम्।
वीटिकां मुखवासार्थमर्पयामि सुरेश्वरि॥ तां०पू०स०।

दक्षिणा—हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत। स दाधार पृथिवीं द्यमुते मां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

पूजाफलसमृद्ध्यर्थं तवाग्रे द्रव्यमीश्वरि!
स्थापितं तेन मे प्रीता पूर्णान् कुरु मनोरथान्॥ द०द्र०स०।

नमस्कार—आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥

नमः सर्वहितार्थाय जगदाधार हेतवे।
नमस्ते जगतां धात्रि नमस्ते भक्तवत्सले॥

श्री दुर्गा देव्यै नमः नमस्कारं समर्पमामि॥

प्रदक्षिणा—तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यां हिरण्यं प्रभूतिं गावो दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम्॥

पुष्पांजलिः—यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम्। सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत।

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥

श्रीभगवत्यै दुर्गा देव्यै नमः पुष्पांजलिं समर्पयामि।

आरार्तिक्यम्—आरात्रि पार्थिवꣳरजः पितुरप्रायि धामभिः। दिवः सदाꣳसि वृहति वितिष्ठस आत्वेषां वर्त्तते तमः।

अग्निर्देवता वातो देवता सूर्य्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवताऽऽदित्या देवता मरुतो देवता विश्वे देवा देवता वृहस्पति र्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ।

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्यसाहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे । स मे कामान् काम कामाय मह्यम् । कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु । कुवेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः । ॐ स्वस्ति साम्रज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं सर्वान्तपर्यायी स्यात् । सार्वभौमः सर्वायुषः आन्तादापरार्धात् पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति ॥

ॐ तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुतस्यावसन् गृहे । आविक्षितस्य काम प्रेर्विश्वे देवाः सभासदः इति ।

ॐ विश्वतः चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोवाहुरुत विश्वतस्पात । सम्बाहुभ्यां धमतिः सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव एकः ।

श्री दुर्गा देव्यै नमः आरार्तिक्यं समर्पयामि ॥

प्रदक्षिणा—

नमस्ते देव-देवेशि नमस्ते ईप्सितप्रदे ।
नमस्ते जगतां धात्रि नमस्ते भक्तवत्सले ॥

दण्डवत् प्रणाम—

नमः सर्वहितार्थायै जगदाधारहेतवे ।
साष्टाङ्गोऽयं प्रणामस्तु प्रयत्नेन मया कृतः ॥

प्रार्थना—

पुत्रान्देहि धनं देहि सौभाग्यं देहि मङ्गले ।
अन्यांश्च सर्वकामांश्च देहि देवि नमोऽस्तु ते ॥

विसर्जनं—

इमां पूजां मया देवि यथाशक्त्योपपादिताम् ।
रक्षायै त्वं समादाय ब्रज स्थानमनुत्तमम् ॥

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्॥

ज्योतिः पूजन : (पूजन करके प्रार्थना करे)

शुभं भवतु कल्याणमारोग्यं पुष्टिवर्धनम्।
आत्मतत्त्वप्रवोधाय दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते॥

कुमारी पूजनम्

२ वर्ष से १० वर्ष की कन्या का पूजन करके भोजन करावे।

प्रार्थना—

सर्वस्वरूपे ! सर्वेशे सर्वशक्तिस्वरूपिणि।
पूजां गृहाण कौमारि ! जगन्मातःनमोऽस्तु ते॥

आरती—

नीराजनं सुमाङ्गल्यं कर्पूरेण समन्वितम्।
चन्द्रार्कवह्नि सदृशं महादेवि ! नमोऽस्तु ते॥

पुष्पांजलि—

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः,
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्यदुःख भयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता॥

श्री महालक्ष्मी-पूजनम्

आचमन प्राणायाम करके संकल्पवाक्य करें।

"स्थिरलक्ष्मीप्राप्त्यर्थं श्रीमहालक्ष्मीप्रीत्यर्थं सर्वारिष्ट-निवृत्ति पूर्वकसर्वाभीष्टफलप्राप्त्यर्थं। आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं व्यापारे लाभार्थञ्च गणपति नवग्रह- कलशादिपूजनपूर्वकं श्रीमहाकालीमहालक्ष्मी महासरस्वती लेखनी कुवेरादीनां च पूजनं करिष्ये" कहकर संकल्प करे। पश्चात् गणपति, कलश और नवग्रहादि का पूर्वोक्त विधि से पूजन करे।

ध्यान—

या सा पद्मासनस्थाविपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी।
गम्भीरा-वर्तनाभिःस्तनभरनमिता शुभ्रवस्त्रोत्तरीया॥
लक्ष्मीर्दिव्यैर्गजेन्द्रैर्मणिगणखचितैः स्नापिता हेमकुम्भैः।
नित्यं सा पद्महस्ता वसतु मम गृहे सर्वमाङ्गल्ययुक्ता॥

आवाहनं—

ॐ सर्वलोकस्य जननीं शूलहस्तां त्रिलोचनाम्।
सर्वदेवमयीमीशां देवीमावाहयाम्यहम्॥ आवाहयामि॥

आसनं—

ॐ तप्तकाञ्चनवर्णाभं मुक्तामणिविराजितम्।
अमलं कमलं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम्। आ० स०॥
ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्।
चन्द्रां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥

पाद्यं—

ॐ गङ्गादितीर्थ सम्भूतं गन्धपुष्पादिभिर्युतम्।
पाद्यं ददाम्यहं देवि गृहाणाशु नमोऽस्तु ते॥

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्॥ पा० स०।

अर्घ्यं—

ॐ अष्टगन्धसमायुक्तं स्वर्णपात्रप्रपूरितम्।
अर्घ्यं गृहाण मद्दत्तं महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते॥
ॐ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनाद प्रवोधिनीम्।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्॥ अ० स०।

आचमनं—

ॐ सर्वलोकस्य या शक्तिर्ब्रह्मविष्ण्वादिभिः स्तुता।
ददाम्याचमनं तस्यै महालक्ष्म्यै मनोहरम्॥ आ० स०।

ॐ कांसो स्मितां हिरण्यप्राकारमार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्। पद्मे स्थिताम् पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम्॥

स्नानं— ॐ मन्दाकिन्याः समानीतैर्हेमांभोरुहवासितैः।
स्नानं कुरुष्व देवेशि ! सलिलैश्च सुगन्धिभिः॥

ॐ चद्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देव जुष्टामुदाराम्। तां पद्मनीमीं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमि। स्नानं स०।

पयः स्नानम्— कामधेनु समुत्पन्नं सर्वेषां जीवनं परम्।
पावनं यज्ञहेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम्॥

ॐ पयः पृथिव्यां पयः ओषधीषु पयोदिव्यन्तरिक्षे। पयोधाः पयः स्वतीप्रदिशः सन्तु मह्यम्। पयः दुग्ध स्नानं सम०।

दधिस्नानं— पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम्।
दध्यानीतं मया देवि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णो रश्वस्य वाजिनः। सुरभिनो मुखाकरत प्रण आयु॰षितारिषत। दधिस्नानं सम०।

घृतस्नानं— नवनीत समुत्पन्नं सर्वसन्तोष कारकम्।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ घृतं घृतपावानः पिवत वसां वसा पावानः। पिवतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा। दिशःप्रदिशः आदिशो विदिशः उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा॥ घृत स्नानं सम०।

मधुस्नानम्– तरुपुष्प समुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु।
तेजः पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः सन्त्वोषधिः। ॐ मधुनक्त मुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳरजः। मधुर्द्यौ रस्तुनः पिता। ॐ मधुमान्नो वनस्पतिः मधुमां २ अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः। मधु स्नानं सम०।

शर्करास्नानम्– इक्षुसार समुद्भूता शर्करा पुष्टिकारका।
मलापहारिका दिव्या स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ अपाꣳरसमुद्वयसꣳ सूर्ये सन्तु समाहितम्। अपाꣳरसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयाम गृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येषते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्॥ शर्करा स्नानं सम०।

पंचामृतस्नानं– पयो दधि घृतं चैव मधुशर्करयान्वितम्।
पंचामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोथविल्वः। तस्य फलानि तपसानुदन्तु मायान्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः॥

ॐ पञ्चामृतसमायुक्तं जाह्नवीसलिलं शुभम्।
गृहाण विश्वजननि स्नानार्थं भक्तवत्सले॥

गन्धोदकस्नानं–

ॐ तोयं तव महादेवि ! कर्पूरागरुवासितम्।
तीर्थेभ्यः सुसमानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥ ग० स०।
महालक्ष्म्यै नमः पुनराचमनीयं समर्पयामि।

वस्त्रं– ॐ दिव्याम्बरं नूतनं हि क्षौमं त्वतिमनोहरम्।
दीयमानं मया देवि गृहाण जगदम्बिके॥

उपैतु मां देवसखा कीर्तिश्चमणिना सह। प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे॥ व० स०।

उपवस्त्रं–

कञ्चुकीमुपवस्त्रं च नानारत्नैः समन्वितम्।
गृहाण त्वं मया दत्तं मङ्गले जगदीश्वरि॥ उ० स०॥

आभूषणं— ॐ स्वभावसुन्दराङ्गायै नानादेवाश्रये शुभे ।
भूषणानि विचित्राणि कल्पयाम्यमरार्चिते ॥

क्षुत्पिमसामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् । अभूतिमसमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे गृहात् ॥ आ० स० ।

गन्ध—गन्ध द्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥

ॐ श्रीखण्डागरुकर्पूर मृगनाभिसमन्वितम् ।
विलेपनं गृहाणाशु नमोऽस्तु भक्तवत्सले ॥ गं० स० ।

अक्षतान्—मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीयमहि । पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्री श्रयतां यशः ॥

अक्षताः परमो दिव्याः कुंकुमाक्ताः सुशोभनाः ।
मया निवेदिताः भक्त्या गृहाण परमेश्वरि ॥ अ० स० ।

चन्दनं—ॐ केशरागुरुकर्पूर-चन्दनादि समन्वितम् । विलेपनं महादेवि तुभ्यं दास्यामि भक्तितः ॥ चं० स० ।

रक्तचन्दनं—ॐ रक्तचन्दनसंमिश्रं पारिजातसमुद्भवम् । मया दत्तं गृहाणाशु चन्दनं गन्धसंयुतम् ॥ रक्तचं० स० ।

सिन्दूरं—

ॐ सिन्दूरं रक्तवर्णं च सिन्दूरतिलकप्रिये ।
भक्त्या दत्तं मया देवि सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् ॥ सि० स० ।

कुंकुमं—

ॐ कुंकुमं कामदं दिव्यं कुंकुमं कामरूपिणम् ।
अखण्डकामसौभाग्यं कुङ्कुमं प्रतिगृह्यताम् ॥ कुं० स० ।

कर्दमेन प्रजाभूता मयि सम्भवकर्दम । श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥

पुष्प— ॐ मन्दारपारिजाताद्याः पाटली केतकी तथा ।
मरुवा मोगरं चैव गृहाणाशु नमो नमः ॥

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि । पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ॥ प० स० ।

पुष्पमाला—

ॐ पद्मशंखजपापुष्पैः शतपत्रैर्विचित्रिताम् ।
पुष्पमालां प्रयच्छामि गृहाण त्वं सुरेश्वरि ॥ पु० मा० स० ।

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि । पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ॥ पु० मा० स० ।

अतरं— ॐ स्नेहं गृहाण स्नेहेन लोकेश्वरि ! दयानिधे ।
सर्वलोकस्य जननि ! ददामि स्नेहमुत्तमम् ॥ सु० स० ।

अथांग—पूजा

ॐ चपलायै नमः पादौ पूजयामि ॥१॥ 'ॐ चञ्चलायै नमः' जानुनी पूजयामि ॥२॥ 'ॐ कमलायै नमः' कटिं पूजयामि ॥३॥ 'ॐ कात्यायिन्यै नमः' नाभिं पूजयामि ॥४॥ 'ॐ जगन्मात्रे नमः' जठरं पूजयामि ॥५॥ 'ॐ विश्ववल्लभायै नमः' वक्षःस्थलं पूजयामि ॥६॥ 'ॐ कमलवासिन्यै नमः' भुजौ पूजयामि ॥७॥ 'ॐ पद्मकलायै नमः' मुखं पूजयामि ॥८॥ 'ॐ कमलपत्राक्ष्यै नमः' नेत्रत्रयं पूजयामि ॥९॥ 'ॐ श्रियै नमः' शिरः पूजयामि ॥१०॥ महालक्ष्म्यै नमः सर्वांगं पूजयामि इत्यंगपूजा ।

अथ पूर्वादिक्रमेण अष्टदिक्षु अष्टसिद्धयः पूजयेत ।

ॐ अणिम्ने नमः ॥१॥ ॐ महिम्ने नमः ॥२॥ ॐ गरिम्णे नमः ॥३॥ ॐ लघिम्ने नमः ॥४॥ ॐ प्राप्त्यै नमः ॥५॥ ॐ प्राकाम्यै नमः ॥६॥ ॐ ईशितायै नमः ॥७॥ ॐ वशितायै नमः ॥८॥ इति अष्टसिद्धि-पूजनम् ।

तथैव पूर्वादि-क्रमेण अष्टलक्ष्मी-पूजनम्

ॐ आद्यालक्ष्म्यै नमः ॥१॥ ॐ विद्यालक्ष्म्यै नमः ॥२॥ ॐ सौभाग्यलक्ष्म्यै नमः ॥३॥ ॐ अमृतलक्ष्म्यै नमः ॥४॥ ॐ कामलक्ष्म्यै नमः ॥५॥ ॐ सत्यलक्ष्म्यै नमः ॥६॥ ॐ भोगलक्ष्म्यै नमः ॥७॥ ॐ योगलक्ष्म्यै नमः ॥८॥

इति अष्टलक्ष्मी पूजनम् ।

धूपं—आपः सृजन्तुस्निग्धानि चिक्लीतवस मे गृहे । निचदेवींमातरं श्रियं वासय मे कुले ॥

ॐ बनस्पतिरसोत्पन्नो गन्धाढ्यः सुमनोहरः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् । धूपमाघ्रा० ।

दीपं—आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिंगलां पद्ममालिनीम् । चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह ॥

ॐ कर्पासवर्तिसंयुक्तं घृतयुक्तं मनोहरम् ।
तमोनाशकरं दीपं गृहाण परमेश्वरि ॥ दी० द० ह० प्र० ।

नैवेद्यं—आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् । सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह ॥

ॐ नैवेद्यं गृह्यतां देवि भक्ष्यभोज्यसमन्वितम् ।
षड्रसैरन्वितं दिव्यं लक्ष्मि देवि नमोऽस्तु ते ॥
नैवेद्यं निवेदयामि ॥ मध्ये पानीयम् ॥

ऋतुफलं—ॐ फलेन फलितं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् । तस्मात् फलप्रदानेन पूर्णाः सन्तु मनोरथाः ॥ ऋ० स० ॥

आचमनं—

ॐ शीतलं निर्मलं तोयं कर्पूरेण सुवासितम् ।
आचम्यतामिदं देवि ! प्रसीद त्वं महेश्वरि ॥ आ० स० ॥

अखण्डऋतुफलं—

ॐ इदं फलं मयाऽनीतं सरसं च निवेदितम् ।
गृहाण परमेशानि प्रसीद प्रणमाम्यहम् ॥ अ० ऋ० स० ।

ताम्बूल—पूगीफलं—तां मा वह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् । यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम् ॥

ॐ एलालवंगकर्पूरनागपत्रादिभि र्युतम् ।
पूगीफलेन संयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ॥ ता० प० स० ।

दक्षिणा—ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रेभूतस्य जातः पतिरेक आसीत । स दाधार पृथिवीं द्यामुते मां कस्मै दिवाय हविषा बिधेम ॥

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ द० द्र० स० ।

प्रार्थना—ॐ सुरासुरेन्द्रादिकिरीटमौक्तिकैर्युक्तं सदा यत्तवपाद-पङ्कजम् । परावरं पातु वरं सुमङ्गलं नमामि भक्त्या तव कामसिद्धये ॥

भवानि त्वं महालक्ष्मीः सर्वकामप्रदायिनी ।
सुपूजिता प्रसन्ना स्यान्महालक्ष्म्यै नमोऽस्तु ते ॥
नमस्ते सर्वदेवानां वरदासि हरिप्रिये ।
या गतिस्त्वत्प्रपन्नानां सा मे भूयात्त्वदर्चनात् ॥

श्रीम्हाकालीपूजनम्

दवात में मौली बांधकर तथा स्वस्तिक करके नीचे लिखा ध्यान करे—

ॐ मषि त्वं लेखनीयुक्ता चित्रगुप्ताशयस्थिता । सदक्षराणां पत्रे च लेख्यं कुरु सदा मम । या माया प्रकृतिः शक्तिश्चण्डमुण्डविमर्दिनी । सा पूजा सर्वदेवैश्च ह्यस्माकं वरदा भव ॥

ॐ श्रीमहाकाल्यै नमः ॥ पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करे । या कालिका रोगहरा सुवंद्या वैश्यैः समस्तै र्व्यवहारदक्षैः ॥ जनैर्जनानां भयहारिणी च सा देवमाता मयि सौख्यदात्री ॥

लेखनी पूजनम्

लेखनी में कलावा बांधकर नीचे लिखा ध्यान करके पूजन करे ।

ॐ शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीम् । वीणा-पुस्तकधारिणी- मभयदां जाड्यान्धकारापहाम् ॥ हस्ते स्फाटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थिताम्। वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ॥ लेखिन्यै नमः ॥

पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करे—

प्रार्थना—कृष्णानने द्विजिह्वे च चित्रगुप्तकरस्थिते । सदक्षराणां पत्रे च लेख्यं कुरु सदा मम ॥

बही बसना आदि में केसर या रोली से स्वस्तिक कर नीचे लिखा ध्यान करके पूजन करे ।

ॐ या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता ।
या वीणावरदण्ड- मण्डितकरा या श्वेतपद्मासना ।
या ब्रह्माच्युतशङ्कर-प्रभृतिभिर्देवैः सदावन्दिता ।
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ॥
ॐ वीणापुस्तकधारिण्यै नमः ॥

पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करे—

प्रार्थना— शारदा शारदाम्भोजवदना शुभे बदनाम्बुजे ।
सर्वदा सर्वदाऽस्माकं सन्निधिं सन्निधिं कुर्यात् ॥

कुवेर पूजनम्

मञ्जूषा आदि में सिंदूर से स्वस्तिक कर आवाहन करके पूजन करे—

आवाहयामि देवं त्वमिह आयाहि कृपां कुरु ।
कोशं वर्द्धय नित्यं त्वं परिरक्ष सुरेश्वर ॥

प्रार्थना— धनाध्यक्षाय देवाय नरयानोपवेशिने ।
नमस्ते राजराजाय कुवेराय महात्मने ॥
धनदाय नमस्तुभ्यं निधिपद्माधिपाय च ।
भगवन्तु त्वत्प्रसादेन धनधान्यादिसम्पदः ॥

तुला तथा मान—पूजन

सिन्दूर से स्वस्तिक करके पूजन करे । पश्चात् नीचे लिखी प्रार्थना करे—

नमस्ते सर्वदेवानां शक्ति स्त्वं सत्यमाश्रिता ।
साक्षिभूता जगद्धात्री निर्मिता विश्वयोनिना ॥

दीपावली पूजन

दीपक जलाकर पात्रमें रख पूजन करके नीचे लिखी प्रार्थना करे ।

भो दीप त्वं ब्रह्मरूप अन्धकारनिवारक ।
इमां मया कृतां पूजां गृहणंस्तेजः प्रवर्धय ॥
त्वं ज्योतिः त्वं रविश्चन्द्रो विद्युदग्निश्च तारकाः ।
सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिः दीपावल्यै नमो नमः ॥
ॐ दीपेभ्यो नमः ।

आरती—ॐ चक्षुर्दा सर्वलोकानां तिमिरस्य निवारणम् । आर्तिक्यं कल्पितं भक्त्या गृहाण परमेश्वरि ॥

आरार्तिक्यम्— ॐ आ रात्रि पार्थिवꣳरजः पितुरप्रायि धामभिः । दिवः सदाꣳसि वृहती वितिष्ठस आ त्वेषं वर्तते तमः ।

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे । स मे कामान् कामकामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु ॥ कुवेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः ।

ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात् सार्वभौमः सार्वायुषान्तादापरार्धात्। पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति। तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुतस्यावसन् गृहे। आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासदः। विश्वतः चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात। सं बाहुभ्यां धमति सं पतत्रैः द्यावाभूमिःजनयन् देव एकः॥

महालक्ष्म्यै च विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात्॥

मंत्रपुष्पांजलि–

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यसन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।

क्षमा-प्रार्थना–

या श्री स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा।
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्॥
नमस्ते सर्वदेवानां वरदासि हरिप्रिये।
या गतिस्त्वत्प्रपन्नानां सा मे भूयात्त्वदर्चनात्।
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वरि॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि।
यत्पूजितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे॥
पापोऽहं पाप कर्माहं पापात्मा पापसम्भवः।
त्राहि मां परमेशानि सर्वपापहरा भव॥
अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वरि॥

सरसिज निलये सरोजहस्ते धवलतरांकुशगन्धमाल्यशोभे।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवन भूतिकरि प्रसीद मह्यम्॥

ॐ अनेन यथाशक्ति पूजनेन भगवती लक्ष्मीप्रसीदतु।

स्तोत्र पाठ संग्रह

ऋग्वेद का अन्तिम—सूक्त

(१)

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।
देवा भागं यथा पूर्वं संजनाना उपासते ॥
प्रेम से मिलकर चलो बोलो सभी ज्ञानी बनो ।
पूर्वजों की भान्ति तुम कर्त्तव्य के मानी बनो ॥

हे प्रभो ! हम परस्पर मिलकर चलें, परस्पर मिलकर बात करें। हमारे मन एक समान होकर ज्ञान प्राप्त करें। पूर्वजों की भान्ति प्रभु की उपासना करते हुए कर्त्तव्य का पालन करें।

(२)

समानो मन्त्रः समितिः समानी,
समानं मनः सह चित्त मेषाम् ।
समानं मन्त्रमभिमंत्रये वः,
समानेन वो हविषा जुहोमि ॥
हो विचार सबके चित्त मन सब एक हों।
ज्ञान देता है, बराबर भोग्य पा सब नेक हों ॥

हे प्रभो ! हम सबका विचार समान हो, समिति और सभा समान हो, मन और चित्त एक उद्देश्य वाला हो, समान भावना से यज्ञ करने की प्रेरणा से युक्त हों।

(३)

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥
हों सभी के दिल यथा संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हों प्रेम से जिससे बढ़े सुख सम्पदा ।

हे प्रभो ! हमारे संकल्प समान हों, हमारे हृदय परस्पर मिले हुए हों, जिसमें हम सभी परस्पर मिलकर रहें।

स्तोत्र—भाग

१. श्रीसंकटनाशन-गणेश स्तोत्र

प्रणम्य शिरसा देवं गौरीपुत्रं विनायकम्। भक्तावासं स्मरेन्नित्यमायुष्कामार्थसिद्धये ॥१ ॥ प्रथमं वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम्। तृतीयं कृष्णपिङ्गाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम् ॥२॥ लम्बोदरं पञ्चमं च षष्ठं विकटमेव च। सप्तमं विघ्नराजं च धूम्रवर्णं तथाष्टमम् ॥३ ॥ नवमं भालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम्। एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम् ॥४ ॥

द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः। न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिश्च जायते ॥५ ॥ विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम्। पुत्रार्थी लभते पुत्रान्मोक्षार्थी लभते गतिम् ॥६ ॥ जपेद् गणपतिस्तोत्रं षड्भिर्मासैः फलं लभेत। संवत्सरेण सिद्धिं च लभते नात्र संशयः ॥७ ॥ अष्टाभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च लिखित्वा यः समर्पयेत्। तस्य विद्या भवेत्सर्वा गणेशस्य प्रसादतः ॥८ ॥

इति श्रीनारदपुराणे संकटनाशननाम गणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

२. गणपत्यथर्व शीर्षोपनिषद्

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा७ सस्तनूभिर्व्यशे महिदेवहितं यदायुः।

ॐ नमस्ते गणपतये। त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि। त्वमेव केवलं कर्तासि। त्वमेव केवलं धर्तासि। त्वमेव केवलं हर्तासि त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि। त्वं साक्षादात्मासि नित्यम्। ऋतं वच्मि सत्यं वच्मि। अव त्वं माम्। अव वक्तारम् ॥१ ॥ अव श्रोतारम्। अव दातारम्। अव धातारम्। अवानूचानम्। अव शिष्यम्। अव पश्चात्तात्। अव पुरस्तात्। अवोत्तरात्तात्। अव दक्षिणात्तात्। अव चोर्ध्वात्तात्। अवाधरात्तात्। सर्वतो मां पाहि। पाहि समन्तात् ॥३ ॥ त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः। त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयः। त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि। त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि ॥४ ॥

सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते। सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति। सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति। सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति। त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः। त्वं चत्वारि वाक्पदानि ॥५॥ त्वं गुणत्रयातीतः। त्वं देहत्रयातीतः। त्वं कालत्रयातीतः। त्वं मूलाधार स्थितोऽसि नित्यम्। त्वं शक्तित्रयात्मकः। त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम्। त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमा त्वं भूर्भुवःस्वरोम् ॥६॥ गणादिं पूर्वमुच्चार्य वर्णादि तदनन्तरम्। अनुस्वारः परतरः। अर्धेन्दु लसितम्। तारेण रुद्धम्। एतत्तव मनुस्वरूपम्। गकारः पूर्वरूपम्। अकारो मध्यम रूपम्। अनुस्वारश्चान्त्यरूपम्। विन्दुरूत्तररूपम्। नादः सन्धानम्। संहिता सन्धिः। सैषा गणेश विद्या। गणकः ऋषिः। निचृद् गायत्री छन्दः गणपतिर्देवता। ॐ गणपतये नमः ॥७॥

ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ति प्रचोदयात् ॥८॥

एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमंकुश धारिणम्।
अभयं वरदं हस्तैर्विभ्राणं मूषक-ध्वजम् ॥१॥
रक्तं लम्बोदरं शूर्प-कर्णकं रक्त-वाससम्।
रक्त गन्धानुलिप्तांगं रक्त-पुष्पैः सुपूजितम् ॥२॥
भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम्।
आविर्भूतं च सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम् ॥३॥
एवं ध्यायति यो नित्यं स योगिनां वरः ॥

नमो व्रातपतये। नमो गणपतये। नमः प्रमथपतये। नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्नविनाशिने शिवसुताय श्री वरदमूर्त्तये नमः। ।१०॥

एतदथर्वशीर्षं योऽधीते स ब्रह्मभूयाय कल्पते।

सः सर्वविघ्नैर्न वाध्यते। स सर्वत्र सुखमेधते। स सर्वमहापातात् प्रमुच्यते। सायमधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायं प्रातः प्रयुञ्जानोऽपापो भवति। सर्वत्राधीयानोऽपविघ्नो भवति। धर्मार्थकाममोक्षं च विन्दति। इदमथर्व शीर्षमशिष्याय न देयम्। यो

यदि मोहाद्दास्यति स पापीयान् भवति। सहस्रावर्तनाद् यं यं काममधीते तं-तमनेन साधयेत् ॥११॥

अनेन गणपतिमभिषिञ्चति स वाग्मी भवति। चतुर्थ्यामनश्नन् जपति स विद्यावान् भवति। इत्यथर्वण वाक्यम्। ब्रह्माद्याचरणं विद्यान्न विभेति कदाचनेति। यो दूर्वाङ्कुरैर्यजति स वै श्रवणोपमो भवति। यो मोदकसहस्रेण यजति स वाञ्छितं फलमाप्नोति। यः साज्यं समिद्भिर्यजति स सर्वं लभते स सर्वं लभते। अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग् ग्राहयित्वा सूर्यवर्चस्वी भवति। सूर्यग्रहे महानद्यां प्रतिमासन्निधौ वा जप्त्वा सिद्धमन्त्रो भवति। महाविघ्नात् प्रमुच्यते। महा दोषात् प्रमुच्यते। महाप्रत्यवायात् प्रमुच्यते। स सर्वविद् भवति। य एवं वेद इत्युपनिषत् ॥१३॥

सह नाववतु सह नौ भुनक्तौ सह वीर्यं करवावहै।
तेजस्विना-वाधीतमस्तु मा विद्विषावहै॥

३. श्रीमहालक्ष्म्यष्टकम्

नमस्तेऽस्तु महामाये श्रीपीठे सुरपूजिते।
शंखचक्रगदाहस्ते महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते ॥१॥
नमस्ते गरुडारूढे कोलासुरभयंकरि।
सर्वपापहरे देवि महालक्ष्मि० ॥२॥

सर्वज्ञे सर्ववरदे सर्वदुष्टभयंकरि। सर्वदुःखहरे देवि महालक्ष्मि० ॥३॥ सिद्धिबुद्धिप्रदे देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी। मन्त्रमूर्ते सदा देवि महालक्ष्मि० ॥४॥ आद्यन्तरहिते देवि आद्यशक्ति महेश्वरि। योगजे योगसम्भूते महालक्ष्मि० ॥५॥ स्थूलसूक्ष्ममहारौद्रे महाशक्ति महोदरे। महापापहरे देवि महालक्ष्मि० ॥६॥ पद्मासनस्थिते देवि परब्रह्मस्वरूपिणि। परमेशि जगन्मातर्महालक्ष्मि० ॥७॥ श्वेताम्बरधरे देवि नानालंकारभूषिते। जगत्स्थिते जगन्मातर्महालक्ष्मि० ॥८॥ महालक्ष्म्यष्टकं स्तोत्रं यः पठेद्भक्तिमान्नरः। सर्वसिद्धिमवाप्नोति राज्यमाप्नोति सर्वदा ॥९॥ एककालं पठेन्नित्यं महापापविनाशनम्। द्विकालं यः पठेन्नित्यं धनधान्य-

समन्वितः ॥१० ॥ त्रिकालं यः पठेन्नित्यं महाशत्रुविनाशनम्। महालक्ष्मीर्भवेन्नित्यं प्रसन्ना वरदा शुभा ॥११ ॥

इतीन्द्रकृतं श्रीमहालक्ष्म्यष्टकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

४. कनकधारा-स्तोत्रम्

अङ्गं हरेः पुलकभूषणमाश्रयन्ती । भृङ्गांगनेव मुकुलाभरणं तमालम्। अङ्गीकृताखिलविभूतिरपाङ्गलीला। मांगल्यदास्तु मम मंगलदेवतायाः ॥१ ॥ मुग्धा मुहुर्विदधती वदनं मुरारेः। प्रेमत्रपाप्रणिहितानि गतागतानि। मालादृशोर्मधुकरीव महोत्पले या। सा मे श्रियं दिशतु सागरसम्भवायाः ॥२ ॥ विश्वामरेन्द्रपदविभ्रमदानदक्षमानन्दहेतुरधिकं मुरविद्विषोऽपि। ईषन्निषीदतु मयि क्षणमीक्षणार्ध मिन्दीवरोदरसहोदरमिन्दिरायाः ॥३ ॥ आमीलिताक्षमधिगम्य मुदा मुकुन्द मानन्दकन्दमनिमेषमनंगतन्त्रम्। आकेकरस्थितकनीनिकपक्ष्मनेत्रं। भूत्यै भवेन्मम भुजंगशयांगनायाः ॥४ ॥ वाह्वन्तरे मधुजितःश्रित कौस्तुभे या हारावलीव हरिनीलमयी विभाति। कामप्रदा भगवतोऽपि कटाक्षमाला। कल्याणमावहतु मे कमलालयायाः ॥५ ॥ कालाम्बुदालिललितोरसि कैटभारे, र्धाराधरे स्फुरति या तडिदङ्गनेव। मातुः समस्तजगतां महनीयमूर्ति र्भद्राणि मे दिशतु भार्गवनन्दनायाः ॥६ ॥ प्राप्तं पदं प्रथमतः किल यत् प्रभावा न्माङ्गल्यभाजि मधुमाथिनी मन्मथेन। मय्यापतेत्तदिह मन्थरमीक्षणार्धं। मन्दालसञ्च मकरालयकन्यकायाः ॥७ ॥ दद्याद्दयानुपवनो द्रविणाम्बुधारा मस्मिन्नकिञ्चन विहङ्गशिशौ विषण्णे। दुष्कर्मधर्ममपनीय चिराय दूरं। नारायणप्रणयिनी-नयनाम्बुवाहः ॥८ ॥ इष्टातिशिष्टमतयोऽपि यया दयार्द्र दृष्ट्या, त्रिविष्टपपदं सुलभं लभन्ते। दृष्टि प्रहृष्ट-कमलोदर-दीप्तिरिष्टां। पुष्टिं कृषीष्ट मम पुष्करविष्टरायाः ॥९ ॥ गीर्देवतेति गरुडध्वजभामिनीति, शाकम्भरीति शशिशेखर-वल्लभेति। सृष्टिस्थिति-प्रलय सिद्धिषु संस्थितायै। तस्यै नमस्त्रिभुवनैकगुरोस्तरुण्यै ॥१० ॥ श्रुत्यै नमस्त्रिभुवनैक फलप्रसूत्यै। रत्यै नमोस्तु रमणीयगुणाश्रयायै। शक्त्यै नमोऽस्तु शतपत्रनिकेतनायै पुष्ट्यै नमोऽस्तु पुरुषोत्तम बल्लभायै ॥११ ॥ नमोऽस्तु नालीकनिभेक्षणायै।

नमोऽस्तु नारायणवल्लभायै ॥१२॥ सम्पत्कराणि सकलेन्द्रिय-नन्दनानि। साम्राज्यदानविभवानि सुरोरुहाक्षि। त्वद्वन्दनानि दुरितहरणोद्यतानि। मामेव मातरनिशं कलयन्तु नान्यत् ॥१३॥ यत्कटाक्षसमुपासनाविधिः सेवकस्य सकलार्थसम्पदः। सन्तनोति वचनांगमानसैस्त्वां मुरारिहृदयेश्वरीं भजे ॥१४॥ सरसिज-निलये सरोज हस्ते धवलतरांशुक गन्धमाल्यशोभे। भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवन-भूतिकरि प्रसीद मह्यम् ॥१५॥ दिग्घस्तिभिः कनककुम्भमुखावसृष्ट, स्वर्वाहिनीविमलचारुजलप्लुतांगीम्। प्रातर्नमामि जगतां जननीमशेष। लोकाधिराजगृहिणीममृताब्धिपुत्रीम् ॥१६॥ कमले कमलाक्ष वल्लभे त्वं करुणापूरतरंगितैरपांगैः। अवलोकय मामकिञ्चनानां। प्रथमं पात्रमकृतिमं दयायाः ॥१७॥ स्तुवन्ति ये स्तुतिभिरमूभिरन्वहं त्रयीमयीं त्रिभुवनमातरं रमाम्। गुणाधिका गुरुतरभाग्य भागिनो भवन्ति ते भुवि बुधभाविताशयाः ॥१८॥

इति श्रीभगवत्-शंकर विरचितम् कनकधारास्तोत्रम् समाप्तम्।

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

५. अथ कृष्णयजुर्वेदीय चाक्षुषोपनिषद्

(नेत्रोपनिषद्)

ॐ अस्याश्चाक्षुषीविद्याया अहिर्बुध्न्य ऋषिर्गायत्री च्छन्दः सूर्योदेवताः चक्षूरोग-निवृत्तये विनियोगः।

ॐ चक्षुश्चक्षुस्तेजः स्थिरो भव। मां पाहि पाहि त्वरितं चक्षू रोगान् शमय शमय। मम जातरूपं तेजो दर्शय दर्शय। यथा अहमन्धो न स्यां तथा कल्पय कल्पय कल्याणं कुरु कुरु। यानि मम पूर्वजन्मोपार्जितानि चक्षुःप्रतिरोधक-दुष्कृतानि तानि सर्वाणि निर्मूलय निर्मूलय।

ॐ नमः चक्षुस्तेजोदात्रे दिव्याय भास्कराय। ॐ नमः करुणाकरायामृताय। ॐ नमः सूर्याय। ॐ नमो भगवते सूर्यायाक्षितेजसे नमः॥ खेचराय नमः। रजसे नमः। तमसे नमः। असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्मा अमृतं गमय। उष्णो भगवाञ्छुचिरूपः। हंसो भगवान् शुचिरप्रतिरूपः। ॐ नमो भगवते आदित्याय आहोवाहिनी

अहोवाहिनी स्वाहा। ॐ विश्वरूपं घृणिनं जातवेदसं, हिरण्मयं पुरुषं ज्योतिरूपं तपन्तं। विश्वस्य योनिं प्रतपन्तं महान्तं पुरः प्रजानामुदयत्येष सूर्यः।

ॐ वयः सुपर्णा उव सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपध्वान्त मूर्णूहिपूर्द्धि चक्षुर्ममुग्ध्यस्मान्निधयेव बद्धान्। पुण्डरीकाक्षाय नमः। पुष्करेक्षणाय नमः। विश्वरूपाय नमः। महाविष्णवे नमः।

य इमां चाक्षुष्मतीविद्यां द्विजो नित्यमधीते न तस्याक्षिरोगो भवति। न तस्य कुले अन्धो भवति। अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग् ग्राहयित्वा विद्यासिद्धिर्भवति।

इस चाक्षुषीविद्या के पाठ से नेत्र के रोग दूर होते हैं। आंख की ज्योति स्थिर रहती है। इसका पाठ नित्य करने से कुल में कोई अन्धा नहीं होता। पाठ के अन्त में गन्धादियुक्त जल से सूर्य को अर्घ देना चाहिये।

६. श्रीगंगाष्टकम्

मातः शैलसुतासपत्नि वसुधा शृंगारहारावलिः। स्वर्गारोहणवैजयन्ति भवतीं भागीरथीं प्रार्थये। त्वत्तीरे वसतस्त्वदम्बु पिवतस्त्वद्वीचिषु प्रैङ्खतस्त्वन्नामस्मरतस्त्वर्पितदृशः स्यान्मे शरीरव्ययः ॥१॥ त्वत्तीरे तरुकोटरान्तरगतो गङ्गे विहंगो वरम्, त्वन्नीरे नरकान्तकारिणि वरं मत्स्योऽथवा कच्छपः। नैवान्यत्र मदान्धसिन्धुरघटासंघट्टघण्टारणत्कारत्रस्तसमस्तवैरिवनितालब्धस्तुतिर्भूपतिः ॥२॥ उक्षा पक्षी तुरगः कोऽपि वा वारणो वा। वाराणस्याः जननमरणक्लेशदुःखसहिष्णुः। न त्वन्यत्र प्रविरलरणत्कंकणक्वाणमिश्रम् वारस्त्रीभिश्चमरमरुतावीजितो भूमिपालः ॥३॥ काकैर्निष्कुषितं श्वभिः कवलितं गोमायुभिर्लुण्ठितम्, स्रोतोभिश्चलितं तटाम्बुलुलितं वीचीभिरान्दोलितम्। दिव्यस्त्रीकरणचारुचामरमरुत्सम्वीज्यमानः कदा। द्रक्ष्येऽहं परमेश्वरि त्रिपथगे भागीरथि स्वर्वपुः ॥४॥ अभिनवविसवल्ली पादपद्मस्य विष्णोर्मदनमथनमौलेर्मालतीपुष्पमाला। जयति जयपताका काप्यसौ मोक्षलक्ष्म्याः क्षपितकलिकलंका जाह्नवी नः पुनातु ॥५॥ एतत्तालतमालसालसरलव्यालोलवल्लीलताच्छन्नं सूर्यकरप्रतापरहितं शंखेन्दुकुन्दोज्ज्वलम्।

गन्धर्वामरसिद्धकिन्नरवधूंतुंगस्तनास्फालितं स्नानाय प्रतिवासरं भवतु मे गाङ्गं जलं निर्मलम् ॥६ ॥ गाङ्गं वारि मनोहारि मुरारिचरणाच्युतम्। त्रिपुरारिशिरश्चारि पापहारि पुनातु माम् ॥७ ॥ पापापहारि दुरितारि तरङ्गधारि शैलप्रचारि गिरिराजगुहाविदारि। झङ्कारकारि हरिपादरजोऽपहारि गाङ्गं पुनातु सततं शुभकारि वारि ॥८ ॥ गंगाष्टकं पठति यः प्रयतः प्रभाते वाल्मीकिना विरचितं शुभदं मनुष्यः। प्रक्षाल्य गात्रकलिकल्मषपङ्कमाशु मोक्षं लभेत् पतति नैव नरो भवाब्धौ ॥९ ॥

इति श्री बाल्मीकिविरचितं गंगाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

७. देव्यपराधक्षमापन-स्तोत्रम्

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथा।
न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनम्।
परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥१ ॥

विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया
विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत्।
तदेतत्क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥२ ॥

पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः।
मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥३ ॥

जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता
न वा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया।
तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥४ ॥

परित्यक्त्वा देवान्विविधिविधिसेवाकुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि।

इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता
निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम् ॥५ ॥

श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातङ्को रङ्को विहरति चिरं कोटि-कनकैः ।
तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदम्
जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ ॥६ ॥

चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः ।
भवानि त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम् ॥७ ॥

न मोक्षस्याकाङ्क्षा न च विभववाञ्छापि च न मे
न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छापि न पुनः ।
अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै
मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवनीति जपतः ॥८ ॥

नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः
किं रुक्षचिन्तनपरैर्न कृतं वचोभिः ।
श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे
धत्से कृपामुचितमम्ब परं तवैव ॥९ ॥

आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि ।
नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः क्षुधातृषार्ता जननीं
स्मरन्ति ॥१० ॥

जगदम्ब विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणास्ति चेन्मयि ।
अपराधपरम्परापरं नहि माता समुपेक्षते सुतम् ॥११ ॥

मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि ।
एवं ज्ञात्वा महादेवि यथा योग्यं तथा कुरु ॥

इति देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

८. श्री शीतलाष्टकम्

अस्य श्रीशीतलास्तोत्रस्य महादेव ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः शीतला देवता लक्ष्मीर्वीजम् भवानी शक्तिः सर्वविस्फोटक निवृत्तये जपे विनियोगः।

ईश्वर उवाच

वन्देऽहं शीतलां देवीं, रासभस्थां दिगम्बराम्।
मार्जनी-कलशोपेतां, शूर्पालंकृतमस्तकाम्॥१॥

वन्देऽहं शीतलां देवीं, सर्वरोग भयापहाम्।
यामासाद्य निवर्त्तेत, विस्फोटकभयं महत्॥२॥

शीतले शीतले चेति, यो ब्रूयाद्दाह-पीडितः।
विस्फोटक भयं घोरं, क्षिप्रं तस्य प्रणश्यति॥३॥

यस्त्वामुदकमध्ये तु, धृत्वा पूजयते नरः।
विस्फोटक-भयं घोरं, गृहे तस्य न जायते॥४॥

शीतले ज्वरदग्धस्य, पूतिगन्धयुतस्य च।
प्रनष्टचक्षुषः पुंसस्त्वामाहु र्जीवनौषधम्॥५॥

शीतले तनुजान् रोगान्नृणां हरसि दुस्त्यजान्।
विस्फोटक-विशीर्णानां, त्वमेकाऽमृतवर्षिणी॥६॥

गलगण्ड-ग्रहारोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम्।
त्वदनुध्यान-मात्रेण, शीतले यान्ति संक्षयम्॥७॥

न मन्त्रो नौषधं तस्य, पाप-रोगस्य विद्यते।
त्वामेकां शीतले धात्रीं, नान्यां पश्यामि देवताम्॥८॥

मृणाल तन्तु-सदृशीं, नाभिहृन्मध्यसंस्थिताम्।
यस्त्वां सञ्चिन्तयेद्देवि, तस्य मृत्युर्न जायते॥९॥

अष्टकं शीतला-देव्याः, यो नरः प्रपठेत् सदा।
विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते॥१०॥

श्रोतव्यं पठितव्यञ्च, श्रद्धा भक्ति-समन्वितैः।
उपसर्ग-विनाशाय, परं स्वस्त्ययनं महत्॥११॥

शीतले त्वं जगन्माता, शीतले त्वं जगत्-पिता।
शीतले त्वं जगद्धात्री, शीतलायै नमो नमः ॥१२॥
रासभो गर्दभश्चैव, खरो वैशाख-नन्दनः॥
शीतला-वाहनश्चैव, दूर्वा-कन्द-निकृन्तनः ॥१३॥
एतानि खरनामानि शीतलाग्रे तु यः पठेत्।
तस्य गेहे शिशूनां च शीतला रुङ्न जायते ॥१४॥
शीतलाष्टकमेवेदं, न देयं यस्य कस्यचित्।
दातव्यञ्च सदा तस्मै, श्रद्धाभक्ति-युताय वै ॥१५॥

इति श्रीस्कन्दपुराणोक्तं शीतलाष्टक स्तोत्रं सम्पूर्णम्।

९. मधुराष्टकम्

अधरं मधुरं वदनं मधुरं नयनं मधुरं हसितं मधुरम्।
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥१॥
वचनं मधुरं चरितं मधुरं वसनं मधुरं वलितं मधुरम्।
चलितं मधुरं भ्रमितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥२॥
वेणुर्मधुरो रेणुर्मधुरः पाणिर्मधुरः पादौमधुरौ।
नृत्यं मधुरं सख्यं मधुरं मुधराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥३॥
गीतं मधुरं पीतं मधुरं मुक्तं मधुरं सुप्तंमधुरम्॥
रूपं मधुरं तिलकं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥४॥
करणं मधुरं तरणं मधुरं हरणं मधुरं रमणं मधुरम्॥
वमितं मधुरं शमितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥५॥
गुञ्जा मधुरा माला मधुरा यमुना मधुरा वीची मधुरा।
सलिलं मधुरं कमलं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥६॥
गोपी मधुरा लीला मधुरा युक्तं मधुरं मुक्तं मधुरम्।
दृष्टं मधुरं शिष्टं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥७॥
गोपा मधुरा गावो मधुरा यष्टिर्मधुरा सृष्टिर्मधुरा।
दलितं मधुरं फलितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥८॥

इति श्रीमद्वल्लभाचार्यकृतं मधुराष्टकम्॥

१०. श्री विष्णुसहस्रनाम स्तोत्रम्

श्री गणेशाय नमः ॥ श्रीसत्यनारायणाय नमः ॥ शुक्लाम्वरधरं विष्णुं शशिवर्णंचतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ॥१ ॥ नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् । देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥२ ।। व्यासं वसिष्ठनप्तारं शक्तेः पौत्रमकल्मषम् । पराशरात्मजं वन्दे शुकतात तपोनिधिम् ॥३ ॥ व्यासाय विष्णुरूपाय व्यासरूपाय विष्णवे । नमो वै ब्रह्मविधये वसिष्ठाय नमो नमः ॥४ ॥ अचतुर्वदनो ब्रह्मा द्विवाहुरपरो हरिः । अभाललोचनः शम्भुर्भगवान् वादरायणः ॥५ ॥

अथ विष्णु सहस्रनाम प्रारम्भः ॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥ यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात् । विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे ॥ नमः समस्तभूतानामादिभूताय भूभृते । अनेकरूपरूपाय विष्णवे प्रभविष्णवे । श्रुत्वा धर्मान् शेषेण पावनानि च सर्वशः । युधिष्ठिरः शान्तनवं पुनरेवाभ्यभाषत ॥१ ॥ युधिष्ठिर उवाच । किमेकं दैवतं लोके किम्वाप्येकं परायणम् । स्तुवन्तः कं कमर्चन्तः प्राप्नुयुर्मानवाः शुभम् ॥२ ॥ को धर्मः सर्वधर्माणां भवतः परमो मतः । किं जपन् मुच्यते जन्तुर्जन्मसंसारबन्धनात् ॥३ ॥ **भीष्म उवाच** ॥ जगत्प्रभुं देवदेवमनन्तं पुरुषोत्तमम् । स्तुवन्नामसहस्रेण पुरुषः सततोत्थितः ॥४ ॥ तमेव चार्चयन्नित्यं भक्त्या पुरुषमव्ययम् । ध्यायन् स्तुवन्नमस्यं च यजमानस्तमेव च ॥५ ॥ अनादिनिधनं विष्णुं सर्वलोकमहेश्वरम् । लोकाध्यक्षं स्तुवन्नित्यं सर्वदुःखातिगो भवेत् ॥६ ॥ ब्रह्मण्यं सर्वधर्मज्ञं लोकानां कीर्तिवर्धनम् ॥ लोकनाथं महद्भूतं सर्वभूतभवोद्भवम् ॥७ ॥ एष मे सर्वधर्माणां धर्मोऽधिकतमो मतः । यद्भक्त्या पुण्डरीकाक्षं स्तवैरर्चेन्नरः सदा ॥८ ॥ परमं यो महत्तेजः परमं यो महत्तपः । परमं यो महद् ब्रह्म परमं यः परायणम् ॥९ ॥ पवित्राणां पवित्रं यो मङ्गलानां च मङ्गलम् । दैवतं देवतानां च भूतानां योऽव्ययः पिता ॥१० ॥ यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादियुगागमे । यस्मिंश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये ॥११ ॥ तस्य लोकप्रधानस्य जगन्नाथस्य भूपते । विष्णोर्नामसहस्रं मे शृणु पापभयापहम् ॥१२ ॥ यानि नामानि गौणानि विख्यातानि महात्मनः । ऋषिभिः परिगीतानि तानि वक्ष्यामि भूतये ॥१३ ॥

विनियोगः

अस्य श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्रमहामन्त्रस्य भगवान्वेदव्यास ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीकृष्णः परमात्मा श्रीमन्नारायणो देवता। अमृतांशूद्भवो भानुरिति वीजम्। देवकीनन्दनः स्रष्टेति शक्तिः। त्रिसामा सामगः सामेति हृदयम्। शंखभृन्नन्दकी चक्रीति कीलकम्। शारंगधन्वा गदाधर इत्यस्त्रम्। रथांगपाणिरक्षोभ्य इति कवचम्। उद्भवःक्षोभणो देव इति परमो मन्त्रः। श्रीकृष्णप्रीत्यर्थे सहस्रनामस्तोत्रजपे विनियोगः॥

अथ करन्यासः॥ ॐ उद्भवाय अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ क्षोभणाय तर्जनीभ्यां नमः। ॐ देवाय मध्यमाभ्यां नमः। ॐ उद्भवाय अनामिकाभ्यां नमः॥ ॐ क्षोभणाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ देवाय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ इति करन्यासः।

अथ हृदयादिषडङ्गन्यासः॥ सुव्रतः सुमुखः सूक्ष्मः ज्ञानाय हृदयाय नमः। सहस्रमूर्द्धा विश्वात्मा ऐश्वर्याय शिरसे स्वाहा। सहस्रार्चिः सप्तजिह्वः शक्त्यै शिखायै वषट्। त्रिसामा सामगः सामबलाय कवचाय हुम्। रथांग-पाणिरक्षोभ्यः तेजसे नेत्राभ्यां वौषट्। शार्ङ्गधन्वा गदाधरः वीर्याय अस्त्राय फट्॥ इति हृदयादिन्यासः॥ ऋतुः सुदर्शनः कालः भूर्भुवस्स्वरोम्। दिग्बन्धः॥

अथ ध्यानम्॥ ॐ क्षीरोदन्वत्प्रदेशे शुचिमणिविलसत्सैकतैर्मौक्तिकानां, मालाक्लृप्तासनस्थः स्फटिकमणिनिभैर्मौक्तिकैर्मण्डिताङ्गः। शुभ्रैरभ्रैरदभ्रैरुपरिविरचितैर्भुक्तपीयूषवर्षैरानन्दी नः पुनीयादरिनलिनगदाशङ्खपाणिर्मुकुन्दः॥१॥ भूः पादौ यस्य नाभिर्वियदसुरनिलश्चन्द्रसूर्यौच नेत्रे, कर्णावाशाः शिरो द्यौर्मुखमपि दहनो यस्य वसोऽयमब्धिः। अन्तःस्थं यस्य विश्वं सुरनरखगगोभोगिगन्धर्वदैत्यैश्चित्रं रंरम्यते तं त्रिभुवनवपुषं विष्णुमीशं नमामि॥२॥ शान्ता कारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्। लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम्। वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्॥३॥ मेघश्यामं पीतकौशेयवासं श्रीवत्साङ्कं कौस्तुभोद्भासिताङ्गम्। पुण्योपेतं पुण्डरीकायताक्षं विष्णुं वन्दे

सर्वलोकैकनाथम् ॥४॥ सशङ्खचक्रं सकिरीटकुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसी-रुहेक्षणम्। सहारवक्ष-स्थलकौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ॥५॥

ॐ विश्वं विष्णुर्वषट्कारो भूतभव्यभवत्प्रभुः। भूतकृद् भूतभृद्भावो भूतात्मा भूतभावनः ॥१४॥ पूतात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमागतिः। अव्ययः पुरुषः साक्षी क्षेत्रज्ञोऽक्षर एव च ॥१५॥ योगो योगविदां नेता प्रधानपुरुषेश्वरः। नारसिंहवपुः श्रीमान् केशवः पुरुषोत्तमः ॥१६॥ सर्वः शर्वः शिवः स्थाणुर्भूतादिर्निधिरव्ययः। सम्भवो भावनो भर्त्ता प्रभवः प्रभुरीश्वरः ॥१७॥ स्वयम्भूः शम्भुरादित्यः पुष्कराक्षो महास्वनः। अनादिनिधनो धाता विधाता धातुरुत्तमः ॥१८॥ अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः। विश्वकर्मा मनुस्त्वष्टा स्थविष्ठः स्थविरो ध्रुवः ॥१९॥ अग्राह्यः शाश्वतः कृष्णो लोहिताक्षः प्रतर्दनः। प्रभूतस्त्रिककुब्धाम पवित्रं मंगलम्परम् ॥२०॥ ईशानः प्राणदः प्राणो ज्येष्ठः श्रेष्ठः प्रजापतिः। हिरण्यगर्भो भूगर्भो माधवो मधुसूदनः ॥२१॥ ईश्वरो विक्रमी धन्वी मेधावी विक्रमः क्रमः। अनुत्तमो दुराधर्षः कृतज्ञः कृतिरात्मवान् ॥२२॥ सुरेशः शरणः शर्म विश्वरेताः प्रजाभवः। अहः सम्वत्सरो व्यालः प्रत्ययः सर्वदर्शनः ॥२३॥ अजः सर्वेश्वरःसिद्धिःसिद्धिःसर्वादिरच्युतः। वृषाकपिरमेयात्मा सर्वयोगविनिःसृतः ॥२४॥ वसुर्वसुमनाः सत्यः समात्मा सम्मितः समः। अमोघः पुण्डरीकाक्षो वृषकर्मा वृषाकृतिः ॥२५॥ रुद्रो बहुशिरा वभ्रुर्विश्वयोनिः शुचिश्रवाः। अमृतः शाश्वतस्थाणुर्वरारोहो महातपाः ॥२६॥ सर्वगः सर्वविद् भानुर्विष्वक्सेनो जनार्दनः। वेदो वेदविद्व्यङ्गो वेदाङ्गो वेदवित् कविः ॥२७॥ लोकाध्यक्षः सुराध्यक्षो धर्माध्यक्षः कृताकृतः॥ चतुरात्मा चतुर्व्यूहश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्भुजः ॥२८॥ अनघो विजयो जेता विश्वयोनिः पुनर्वसुः ॥२९॥ उपेन्द्रो वामनः प्रांशुरमोघः शुचिरूर्जितः। यतीन्द्रः संग्रहः सर्गो धृतात्मा नियमो यमः ॥३०॥ वेद्यो वैद्यः सदायोगी वीरहा माधवो मधुः। अतीन्द्रियो महामायो महोत्साही महाबलः ॥३१॥ महाबुद्धिर्महावीर्यो महाशक्ति र्महाद्युतिः। अनिर्देश्यवपुः श्रीमानमेयात्मा महाद्रिधृक् ॥३२॥ महेष्वासो महीभर्त्ता श्रीनिवासः सतां गतिः। अनिरुद्धः सुरानन्दो गोविन्दो गोविदांपतिः ॥३३॥ मरीचिर्दमनो हंसः सुपर्णो भुजगोत्तमः। हिरण्यनाभः

सुतपाः पद्मनाभः प्रजापतिः ॥३४ ॥ अमृत्युः सर्व दृक्सिंहः सन्धाता सन्धिमान् स्थिरः । अजो दुर्मर्षणः शास्ता विश्रुतात्मा सुरारिहा ॥३५ ॥ गुरुर्गुरुतमो धाम सत्यः सत्यपराक्रमः । निमिषोऽनिमिषः स्रग्वी वाचस्पतिरुदारधीः ॥३६ ॥ अग्रणीर्ग्रामणीः श्रीमान् न्यायो नेता समीरणः ॥ सहस्रमूर्द्धा विश्वात्मा सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥३७ ॥ आवर्तनो निवृत्तात्मा संवृतः सम्प्रमर्दनः । अहः संवर्तको बह्निरनिलो धरणीधरः ॥३८ ॥ सुप्रसादः प्रसन्नात्मा विश्वधृग्विश्वभुग्विभुः । सत्कर्ता सत्कृतः साधुर्जह्नुर्नारायणो नरः ॥३९ ॥ असंख्येयोऽप्रमेयात्मा विशिष्टः शिष्टकृच्छुचिः । सिद्धार्थः सिद्धसंकल्पः सिद्धिदः सिद्धिसाधनः ॥४० ॥ वृषाहीः वृषभो विष्णुर्वृषपर्वा वृषोदरः । वर्धनो वर्धमानश्च विविक्तः श्रुतिसागरः ॥४१ ॥ सुभुजो दुर्धरो वाग्मी महेन्द्रो वसुदो वसुः । नैकरूपो वृहद्रूपः शिपिविष्टः प्रकाशनः ॥४२ ॥ ओजस्तेजोद्युतिधरः प्रकाशात्मा प्रतापनः । ऋद्धः स्पष्टाक्षरो मन्त्रश्चन्द्रांशुर्भास्करद्युतिः ॥४३ ॥

अमृतांशूद्भवो भानुः शशविन्दुः सुरेश्वरः । औषधं जगतः सेतुः सत्यधर्मपराक्रमः ॥४४ ॥ भूतभव्यभवन्नाथः पवनः पावनोऽनलः । कामहा कामकृत्कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः ॥४५ ॥ युगादिकृद्युगावर्तो नैकमायो महाशनः । अदृश्योऽव्यक्तरूपश्च सहस्रजिदनन्तजित् ॥४६ ॥ इष्टोऽविशिष्टः शिष्टेष्टः शिखण्डी नहुषो वृषः । क्रोधहा क्रोधकृत्कर्ता विश्ववाहुमहीधरः ॥४७ ॥ अच्युतः प्रथितः प्राणः प्राणदो वासवानुजः । अपान्निधिरधिष्ठानमप्रमत्तः प्रतिष्ठितः ॥४८ ॥ स्कन्दः स्कन्दधरो धुर्यो वरदो वायुवाहनः । वासुदेवो बृहद्भानुरादिदेवः पुरन्दरः ॥४९ ॥ अशोकस्तारणस्तारः शूरः शौरिर्जनेश्वरः । अनुकूलः शतावर्तः पद्मी पद्मनिभेक्षणः ॥५० ॥ पद्मनाभोऽरविन्दाक्षः पद्मगर्भः शरीरभृत् । महर्द्धिरृद्धो वृद्धात्मा महाक्षो गरुडध्वजः ॥५१ ॥ अतुलः शरभो भीमः समयज्ञो हविर्हरिः । सर्वलक्षण लक्षण्यो लक्ष्मीवान् समितिञ्जयः ॥५२ ॥ विक्षरो रोहितो मार्गो हेतुर्दामोदरः सहः । महीधरो महाभागो वेगवानमिताशनः ॥५३ ॥ उद्भवः क्षोभणो देवः श्रीगर्भः परमेश्वरः । करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः ॥५४ ॥ व्यवसायो व्यवस्थानः संस्थानः स्थानदो ध्रुवः । परर्द्धिः परमः स्पष्टस्तुष्टः पुष्टः शुभेक्षणः ॥५५ ॥ रामो विरामो विरजो मार्गो नेयो नयोऽनयः । वीरः शक्तिमतां

श्रेष्ठो धर्मो धर्मविदुत्तमः ॥५६ ॥ वैकुण्ठः पुरुषः प्राणः प्राणदः प्रभवः पृथुः। हिण्यगर्भः शत्रुघ्नो व्याप्तो वायुरधोक्षजः ॥५७ ॥ ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः। उग्रः संवत्सरो दक्षो विश्रामो विश्वदक्षिणः ॥५८ ॥ विस्तारः स्थावरः स्थाणुः प्रमाणं बीजमव्ययम्। अर्थोऽनर्थो महाकोशो महाभोगो महाधनः ॥५९ ॥ अनिर्विण्णः स्थविष्ठोऽभूर्धर्मयूपो महामखः। नक्षत्रनेमिर्नक्षत्री क्षमः क्षामः समीहनः ॥६० ॥ यज्ञ इज्यो महेज्यश्च क्रतुः सत्रं सतां गतिः। सर्वदर्शी विमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुत्तमम् ॥६१ ॥ सुव्रतः सुमुखः सूक्ष्मः सुघोषः सुखदः सुहृत्। मनोहरो जितक्रोधो वीरबाहुर्विदारणः ॥६२ ॥ स्वापनः स्ववशो व्यापी नैकात्मा नैककर्मकृत्। वत्सरो वत्सलो वत्सी रत्नगर्भो धनेश्वरः ॥६३ ॥ धर्मगुब्धर्मकृद् धर्मी सदसदक्षरमक्षरम्। अविज्ञाता सहस्रांशुर्विधाता कृतलक्षणः ॥६४ ॥ गभिस्तिनेमिः सत्त्वस्थः सिंहो भूतमहेश्वरः। आदिदेवो महादेवो देवेशो देवभृद् गुरुः ॥६५ ॥ उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः। शरीरभूतभृद् भोक्ता कपीन्द्रो भूरि-दक्षिणः ॥६६ ॥ सोमपोऽमृतपः सोमः पुरुजित्पुरुसत्तमः। विनयो जयः सत्यसन्धो दाशार्हः सात्वतां पतिः ॥६७ ॥ जीवो विनयिता साक्षी मुकुन्दोऽमित विक्रमः। अम्भोनिधिरनन्तात्मा महोदधिशयोऽन्तकः ॥६८ ॥ अजो महार्हः स्वाभाव्यो जितामित्रः प्रमोदनः। आनन्दो नन्दनो नन्दः सत्यधर्मा त्रिविक्रमः ॥६९ ॥ महर्षिः कपिलाचार्यः कृतज्ञो मेदिनीपतिः। त्रिपदस्त्रिदशाध्यक्षो महाशृंगः कृतान्तकृत् ॥७० ॥ महावराहो गोविन्दः सुषेणः कनकांगदी। गुह्यो गभीरो गहनो गुप्तश्चक्रगदाधरः ॥७१ ॥ वेधाः स्वांगोऽजितः कृष्णो दृढः संकर्षणोऽच्युतः। वरुणो वारुणो वृक्षः पुष्कराक्षो महामनाः ॥७२ ॥ भगवान् भगहा नन्दी वनमाली हलायुधः। आदित्यो ज्योति रादित्यः सहिष्णुर्गतिसत्तमः ॥७३ ॥ सुधन्वा खण्डपरशुर्दारुणो द्रविणप्रदः। दिविस्पृक् सर्वदृग्व्यासो वाचस्पतिरयोनिजः ॥७४ ॥ त्रिसामा सामगः साम निर्वाणं भेषजं भिषक्। संन्यासकृच्छमः शान्तो निष्ठा शान्तिः परायणः ॥७५ ॥ शुभाङ्गः शान्तिदः स्रष्टा कुमुदः कुवलेशयः। गोहितो गोपतिर्गोप्ता वृषभाक्षो वृषप्रियः ॥७६ ॥ अनिवर्ती निवृत्तात्मा संक्षेप्ता क्षेमकृच्छिवः। श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासः श्रीपतिः श्रीमतांवरः ॥७७ ॥ श्रीदः श्रीशः

श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः। श्रीधरः श्रीकरः श्रेयः श्रीमांल्लोकत्रयाश्रयः ॥७८॥ स्वच्छःस्वङ्गः शतानन्दो नन्दि ज्योतिर्गणेश्वरः। विजितात्मा विधेयात्मा सत्कीर्तिश्छिन्नसंशयः ॥७९॥ उदीर्णः सर्वतश्चक्षुरनीशः शाश्वतः स्थिरः। भूषणो भूषयो भूतिर्विशोकः शोकनाशनः ॥८०॥ अर्चिष्मानर्चितः कुम्भो विशुद्धात्मा विशोधनः। अनिरुद्धोऽप्रतिरथः प्रद्युम्नोऽमितविक्रमः ॥८१॥ कालनेमिनिहा वीरः शौरिः शूरजनेश्वरः। त्रिलोकात्मा त्रिलोकेशः केशवः केशिहा हरिः ॥८२॥ कामदेवः कामपालः कामी कान्तः कृतागमः। अनिर्देश्यवपुर्विष्णुर्वीरोऽनन्तो धनञ्जयः ॥८३॥ ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद् ब्रह्मा ब्रह्म ब्रह्मविवर्धनः। ब्रह्मविद् ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः ॥८४॥ महाक्रमो महाकर्मा महातेजा महोरगः। महाक्रतुर्महायज्वा महायज्ञो महाहविः ॥८५॥ स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोत्रः स्तुति स्तोता रणप्रियः। पूर्णः पूरयिता पुण्यः पुण्यकीर्तिरनामयः ॥८६॥ मनोजवस्तीर्थकरो वसुरेतावसुप्रदः। वसुप्रदो वासुदेवो वसुर्वसुमना हविः ॥८७॥ सद्गतिः सत्कृतिः सत्ता सद्भूतिः सत्परायणः। शूरसेनो यदुश्रेष्ठः सन्निवासः सुयामुनः ॥८८॥ भूतावासो वासुदेवः सर्वासुनिलयोऽनलः। दर्पहा दर्पदो दृप्तो दुर्धरोऽथापराजितः ॥८९॥ विश्वमूर्तिर्महामूर्तिर्दीप्तमूर्तिरमूर्तिमान् अनेकमूर्तिरव्यक्तः शतमूर्ति शताननः ॥९०॥ एको नैकः सवः कः किं यत्तत्पदमनुत्तमम्। लोकबन्धुर्लोकनाथो माधवो भक्तवत्सलः ॥९१॥ सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी। वीरहा विषमः शून्यो घृताशीरचलश्चलः ॥९२॥ अमानी मानदो मान्यो लोकस्वामी त्रिलोकधृक्। सुमेधा मेधजो धन्यः सत्यमेधा धराधरः ॥९३॥ तेजोवृषो द्युतिधरः सर्वशस्त्रभृताम्वरः। प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रो नैकशृंगो गदाग्रजः ॥९४॥ चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः। चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेदविदेकपात् ॥९५॥ समावर्तोऽनिवृत्तात्मा दुर्जयो दुरतिक्रमः। दुर्लभो दुर्गमो दुर्गो दुरावासो दुरारिहा ॥९६॥ शुभांगो लोकसारंगः सुतन्तुस्तन्तुवर्धनः। इन्द्रकर्मा महाकर्मा कृतकर्मा कृतागमः ॥९७॥ उद्भवः सुन्दरः सुन्दो रत्ननाभः सुलोचनः। अर्को वाजसनः शृंगी जयन्तः सर्वविज्जयी ॥९८॥ सुवर्ण-

बिन्दुरक्षोभ्यः सर्ववागीश्वरेश्वरः। महाह्रदो महागर्तो महाभूतो महानिधिः ॥९९॥ कुमुदः कुन्दरः कुन्दः पर्जन्यः पावनोऽनिलः। अमृताशोऽमृतवपुः सर्वज्ञः सर्वतोमुखः ॥१००॥ सुलभः सुव्रतः सिद्धः शत्रुजिच्छत्रुतापनः। न्यग्रोधो दुम्बरोऽश्वत्थश्चाणूरान्ध्रनिषूदनः ॥१०१॥ सहस्रार्चिः सप्तजिह्वः सप्तैधा सप्तवाहनः अमूर्तिरनघोऽचिन्त्यो भयकृद् भयानशनः ॥१०२॥ अणुर्बृहत्कृशः स्थूलो गुणभृन्निर्गुणो महान्। अधृतः स्वधृतः स्वास्यः प्राग्वंशो वंश वर्धनः ॥१०३॥ भारभृत्कथितो योगी योगीशः सर्वकामदः। आश्रमः श्रमणः क्षामः सुपर्णो वायुवाहनः ॥१०४॥ धनुर्धरो धनुर्वेदो दण्डो दमयिता दमः। अपराजितः सर्वसहा नियन्ता नियमो यमः ॥१०५॥ अभिप्रायः प्रियार्होऽर्हः प्रियकृत् प्रीतिवर्धनः ॥१०६॥ विहायसगतिर्ज्योतिः सुरुचिर्हुतभुग्विभुः। रविर्विरोचनः सूर्यः सविता रविलोचनः ॥१०७॥ अनन्तो हुतभुग् भोक्ता सुखदो नैकजोऽग्रजः। अनिर्विण्णः सदामर्षी लोकाधिष्ठानमद्भुतः ॥१०८॥ सनात् सनातनतमः कपिलः कपिरव्ययः। स्वस्तिदः स्वस्तिकृत् स्वस्ति स्वस्तिभुक् स्वस्तिदक्षिणा ॥१०९॥ अरौद्रः कुण्डली चक्री विक्रम्यूर्जितशासनः। शब्दातिगः शब्दसहः शिशिरः शर्वरीकरः ॥११०॥ अक्रूरः पेशलो दक्षो दक्षिणः क्षमिणांवरः। विद्वत्तमो वीतभयः पुण्यश्रवणकीर्तनः ॥१११॥ उत्तारणो दुष्कृतिहा पुण्यो दुःस्वप्ननाशनः। वीरहा रक्षणः सन्तो जीवनः पर्यवस्थितः ॥११२॥ अनन्तरूपोऽनन्तश्रीर्जितमन्युर्भयापहः चतुरस्रो गम्भीरात्मा विदिशो व्यादिशो दिशः ॥११३॥ अनादिर्भूर्भुवोलक्ष्मीः सुवीरो रुचिराङ्गदः। जननो जनजन्मादिर्भीमो भीमपराक्रमः ॥११४॥ आधारनिलयोधाता पुष्पहासः प्रजागरः। ऊर्ध्वगः सत्पथाचारः प्राणदः प्रणवः पणः ॥११५॥ प्रमाणं प्राणनिलयः प्राणभृत् प्राणजीवनः। तत्त्वं तत्वविदेकात्मा जन्ममृत्युजरातिगः ॥११६॥ भूर्भुवःस्वस्तरुस्तारः सविता प्रपितामहः। यज्ञो यज्ञपतिर्यज्वा यज्ञाङ्गो यज्ञवाहनः ॥११७॥ यज्ञभृद्यज्ञकृद्यज्ञी यज्ञभुग्- यज्ञसाधनः। यज्ञान्तकृद्यज्ञगुह्यमन्नमन्नाद एव च ॥११८॥ आत्मयोनिः स्वयञ्जातो वैखानः सामगायनः। देवकीनन्दनः स्रष्टा क्षितीशः पापनाशनः ॥११९॥ शङ्खभृन्नन्दकीचक्री

शार्ङ्गधन्वा गदाधरः। रथाङ्गपाणिरक्षोभ्यः सर्वप्रहरणायुधः ॥१२० ॥ सर्वप्रहरणायुधः ॐ नमः।

इतीदं कीर्तनीयस्य केशवस्य महात्मनः। नाम्नां सहस्रं दिव्यानामशेषेण प्रकीर्तितम् ॥१२१ ॥ य इदं शृणुयान्नित्यं यश्चापि परिकीर्तयेत् नाशुभं प्राप्नुयात्किञ्चित् सोऽमुत्रेह च मानवः ॥१२२ ॥ वेदान्तगो ब्राह्मणः स्यात्क्षत्रियो विजयी भवेत् ॥ वैश्यो धनसमृद्धः स्याच्छूद्रः सुखमवाप्नुयात् ॥१२३ ॥ धर्मार्थी प्राप्नुयाद्धर्ममर्थार्थी चार्थमाप्नुयात्। कामानवाप्नुयात्कामी प्रजार्थी प्राप्नुयात्प्रजाम् ॥१२४ ॥ भक्तिमान् यः सदोत्थाय शुचिस्तद्गतमानसः। सहस्रं वासुदेवस्य नाम्नामेतत् प्रकीर्तयेत् ॥१२५ ॥ यशः प्राप्नोति विपुलं ज्ञातिप्राधान्यमेव च। अचलां श्रियमवाप्नोति श्रेयः प्राप्नोत्युत्तमम् ॥१२६ ॥ न भयं क्वचिदाप्नोति वीर्यतेजश्च विन्दति। भवत्यरोगी द्युतिमान् बलरूपगुणान्वितः ॥१२७ ॥ रोगार्तो मुच्यते रोगाद्वद्धो मुच्येत बन्धनात्। भयान्मुच्येत भीतस्तु मुच्येतापन्न आपदः ॥१२८ ॥ दुर्गाण्यतितरत्याशु पुरुषः पुरुषोत्तमम्। स्तुवन्नामसहस्रेण नित्यं भक्तिसमन्वितः ॥१२९ ॥ वासुदेवाश्रयो मर्त्यो वासुदेवपरायणः। सर्वपापविशुद्धात्मा याति ब्रह्म सनातनम् ॥१३० ॥ न बासुदेवभक्तानामशुभं विद्यते क्वचित्। जन्ममृत्युजराव्याधिर्भयं नैवोपजायते ॥१३१ ॥ इमं स्तवमधीयानः श्रद्धाभक्तिसमन्वितः। युज्येतात्मसुखक्षान्ति श्रीधृतिस्मृति कीर्तिभिः ॥१३२ ॥ न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः।

भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां पुरुषोत्तमे ॥१३३ ॥ द्यौः सचन्द्रार्कनक्षत्राः खं दिशो भूर्महोदधिः। वासुदेवस्य वीर्येण विधृतानि महात्मनः ॥१३४ ॥ ससुरासुरगन्धर्वं सयक्षोरगराक्षसम्। जगद्वशे वर्ततेदं कृष्णस्य सचराचरम् ॥१३५ ॥ इन्द्रियाणि मनो बुद्धिः सत्वं तेजो बलं धृतिः। वासुदेवात्मकान्याहुः क्षेत्रं क्षेत्रज्ञ एव च ।१३६ ॥ सर्वागमानामाचारः प्रथमं परिकल्पते। आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः ॥१३७ ॥ ऋषयः पितरो देवाः महाभूतानि धातवः। जङ्गमाजङ्गमं चेदं जगन्नारायणोद्भवम् ॥१३८ ॥ योगो ज्ञानं तथा सांख्यं विद्याः शिल्पादि कर्म च। वेदाःशास्त्राणि विज्ञानमेतत्

सर्वं जनार्दनात् ॥१३९ ॥ एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः। त्रीन् लोकान् व्याप्य भूतात्मा भुंक्ते विश्वभुगव्ययः ॥१४० ॥ इदं स्तवं भगवतो विष्णुर्व्यासेन कीर्तितम्। पठेद्य इच्छेत्पुरुषः श्रेयः प्राप्तुं सुखानि च ॥१४१ ॥ विश्वेश्वरमजं देवं जगतः प्रभवाप्ययम्। भजन्ति ये पुष्कराक्षं न ते यान्ति पराभवम् ॥१४२ ॥

इति श्रीमन्महाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां वैयासिक्यामनुशासनिके पर्वणि दानधर्मे भीष्मयुधिष्ठरसंवादे श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

॥श्रीगणेशाय नमः ॥

११. शिवमहिम्नः स्तोत्रम्

महिम्नः पारन्ते परमविदुषो यद्यसदृशी।
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः॥
अथाऽवाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामवधि गृणन्।
ममाप्येष स्तोत्रे हर ! निरपवादः परिकरः॥१ ॥

हे हर ! (सभी दुःखों के हरने वाले) आपकी महिमा के अन्त को न जानने वाले मुझ अज्ञानी से की गई स्तुति यदि आपकी महिमा के अनुकूल हो, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। क्योंकि ब्रह्मा आदि भी आपकी महिमा के अन्त को नहीं जानते हैं। अतः उनकी स्तुति भी आपके योग्य नहीं है। "स वाग् यया तस्य गुणान् गृणीते" के अनुसार यथामति मेरी स्तुति उचित ही है। क्योंकि—"नभः पतन्त्यात्मसमं पतत्रिणः" इस न्याय से मेरी स्तुति आरम्भ करना क्षम्य हो।११ ॥

अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयो-
रतद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधते श्रुतिरपि।
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः।
पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः॥२ ॥

हे हर ! आपकी निर्गुण और सगुण महिमा मन और वाणी के विषय से परे है जिसे वेद भी संकुचित होकर कहते हैं। अतः आपकी उस महिमा की स्तुति करने में कौन समर्थ हो सकता है। तब भी अर्वाचीन (भक्तों के अनुग्रहार्थ धारण किया हुआ नवीन) रूप भक्तों के मन और वाणी का विषय हो सकता है ॥२ ॥

मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवत-
स्तव ब्रह्मन्किं वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम्॥

मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः।
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथनबुद्धिर्व्यवसिता ॥३ ॥

हे ब्रह्मन् ! जब कि आपने मधु के सदृश मधुर और अमृत के सदृश जीवनदायिनी वेदरूपी वाणी को प्रकाशित किया है, तब ब्रह्मादि से की गई स्तुति आपको कैसे प्रसन्न कर सकती है ? हे त्रिपुरमथन ! जब ब्रह्माभी आपकी स्तुति गान करने में समर्थ नहीं हैं, तब मुझ तुच्छ की क्या सामर्थ्य है। मैं तो केवल आपके गुण-गान से अपनी वाणी को पवित्र करने की इच्छा करता हूं ॥३ ॥

तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदयरक्षा प्रलयकृत
त्रयीवस्तुव्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु ॥
अभव्यानामस्मिन्वरद ! रमणीयामरमणीम्
विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः ॥४ ॥

हे वरद ! (वर देने वाले) आपको ऐसे ऐश्वर्य का जो संसार की सृष्टि, रक्षा तथा प्रलय करने वाला है, तीन वेदों से गाया हुआ है, तीनों गुणों (सत्, रज, तम) से परे है, तीनों शक्तियों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) में व्याप्त है, कुछ नास्तिक अनुचित निन्दा करते हैं। इससे उन्हीं का अधः पतन होता है न कि आपके यश का ॥४ ॥

किमीहः किङ्कायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनम्।
किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च ॥
अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः।
कुतर्कोऽयं कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः ॥५ ॥

"अचिन्त्याः खलु ये भावाः न तांस्तर्केण योजयेत्" के अनुसार कल्पना से बाहर, अपनी अलौकिक माया से सृष्टि करने वाले आपके ऐश्वर्य के विषय में नास्तिकों का यह (वह ब्रह्मा सृष्टि करता है, किन्तु उसकी इच्छा, शरीर सहकारी कारण आधार और समवायि कारण क्या है ?) कुतर्क जगत के कतिपय मन्द मति वालों को भ्रान्ति से वाचाल करता है क्योंकि आपका अविच्छिन्न सुयश अतर्क्य है, अर्थात् सन्देह करने योग्य कदापि सम्भव नहीं है ॥५ ॥

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगता-
मधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति ॥
अनीशो वा कुर्याद्भुवनजनने कः परिकरो
यतो मन्दास्त्वां प्रत्यमरवर संशेरत इमे ॥६ ॥

हे अमर वर ! (देवश्रेष्ठ) यह सावयव लोक अवश्य ही जन्य है तथा इसका कर्ता भी कोई न कोई है, परन्तु वह कर्ता आपके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं हो सकता क्योंकि इस विचित्र संसार की विचित्र रचना की सामग्री दूसरे के पास असम्भव हैं। इसलिये अज्ञानी लोग ही तुम्हारे विषय में सन्देह करते हैं ॥६ ॥

त्रयी साङ्ख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति।
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च॥
रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषाम्।
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयासमर्णव इव॥७॥

हे अमरवर ! वेदत्रयी, सांख्य, योग, शैव मत और वैष्णव मत ऐसे भिन्न-भिन्न मतों में कोई वैष्णव मत और कोई शैव मत अच्छा कहते हैं, रुचि की विचित्रता से टेढ़े सीधे मार्ग में प्रवृत्त हुए मनुष्यों को अन्त में एक आप ही साक्षात् या परम्परया प्राप्त होते हो, जैसे नदियां टेढ़ी-सीधी बहती हुई साक्षात् या परम्परा से समुद्र में ही मिलती हैं॥७॥

महोक्षः खट्वाङ्गम्परशुरजिनं भस्म फणिनः।
कपालं चेतीयत्तव वरद ! तन्त्रोपकरणम्॥
सुरास्तां तामृद्धिं दधति तु भवद्भ्रूप्रणिहिताम्।
न हि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णां भ्रमयति॥८॥

हे वरद ! महोक्ष (बैल), खटिया का पाया, परशु, गजचर्म, भस्म, सर्प, कपाल इत्यादि आपकी धारण सामग्रियां हैं, परन्तु उन ऋद्धियों को जो आपकी कृपा से प्राप्त देवता लोग भोगते हैं, आप क्यों नहीं भोगते ! स्वात्माराम (आत्मज्ञानी) को विषय (रूपरसादि) रूपी मृगतृष्णा नहीं भ्रमा सकती॥८॥

ध्रुवं कश्चित्सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदम्।
परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये॥
समस्तेऽप्येतस्मिन्पुरमथन तैर्विस्मित इव।
स्तुवञ्जिह्रेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता॥९॥

हे पुरमथन ! सांख्य मतानुयायी "नह्यसतः उत्पत्तिः सम्भवति" के अनुसार जगत् को ध्रुव (नित्य) बुद्धमतानुयायी अध्रुव (क्षणिक) तार्किकजन नित्य (आकाश आदि पञ्च और पृथिव्यादि परमाणु और अनित्य कार्यद्रव्य) दोनों मानते हैं। इन मतान्तरों से विस्मित मैं भी आपकी स्तुति करता हुआ लज्जित नहीं होता, क्योंकि वाचालता लज्जा को स्थान नहीं देती॥९॥

तवैश्वर्यं यत्नाद्यदुपरि विरञ्चिर्हरिरधः।
परिच्छेत्तुं यातावनलमनिलस्कन्धवपुषः॥
ततो भक्ति श्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरिश ! यत्।
स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति॥१०॥

हे गिरीश [गिरि में शयन करने वाले], तेजपुंज आपकी विभूति को ढूंढने के लिए ब्रह्मा आकाश तक और विष्णु पाताल तक जाकर भी उसे पाने में असमर्थ रहे, तत्पश्चात् उनकी कायिक,

मानसिक और वाचिक सेवा से प्रसन्न होकर आप स्वयं प्रकट हुए। इससे यह निश्चय है कि आप की सेवा से ही सब सुलभ है ॥१० ॥

अयत्नादापाद्यत्रिभुवनमवैरव्यतिकरम्।
दशास्यो यद्बाहूनभृत रणकण्डूपरवशान् ॥
शिरः पद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबलेः।
स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर ! विस्फूर्जितमिदम् ॥११ ॥

हे त्रिपुरहर ! मस्तकरूपी कमल की माला को जिस रावण ने आपके कमलवत् चरणों में अर्पण करके त्रिभुवन को निष्कण्टक बनाया था तथा युद्ध के लिए सर्वदा उत्सुक रहने वाली भुजाओं को पाया था, वह आपकी अविरल भक्ति का ही परिणाम था ॥११ ॥

अमुष्य त्वत्सेवा समधिगतसारं भुजवनम्।
बलात्कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ विक्रमयतः ॥
अलभ्या पातालेऽप्यलसचलिताङ्गुष्ठशिरसि।
प्रतिष्ठा त्वय्यासीद्ध्रुवमुपचितो मुह्यति खलः ॥१२ ॥

रावण उन्हीं भुजाओं से जिन्होंने आपकी सेवा के बल से प्राप्त किया था, आपके घर कैलाश को उखाड़ने के लिए हठात् प्रयोग करते ही आपके अंगूठे के अग्र भाग के संकेत मात्र से वह पाताल में गिरा, निश्चय ही खल उपकार को भूल जाते हैं ॥१२ ॥

यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद ! परमोच्चैरपि सती-
मधश्चक्रैः बाणः परिजनविधेयस्त्रिभुवनम् ॥
न तच्चित्रं तस्मिन् वरिवसितरि त्वच्चरणयोः
न कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः ॥१३ ॥

हे वरद ! बाणासुर ने आपको नमस्कार मात्र से इन्द्र की सम्पत्ति को नीचा दिखलाने वाली सम्पत्ति प्राप्त की थी और त्रिभुवन को अपना परिजन बना लिया था। यह आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि आपके चरणों में नमस्कार करना किन की उन्नति का कारण नहीं होता ॥१३ ॥

अकाण्ड ब्रह्माण्ड क्षयचकितदेवासुरकृपा।
विधेयस्याऽऽसीद्यस्त्रिनयनविषं संहृतवतः ॥
स कल्माषःकण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो।
विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभङ्गव्यसनिनः ॥१४ ॥

हे त्रिनयन ! सिन्धु विमंथन से उत्पन्न कालकूट से असमय में ब्रह्माण्ड के नाश से डरे हुए सुर व असुरों पर कृपा करके एवं संसार को बचाने की इच्छा से उसको [काल कूट को] पान करने से आपके कण्ठ की कालिमा भी शोभा देती है। ठीक ही है, जगत् के उपकार की कामना वाले दूषण भूषण समझे जाते हैं ॥१४ ॥

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे।
निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः॥
स पश्यन्नीश ! त्वामितरसुरसाधारणमभूत्।
स्मरःस्मर्तव्यात्मा न हि वशिषु पथ्यः परिभवः॥१५॥

जो विजित कामदेव अपने बाणों द्वारा जगत् के देव, मनुष्य और राक्षसों को जीतने में सर्वथा समर्थ रहा, वही कामदेव ने अन्य देवों के समान आपको भी समझा, जिससे वह स्मरण मात्र के लिये ही रह गया [दग्ध हो गया] जितेन्द्रियों का अनादर करना अहितकारक ही होता है॥१५॥

मही पादाघाताद् व्रजति सहसा संशयपदं।
पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम्॥
मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा।
जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता॥१६॥

हे ईश ! आप जगत् की रक्षा के लिए राक्षसों को मोहित करके नाश के लिए नृत्य करते हो, तब भी संसार का आपके ताण्डव से दुःख दूर होता है, क्योंकि आपके चरणों के आघात से पृथ्वी धंसने लगती है, विशाल बाहुओं के संघर्ष से आकाश पीड़ित हो जाता है तथा आपकी चञ्चल जटाओं से ताड़ित हुआ स्वर्ग लोक भी कम्पायमान हो जाता है। ठीक ही है उपकार भी किसी के लिए अहितकारक हो जाता है॥१६॥

वियद्व्यापीतारागणगृणितफेनोद्गमरुचिः
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते।
जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमि-
त्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः॥१७॥

हे ईश ! तारा गणों की कान्ति से अत्यन्त शोभायमान आकाश में व्याप्त तथा भूलोक को चारों ओर से घेर कर जम्बूद्वीप बनाने वाला गङ्गा का जल प्रवाह आपके जटाकपाल में बूंद से भी लघु देखा जाता है। इतने से ही आपके दिव्य तथा श्रेष्ठ शरीर की कल्पना की जा सकती है॥१७॥

रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिनगेन्द्रो धनुरथो।
रथाङ्गे चन्द्रार्कौ रथचरणपाणिः शर इति॥
दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधि-
र्विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः॥१८॥

हे ईश ! तृण के समान त्रिपुर को जलाने के लिए पृथ्वी को रथ, ब्रह्मा को सारथी, हिमालय को धनुष, सूर्य-चन्द्र को रथ का चक्र तथा विष्णु को विषधर बाण बनाना आपका आडम्बर मात्र है। विचित्र वस्तुओं से क्रीडा करते हुए समर्थों की बुद्धि स्वतन्त्र होती है॥१८॥

हरिस्ते साहस्रं कमलवलिमाधाय पदयो-
र्यदेकोने तस्मिन्निजमुदहरन्नेत्रकमलम्।
गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा-
त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्ति जगताम् ॥१९॥

हे त्रिपुरहर ! विष्णु आपके चरणों में प्रतिदिन सहस्र कमलों का उपहार देते थे। एक दिन की कमी होने के कारण उन्होंने अपने एक कमलवत् नेत्र को निकाल कर पूरा किया। यह भक्ति की परम सीमा चक्र के रूप में आज भी संसार की रक्षा किया करती है ॥१९॥

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमताम्।
क्व कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते॥
अतस्त्वां सम्प्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवम्।
श्रुतौ श्रद्धां बद्ध्वा दृढ़ परिकरः कर्मसु जनः ॥२०॥

हे त्रिपुरहर ! आप ही को यज्ञ के फल का दाता समझ कर, वेद में दृढ़ विश्वास कर मनुष्य कर्मों का आरम्भ करते हैं। क्रिया रूप यज्ञ के समाप्त होने पर आप ही फल देने वाले रहते हैं। आपकी आराधना के बिना नष्ट कर्म फलदायक नहीं होता ॥२०॥

क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता-
मृषीणामार्त्विज्यं शरणद ! सदस्याः सुरगणाः।
क्रतुभ्रेषस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो
ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः ॥२१॥

हे शरणद ! कर्मकुशल यज्ञपति प्रजा पति दक्ष के यज्ञ के ऋषिगण ऋत्विज, देवता सदस्य थे। फिर भी यज्ञ के फल देने वाले आप की अप्रसन्नता से वह ध्वंस हो गया। निंश्चय ही आप में श्रद्धा रहित किया गया यज्ञ नाश के लिए ही होता है।२१॥

प्रजानाथं नाथ ! प्रसभमधिकं स्वां दुहितरम्।
गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषु मृष्यस्य वपुषा॥
धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममुम्।
त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः ॥२२॥

हे नाथ ! काल से प्रेरित मृगरूप धारण किये ब्रह्मा के भय से मृगी रूपी धारण करने वाली अपनी कन्या में आसक्त देख, आपका उनके पीछे छोड़ा गया बाण आर्द्रा आज भी नक्षत्र रूप में मृगशिरा (ब्रह्मा) के पीछे वर्तमान है ॥२२॥

स्वलावण्याशंसा धृतधनुषमह्नाय तृणवत्।
पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि॥

यदि स्त्रैणं देवो यमनिरतदेहार्ध-घटनाद्।
अवैति त्वामद्धा वत वरद मुग्धा युवतयः ॥२३॥

हे यम नियम वाले त्रिपुरहर ! आपकी कृपा से आपका अर्धस्थान प्राप्त करने वाली, अपने सौन्दर्य रूपी धनुष को धारण करने वाले कामदेव को भस्म हुआ देखकर भी यदि पार्वती आपको अपने अधीन समझें तो ठीक ही हैं, क्योंकि प्रायः युवतियों की बात ज्ञानहीन होती है ॥२३॥

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर ! पिशाचाः सहचरा-
श्चिताभस्मालेपः स्त्रगपि नृकरोटीपरिकरः ॥
अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलम्।
तथापि स्मर्तृणां वरद ! परमं मङ्गलमसि ॥२४॥

हे स्मरहर ! आपका श्मशान में क्रीडा करना, भूत-प्रेत-पिशाचादि को साथ रखना, शरीर में चिता की भस्म का लेप करना तथा नर मुण्डों की माला पहनना आदि वीभत्स कर्मों से यद्यपि आपका चरित अमंगल है, तथापि स्मरण करने वालों को हे वरद ! आप सर्वदा परम मंगलरूप हैं ॥२४॥

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः।
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्सङ्गितदृशः ॥
यदालोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्यामृतमये।
दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान् ॥२५॥

हे वरद ! जिस प्रकार अमृतमय सरोवर में अवगाहन (स्नान करने से) प्राणिमात्र तापत्रय से मुक्त हो जाते हैं, उसी प्रकार इन्द्रियों से पृथक् करके, मन को स्थिर कर, विधिपूर्वक प्राणायाम से पुलकित तथा आनन्दाश्रु से युक्त योगीजन ज्ञानदृष्टि से जिसे देखकर परमानन्द का अनुभव करते हैं, वह आप ही हैं ॥२५॥

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवह-
स्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च ॥
परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता बिभ्रति गिरम्।
न विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि ॥२६॥

हे वरद, आपके विषय में ज्ञानीजनों की यह धारणा है "क्षिति हुतवहः क्षेत्रज्ञाम्भः प्रभंजन चन्द्रमस्तपनवियदित्यष्टा मूर्तिर्नमोभव विभ्रते।" इस श्रुति के अनुसार सूर्य चन्द्रमा, वायु, अग्नि, जल, आकाश, पृथ्वी और आत्मा भी आप ही हैं, किन्तु मेरे विचार से कोई स्थान नहीं हैं, जहां आप व्याप्त न हों ॥२६॥

त्रयीं तिस्रोवृत्तिस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरा।
नकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्तीर्णविकृतिः ॥

तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः।
समस्तं व्यस्तं त्वां शरणद ! गृणात्योमिति पदम् ॥२७॥

हे शरणद ! (अ, उ, म) 'ॐ' पद, शक्ति द्वारा तीन वेद (ऋग्, यजुः और साम) तीन वृत्ति (जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति), त्रिभुवन (भूर्भुवः स्वः) तथा तीन देव (ब्रह्मा, विष्णु, महेश), इन प्रपञ्चों से व्याप्त आपके बोधक हैं और समस्त 'ॐ' पद, समुदाय शक्ति से सर्व विकार रहित अवस्था त्रय से विलक्षण अखण्ड, चैतन्य आपको सूक्ष्म ध्वनि से कहता है ॥२७॥

भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सह महां-
स्तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम् ॥
अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देव ! श्रुतिरपि।
प्रियायास्मै धाम्ने प्रणिहितनमस्योऽस्मि भवते ॥२८॥

हे देव ! भव, शर्व, रुद्र, पशुपति, उग्र, महादेव, भीम और ईशान यह जो आपके नाम का अष्टक है, इस प्रत्येक नाम में वेद और देवतागण (ब्रह्मा) आदि बिहार करते हैं, इसलिए ऐसे प्रियधाम (आश्रय भूत) आपको मैं बार-बार नमस्कार करता हूं ॥२८॥

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो।
नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः ॥
नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो।
नमः सर्वस्मै ते तदिदमिति शर्वाय च नमः ॥२९॥

हे प्रियदेव ! [निर्जन वन-विहरण शील], नेदिष्ठ [अत्यन्त समीप], दविष्ठ [अत्यन्त दूर], क्षोदिष्ठ [अति सूक्ष्म], महिष्ठ [महान्] वर्षिष्ठ [अत्यन्त वृद्ध], यविष्ठ [अतियुवा], सर्वस्वरूप और अनिर्वचनीय रूप त्रिनेत्रधारी आपको नमस्कार है ॥२९॥

बहुलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः।
प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः ॥
जनसुखकृते सत्त्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः।
प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ॥३०॥

हे शिवजी ! जगत् की उत्पत्ति के लिए परम रजोगुण धारण किये भव (ब्रह्मा) रूप आपको बार-बार नमस्कार है और उस जगत् के संहार करने में तमोगुण को धारण करने वाले हर [रुद्र], आपके लिए पुनः-पुनः नमस्कार है, जगत् के सुख के लिए सत्त्व गुण को धारण करने वाले मृड [विष्णु], आपको बार-बार नमस्कार है। तीनों गुणों (सत्त्व, रज, तम) से परे अनिर्वचनीय पद से विशिष्ट आपको बार-बार नमस्कार है ॥३०॥

कृशपरिणति चेतः क्लेशवश्यं क्व चेदम्।
क्व च तव गुणसीमोल्लङ्घिनीशश्वदृद्धिः ॥

इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधा-
द्वरदचरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् ॥३१॥

हे वरद ! कहां तो रागद्वेष आदि से कलुषित तथा तुच्छ मेरा मन कहां आपकी अपरिमित विभूति, तिसपर भी आपकी भक्ति ने मुझे निर्भय बनाकर इस वाक्रूपी पुष्पाञ्जलि को आपके चरण-कमलों में समर्पण करने के लिए बाध्य किया है ॥३१॥

असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे।
सुरतरुवरशाखा लेखनीपत्रमुर्वी॥
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालम्।
तदपि तव गुणानामीश ! पारं न याति॥३२॥

हे ईश ! असित अर्थात् काले पर्वत समान कज्जल (स्याही) समुद्रपात्र में हो, सुरवर (कल्पवृक्ष) की शाखा की उत्तम लेखनी हो और पृथ्वी कागज हो, उन साधनों को लेकर स्वयं शारदा सर्वदा ही लिखती रहे तथापि आपके गुणों का पार नहीं पा सकती हैं, तो मैं कौन हूं ॥३२॥

असुरसुरमुनीन्द्रैरर्चितस्येन्दुमौले-
र्ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य।
सकलगुणवरिष्ठः पुष्पदन्ताभिधानो-
रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार॥३३॥

असुर, सुर और मुनियों से पूजित तथा विख्यात महिमा वाले ऐसे ईश्वर चन्द्रमौलि के इस स्तोत्र को अलघुवृत् अर्थात् बड़े (शिखरिणी) वृत्त में सकल गुण श्रेष्ठ पुष्पदंत नामक गन्धर्व ने बनाया ॥३३॥

अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत्-
पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान् यः।
स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथाऽत्र-
प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान् कीर्तिमांश्च॥३४॥

शुद्धचित होकर अनवद्य महादेवजी के स्तोत्र को जो पुरुष प्रतिदिन परम भक्ति से पढ़ता है। वह इस लोक में धन-धान्य, आयु युक्त, पुत्रवान और कीर्तिमान होता है और अन्त में शिव में शिवस्वरूप हो जाता है ॥३४॥

महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः।
अघोरान्नापरो मन्त्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम्॥३५॥

महादेवजी से श्रेष्ठ कोई देव नहीं, महिम्नः स्तोत्र से श्रेष्ठ कोई स्तोत्र नहीं, अघोर मंत्र से श्रेष्ठ कोई मंत्र नहीं और गुरु से श्रेष्ठ कोई तत्त्व नहीं ॥३५॥

दीक्षादानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः।
महिम्नस्तव पाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥३६ ॥

दीक्षा, दान, तप, तीर्थादि तथा ज्ञान और यागादि क्रियाएं इस शिवमहिम्नः स्तोत्र के पाठ की सोलहवीं कला को भी नहीं प्राप्त कर सकती हैं ॥३६ ॥

कुसुमदशननामा सर्वगन्धर्वराजः
शशिधरवरमौलेर्देवदेवस्य दासः।
स खलु निजमहिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषात्-
स्तवनमिदमकार्षीद्दिव्य-दिव्यं महिम्नः ॥३७ ॥

पुष्पदंत नाम के सभी गंधर्वों के राजा, भाल में चन्द्रमा को धारण करने वाले, देवताओं के देव महादेव जी के दास थे, वे सुरगुरु महादेव जी के क्रोध से अपनी महिमा से भ्रष्ट हुए, तब शिव के प्रसन्नार्थ इस परमदिव्य शिवमहिम्नः स्तोत्र को बनाया ॥३७ ॥

सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुम्
पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्यचेतः।
व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः
स्तवनमिदममोघं पुष्पदन्तप्रणीतम् ॥३८ ॥

यह पुष्पदंत का बनाया हुआ अमोघ स्तोत्र कैसा है कि—सुरवर मुनियों से पूज्य और स्वर्ग तथा मोक्ष का कारण है। इसे जो मनुष्य अनन्य चित्त से हाथ जोड़कर पढ़ता है वह किन्नरों द्वारा स्तुति किया हुआ शिव के समीप जाता है ॥३८ ॥

श्रीपुष्पदन्तमुखपङ्कजनिर्गतेन
स्तोत्रेण किल्विषहरेण हरप्रियेण।
कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन
सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः ॥३९ ॥

सावधान होकर श्रीपुष्पदंत के मुख से निकले हुए पापहारी तथा महादेव जी के प्रिय इस स्तोत्र को कण्ठ कर पाठ करने से प्राणिमात्र के स्वामी श्री महादेव जी प्रसन्न होते हैं ॥३९ ॥

आसमाप्तमिदं स्तोत्रं पुण्यं गन्धर्वभाषितम्।
अनौपम्यं मनोहारि शिवमीश्वरवर्णनम् ॥४० ॥

अनुपम और मन को हरने वाला ईश्वर वर्णनात्मक पवित्र स्तोत्र पुष्पदन्त गन्धर्व का कहा हुआ समाप्त हुआ ॥४० ॥

तव तत्त्वं व जानामि कीदृशोऽसि महेश्वर।
यादृशोऽसि महादेव तादृशाय नमो नमः ॥४१ ॥

हे महेश्वर ! मैं नहीं जानता कि आप कैसे हैं। आप जैसे भी हों आपके लिए मेरा नमस्कार है ॥४१ ॥

एककालं द्विकालं वा त्रिकालं यः पठेन्नरः।
सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते ॥४२ ॥

प्रातःकाल या दोपहर या सायंकाल में या तीनों काल में जो आपकी महिमा का गान करेगा वह सब पापों से छूटकर आप के लोक में सुखपूर्वक निवास करेगा ॥४२ ॥

इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छङ्करपादयोः।
अर्पिता तेन देवेशः प्रीयतां मे सदाशिवः ॥४३ ॥

इस प्रकार इस वाङ्मयी पूजा को मैं श्री शंकर जी के चरणों में अर्पण करता हूं जिससे महादेव जी मुझ पर प्रसन्न रहें ॥४३ ॥

१२. शिवताण्डव-स्तोत्रम्

जटाकटाहसम्भ्रमभ्रमन्निलिम्पनिर्झरी-
विलोलवीचिवल्लरीविराजमानमूर्धनि।
धगद्धगद्धगज्ज्वलल्लाटपट्टपावके
किशोरचन्द्रशेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम ॥१ ॥

भावार्थ—ताण्डव नृत्य के समय जटारूपी कूप में वेग से घूमती हुई भागीरथी की चञ्चल तरङ्गरूपी लताओं से शोभायमान और धक्क-धक्क शब्द सहित जलने वाली है अग्नि जिसमें ऐसे ललाट वाले तथा द्वितीया के चन्द्रमारूपी आभूषण को धारण करने वाले श्री महादेव जी के प्रति मेरी प्रतिक्षण प्रीति होवे ॥१ ॥

जटाटवीगलज्जलप्रवाहपावितस्थले
गलेऽवलम्ब्यलम्बितां भुजङ्गतुङ्गमालिकाम्।
डमड्डमड्डमन्निनादवड्डमर्वयम्।
चकारचण्डताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम् ॥२ ॥

भावार्थ—लंकापति रावण अभीष्ट सिद्धि के निमित्त श्री शंकरजी महाराज से प्रार्थना करता है कि जो श्री महादेव जी के जटारूपी वन से गिरते हुए जल के प्रवाह से पवित्र कण्ठ में बड़े-बड़े सर्पों की माला को लटका कर डमडम शब्द करने वाले डमरू को बजाते हुए ताण्डव (नृत्य) करते हैं वह श्री महादेव जी हमारा मंगल करें ॥२ ॥

धराधरेन्द्रनन्दिनीविलास बन्धुबन्धुर-
स्फुरद्दिगन्तसन्ततिप्रमोदमानमानसे।

कृपाकटाक्षधोरणीनिरुद्धदुर्धरापदि
क्वचिद्दिगम्बरे मनो विनोदमेतु वस्तुनि ॥३ ॥

भावार्थ—पर्वतराज हिमालय की पुत्री पार्वती के क्रीड़ा के बान्धव और अति रमणीय प्रकाशमान कृपा-कटाक्षों से भक्तों की घोर विपत्ति को दूर करने वाली वाणी से नग्नरूप श्री महादेव जी के प्रति मेरा मन आनन्द को प्राप्त होवे ॥३ ॥

जटाभुजंगपिंगलस्फुरत्फणामणिप्रभा-
कदम्बकुंकुमद्रवप्रलिप्तदिग्वधूमुखे
मदान्ध सिन्धुरस्फुरत्त्वगुत्तरीयमेदुरे
मनोविनोदमद्भुतं बिभर्त्तु भूतभर्तरि ॥४ ॥

भावार्थ—जब नृत्य करने के समय जटाओं में विराजमान सर्पों के फणों व मणियों की चमकती हुई पीली कांति फैलती है और दिशायें पीली हो जाती हैं तब ऐसा प्रतीत होता है मानो शिवजी ने दिग्वनिताओं के मुख पर केसर मल दिया, ऐसे और मद से अन्ध हो गजासुर उसके चर्म को ओढ़कर परमशोभा को प्राप्त होने वाले श्रीमहादेवजी के प्रति मेरा मन परम आनन्द को प्राप्त होवे ॥४ ॥

ललाटचत्वरज्वलद्धनञ्जयस्फुलिङ्गभा-
निपीतपञ्चसायकं नमन्निलिम्पनायकम् ।
सुधामयूखलेखया विराजमानशेखरम्
महाकपालिसम्पदेशिरोजटालमस्तु नः ॥५ ॥

भावार्थ—जिन्होंने अपने मस्तकरूप आंगन में धक्-धक् जलते हुए अग्नि के कण से कामदेव को भस्म कर दिया, जिनको ब्रह्मा आदि देवताओं के अधिपति भी प्रणाम करते हैं, जिनका विशाल भाल चन्द्रमा की किरणों से विराजमान रहता है और जिनकी जटां में कल्याणकारिणी श्रीगंगाजी निवास करती हैं ऐसे कपालधारी तेजोमूर्ति सदाशिव हमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष वाली चारों सम्पत्तियां देवें ॥५ ॥

सहस्त्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखर-
प्रसूनधूलिधोरणीविधूसराङ्घ्रिपीठभूः ।
भुजंगराजमालया निबद्धजाटजूटकः
श्रियै चिराय जायताञ्चकोरबन्धुशेखरः ॥६ ॥

भावार्थ—जिन महादेवजी के चरण धरने से भूमि, इन्द्रादि देवताओं के मुकुटों की पुष्पमालाओं से गिरी हुई पराग से धूसर (मटमैली) रहती है, जिनका जटाजूट सर्पराज वासुकी के लपेटों से बंध रहा है और जिनके विशाल भाल में चन्द्रमा विराजमान हैं, ऐसे सदाशिव हमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी सम्पत्तियां देवें ॥६ ॥

करालभालपट्टिका धगद्धगद्धगज्ज्वल-
द्धनञ्जयाहुतीकृतप्रचण्डपञ्चसायके।
धराधरेन्द्रनन्दिनीकुचाग्रचित्रपत्रक-
प्रकल्पनैकशिल्पिनि त्रिलोचने रतिर्मम ॥७॥

भावार्थ—जिन महादेवजी ने अपने कराल भालरूपी मैदान में धधकती हुई अग्नि में प्रबल कामदेव की आहुति दे दी जो हिमालय कुमारी श्रीपार्वती जी के स्तनों पर चित्रकारी करने में परम प्रवीण हैं ऐसे त्रिलोचन महादेव जी में मेरी प्रीति होवे ॥७॥

नवीनमेघमण्डलीनिरुद्ध दुर्धरस्फुरत्-
कुहूनिशीथिनीतमः प्रबन्धबद्धकन्धरः।
निलिम्पनिर्झरीधरस्तनोतु कृत्तिसुन्दरः
कलानिधानबन्धुरः श्रियै जगद्धुरन्धरः ॥८॥

भावार्थ—अमावस्या की अर्धरात्रि के समय स्वयं ही अन्धकार अधिक होता है और यदि उस समय नवीन मेघमण्डल घिर आवे तो और भी अधिक अन्धकार हो जाता है। ऐसे घोर अन्धकार का भी जिनकी ग्रीवा निरादर करती है अर्थात् उस अन्धकार से भी अधिक काली है, ऐसे गंगाधर, हस्ती के चर्म को ओढ़ने वाले, चन्द्रमौली त्रिलोकी का पालन करने वाले सदाशिव हमारी सम्पदा को अधिक करें ॥८॥

प्रफुल्लनीलपङ्कजप्रपञ्चकालिमप्रभा-
वलम्बिकण्ठकन्दलीरुचिप्रबद्धकन्धरम्।
स्मरच्छिदं पुरच्छिदं भवच्छिदं मखच्छिदं-
गजच्छिदान्धकच्छिदं तमन्तकच्छिदंभजे ॥९॥

भावार्थ—जिनके सुन्दर कण्ठ की परम रमणीय शोभा खिले हुए नील कमल की भांति चारों ओर फैली हुई नील वर्ण की क्रान्ति का निरादर करती है, ऐसे कामदेव को भस्म करने वाले त्रिपुरारि, दक्षयज्ञध्वंसकारी, गजासुर संहारी, अन्धकासुर के नाशक कालान्तक शिवजी को मैं भजता हूं ॥९॥

अखर्वसर्वमङ्गलाकलाकदम्बमञ्जरी
रसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणामधुव्रतम्।
स्मरान्तकं पुरान्तकं भवान्तकं मखान्तकं
गजान्तकान्धकान्तकं तमन्तकान्तकं भजे ॥१०॥

भावार्थ—सब प्रकार के मंगलों को अधिकता से देने वाले, चौंसठ कलारूपी कदम्ब के वृक्ष की मंजरी का रस पीने वाले अर्थात् सर्वकलाप्रवीणकामारि त्रिपुरारि भक्त-भयहारी दक्षयज्ञ विध्वंसकारी गजासुरसंहारी अन्धकासुर के प्राण हरण करने वाले और काल का भय मिटाने वाले महादेवजी का मैं भजन करता हूं ॥१०॥

जयत्वदभ्रविभ्रमस्फुरद्भुजंगमश्वसद्-
विनिर्गमक्रमस्फुरत्करालभालहव्यवाट्।
धिमिद्धिमिद्धिमिदध्वनन्मृदङ्गतुङ्गमंगल-
ध्वनिक्रमप्रवर्त्तितप्रचण्डताण्डवः शिवः ॥११ ॥

भावार्थ—नृत्य करते समय अधिक वेग से घूमने पर शिर में लिपटे हुए सर्पों के श्वास के निकलने से और भी अधिक प्रज्वलित हुई है कराल भाल की अग्नि जिनकी और मृदंग की धिमि-धिमि मङ्गलध्वनि की वृद्धि के अनुसार अपने ताण्डव नृत्य की गति को बढ़ाने वाले शिवजी महाराज की जय होवे ॥११ ॥

दृषद्विचित्रतल्पयोर्भुजङ्गमौक्तिकस्त्रजो-
गरिष्ठरत्नलोष्ठयोः सुहृद्विपक्षपक्षयोः।
तृणारविन्दचक्षुषोः प्रजामहीमहेन्द्रयोः
समप्रवृत्तिकः कदा सदा शिवं भजाम्यहम् ॥१२ ॥

भावार्थ—वह कौन-सा शुभ समय होगा कि जिस समय पर मैं पत्थर और पुष्पों की शय्या में, सर्प और मोतियों की माला में, बहुमूल्य रत्न और मृत्तिका के ढेलों में, शत्रु और मित्र में, तृण और नीलकमल के समान नेत्र वाली स्त्री में तथा प्रजा व चक्रवर्ती राजा में एक दृष्टि करके सदा शिव का भजन करूंगा ॥१२ ॥

कदानिलिम्पनिर्झरीनिकुञ्जकोटरे वसन्
विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरस्थमञ्जलिं वहन्।
विमुक्तलोललोचनो ललामभाललग्नकः
शिवेति मन्त्रमुच्चरन्कदा सुखी भवाम्यहम् ॥१३ ॥

भावार्थ—वह कौन-सा कल्याणकारक समय होगा कि जिस समय पर मैं सम्पूर्ण दुर्वासनाओं का त्याग कर गङ्गातट की कुञ्ज के कोटर में निवास करके शिव पर अंजलि बांधता हुआ चञ्चल नेत्र वाली स्त्रियों में रत्नरूप जगज्जननी श्रीपार्वती जी को भी प्रारब्धवश प्राप्त हुए, औरों को परम दुर्लभ शिव-शिव मन्त्र का उच्चारण करता हुआ परम आनन्द को प्राप्त होऊंगा ॥१३ ॥

निलिम्पनाथनागरीकदम्बमौलिमल्लिका
निगुम्फनिर्झरक्षरन्मधूष्णिकामनोहरः।
तनोतु नो मनो मुदं विनोदिनीमहर्निशं
परःश्रियः परम्पदन्तदङ्गजत्विषाञ्चयः ॥१४ ॥

भावार्थ—इन्द्र नगरी का अप्सराओं के शिर से गिरी हुई नीवारी के पुष्पों की मालाओं के पराग की उष्णता से उत्पन्न हुए पसीने से शोभायमान, परम शोभा के सर्वोपरि स्थान और रात्रि-दिन

आनन्द देने वाला जो सदा शिव के शरीर की कांति का समूह है वह हमारे मन के आनन्द को बढ़ावे ॥१४॥

प्रचण्डबाडवानल प्रभाशुभप्रचारिणी
महाष्टसिद्धिकामिनीजनावहूतजल्पना।
विमुक्तवामलोचनाविवाहकालिकध्वनिः
शिवेतिमंत्र भूषणा जगज्जयाय जायताम् ॥१५॥

भावार्थ—भयदायक बड़वानल के अग्नि की प्रभा के समान अमंगलों का नाश करने वाले अष्ट सिद्धियों के सहित स्त्रियां जो गीत गाती हैं और शिव-शिव यह मन्त्र ही है भूषण जिनका ऐसी स्वयं मुक्त भाव से जगत् की माता पार्वती जी के विवाह के समय की ध्वनि संसार की जयकारिणी होवे ॥१५॥

पूजावसानसमये दशवक्त्र-गीतं
यः शम्भु पूजन परं पठति प्रदोषे।
तस्य स्थिरां रथ गजेन्द्र तुरङ्गयुक्तां
लक्ष्मीं सदैव सुमुखीं प्रददाति शम्भुः ॥१६॥

सायंकाल पूजा समाप्त होने पर रावण के गाये हुए इस शंभुपूजन सम्बन्धी स्तोत्र का जो पाठ करता है, शंकर जी उस मनुष्य को रथ, हाथी, घोड़ों से युक्त सदा स्थिर रहने वाली अनुकूल लक्ष्मी को देते हैं ॥१६॥

भाषाटीकासहितं शिवताण्डवस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

१३. श्रीमद्गोस्वामि तुलसीदासकृत रुद्राष्टकम्।

नमामीशमीशाननिर्वाणरूपं
विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपम्।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहम्,
चिदाकाशमाकाश वासं भजेऽहम् ॥१॥

हे ईशान ! मैं मुक्तिस्वरूप, समर्थ, सर्वव्यापक, ब्रह्मदेव स्वरूप, जन्मरहित, निर्गुण, निर्विकल्प, निरीह, अनन्त ज्ञानमय और आकाश के समान सर्वत्र व्याप्त प्रभु को प्रणाम करता हूं।

निराकारमोङ्कारमूलं तुरीयम्
गिराज्ञानगोतीतमीशं गिरीशम्।
करालं महाकाल कालं कृपालम्,
गुणागार-संसारपारं नतोऽहम् ॥२॥

जो निराकार हैं, ओंकार रूप आदि कारण हैं, तुरीय हैं, वाणी और बुद्धि के पथ से परे हैं। कैलास नाथ हैं, पापियों के लिए कराल और भक्तों के हेतु दयालु हैं, महाकाल के भी काल हैं, गुणों के आगार और संसार से तारने वाले हैं, उन भगवान् को मैं नमस्कार करता हूं।

तुषाराद्रिसंकाशगौरं गभीरम्,
मनोभूतकोटिप्रभा श्रीशरीरम्।
स्फुरन्मौलिकल्लोलिनीचारुगङ्गा,
लसद्भालबालेन्दुकण्ठे भुजंगा ॥३॥

जो हिमालय के समान श्वेत वर्ण, गम्भीर और करोड़ों कामदेव के समान कान्तिमान शरीर वाले हैं, जिनके मस्तक पर मनोहर गंगा जी लहरा रही हैं, भालदेश में वाल चन्द्रमा सुशोभित होते हैं और गले में सर्पों की माला शोभा देती है।

चलत्कुण्डलं भ्रूसुनेत्रं विशालम्
प्रसन्नाननं नीलकण्ठं दयालुम्।
मृगाधीशचर्माम्बरं मुण्डमालम्,
प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि ॥४॥

जिनके कानों में कुण्डल हिल रहे हैं, जिनके नेत्र सुन्दर विशाल हैं, जिनका मुख प्रसन्न और कण्ठनील है, जो बड़े ही दयालु हैं, जो नाग की खाल का वस्त्र और मुण्डों की माला पहनते हैं, उन सर्वाधीश्वर प्रियतम शिव का मैं भजन करता हूं।

प्रचण्डं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशम्,
अखण्डं अजं भानु कोटि प्रकाशम्।
त्रयशूलनिर्मूलनं शूलपाणिम्,
भजेऽहं भवानी-पतिं भावगम्यम् ॥५॥

जो प्रचण्ड, सर्वश्रेष्ठ, प्रगल्भ, परमेश्वर, पूर्ण, कोटि सूर्य के समान प्रकाशमान, त्रिभुवन के शूलनाशन और हाथ में त्रिशूल धारण करने वाले हैं, उन भावगम्य भवानीपति का मैं भजन करता हूं।

कलातीत-कल्याण कल्पान्तकारी।
सदा सज्जनानन्ददाता पुरारिः॥
चिदानन्द सन्दोह मोहापहारी।
प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारिः ॥६॥

हे प्रभो ! आप कलारहित, कल्याणकारी और कल्प का अन्त करने वाले हैं। आप सर्वदा सत्पुरुषों को आनन्द देते हैं, आपने त्रिपुरासुर का नाश कर दिया था, आप मोहनाशक और ज्ञानानन्द घन परमेश्वर हैं, कामदेव के आप शत्रु हैं, आप मुझ पर प्रसन्न हों, प्रसन्न हों॥

न यावत् उमानाथ-पादारविन्दम्
भजन्तीह लोके परे वा नराणाम्।
न तावत्सुखं शान्ति-सन्तापनाशम्
प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासम् ॥७॥

मनुष्य जब तक उमाकन्त महादेव जी के चरणारविन्दों का भजन नहीं करते, उन्हें इस लोक या परलोक में कभी भी सुख और शान्ति की प्राप्ति नहीं होती और न उनका सन्ताप ही दूर होता है। हे समस्त भूतों के निवास स्थान भगवान् शिव ! आप मुझ पर प्रसन्न हों।

न जानामि योगं जपं नैव पूजाम्
नतोऽहं सदा सर्वदा शम्भु तुभ्यम्।
जराजन्म-दुःखौघतातप्यमानम्
प्रभो पाहि आपन्नमामीश शम्भो ॥८॥

हे प्रभो ! हे शम्भो, हे ईश, मैं योग, जप और पूजा कुछ भी नहीं जानता। हे देव, मैं सदा आप को नमस्कार करता हूं। जरा, जन्म और दुःखसमूह से सन्तप्त हुए मुझ दीन की आप शाप से रक्षा करें॥

श्लोक—रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।
ये पठन्ति नराः भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति॥

जो मनुष्य भगवान् शंकर की प्रसन्नता के लिए ब्राह्मण द्वारा कहे हुए इस रुद्राष्टक का भक्ति पूर्वक पाठ करते हैं उन पर शंकर जी प्रसन्न होते हैं।

॥ इति श्रीतुलसीदासकृतं रुद्राष्टकं सम्पूर्णम्।

१४. शिवपञ्चाक्षरस्तोत्रम्

श्री गणेशाय नमः। नागेन्द्र हाराय त्रिलोचनाय भस्माङ्गरागाय महेश्वराय। नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय तस्मै नकाराय नमः शिवाय ॥१॥ मन्दाकिनीसलिलचन्दनचर्चिताय, नन्दीश्वरप्रमथनाथमहेश्वराय। मन्दारपुष्प-बहुपुष्पसुपूजिताय, तस्मै मकाराय नमः शिवाय ॥२॥ शिवाय गौरीवदनाब्जवृन्द सूर्याय दक्षाध्वरनाशकाय। श्रीनीलकण्ठाय वृषध्वजाय तस्मै शिकाराय नमः शिवाय ॥३॥ वसिष्ठकुम्भोद्भवगौतमार्य मुनीन्द्र देवार्चितशेखराय, चन्द्रार्कवैश्वानरलोचनाय तस्मै वकाराय नमः शिवाय ॥४॥ यक्षस्वरूपाय जटाधराय पिनाकहस्ताय सनातनाय। दिव्याय देवाय

दिगम्बराय, तस्मै यकराय नमः शिवाय ॥५ ॥ पञ्चाक्षरमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ । शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥६ ॥

जिसके कण्ठ में सांपों का हार है, जिनके तीन नेत्र, भस्म ही जिनका अंगराग है, दिशाएं ही जिनका वस्त्र है (अर्थात् जो नग्न हैं) उन शुद्ध अविनाशी महेश्वर 'न' कारस्वरूप शिव को नमस्कार है ॥१ ॥ गंगा जल और चन्दन से जिनकी अर्चा हुई है, मन्दारपुष्प तथा दूसरे पुष्पों से जिनकी सुन्दर पूजा हुई है, उन नन्दी के अधिपति प्रथम गणों के स्वामी महेश्वर 'म' कार स्वरूप शिव को नमस्कार है ॥२ ॥ जो कल्याणस्वरूप हैं, पार्वती जी के मुख कमल को विकसित (प्रसन्न) करने के लिये जो सूर्य स्वरूप हैं, जो दक्ष के यज्ञ का नाश करने वाले हैं, जिनकी ध्वजा में बैल का चिह्न है, उन शोभाशाली नीलकण्ठ 'शि' कार स्वरूप शिव को नमस्कार है ॥३ ॥ वसिष्ठ, अगस्त्य और गौतम आदि श्रेष्ठ मुनियों ने तथा इन्द्र आदि देवताओं ने जिनके मस्तक की पूजा की है, चन्द्रमा, सूर्य और अग्नि जिनके नेत्र हैं उन 'व' कार स्वरूप शिव को नमस्कार है ॥४ ॥ जिन्होंने यक्ष रूप धारण किया है, जो जटाधारी हैं, जिनके हाथ में पिनाक नाम का धनुष है, जो दिव्य सनातन पुरुष हैं, उन दिगम्बर देव 'य' कार स्वरूप शिव को नमस्कार है ॥५ ॥ जो शिव के समीप इस पवित्र पंचाक्षर का पाठ करता है, वह शिव लोक को प्राप्त करता है और वहां शिव जी के साथ आनन्दित होता है ।

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं शिवपञ्चाक्षरस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१५. श्री शिव-मानस-पूजा-स्तोत्रम्

रत्नैः कल्पितमासनं हिमजलैः स्नानं च दिव्याम्बरम् । नाना रत्नविभूषितं मृगमदामोदाङ्कितं चन्दनम् । जातीचम्पकविल्वपत्रसहितं पुष्पं च धूपं तथा, दीपं देव दयानिधे पशुपते हृत्कल्पितं गृह्यताम् ॥१ ॥ सौवर्णे नवरत्नखण्डरचिते पात्रे घृतं पायसम् । भक्ष्यं पञ्चविधं पयोदधियुतं रम्भाफलं पानकम् । शाकानामयुतं जलं रुचिकरं कर्पूरखण्डोज्ज्वलम्, ताम्बूलं मनसा मया विरचितं भक्त्या प्रभो स्वीकुरु ॥२ ॥ छत्रं चामरयोर्युगं व्यजनकं चादर्शकं निर्मलं वीणाभेरिमृदङ्गकाहलकलागीतं च नृत्यं तथा । साष्टाङ्गप्रणतिः स्तुतिर्बहुविधा ह्येतत् समस्तं मया, सङ्कल्पेन समर्पितं तव विभो पूजां गृहाण प्रभो ॥३ ॥ आत्मा त्वं गिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं, पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः, संचारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरः, यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम् ॥४ ॥ करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा, श्रवणनयनजं वा मानसं वापराधम् । विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो ॥५ ॥

हे दयानिधे, हे पशुपते, हे देव, यह रत्ननिर्मित सिंहासन, शीतल जल से स्नान, नाना रत्नावलिविभूषित दिव्य वस्त्र, कस्तूरिका गन्ध समन्वित चन्दन, जूही, चम्पा और विल्वपत्र से रचित

पुष्पांजलि तथा धूप और दीप यह सब मानसिक (पूजोपहार) ग्रहण कीजिए ॥१ ॥ मैंने नवीन रत्नखण्डों से खचित सुवर्णपात्र में घृतयुक्त खीर, दूध और दधि सहित पांच प्रकार के व्यंजन, कदली फल, शर्बत, अनेकों शाक, कर्पूर से सुवासित और स्वच्छ किया हुआ मीठा जल और ताम्बूल ये सब मन के द्वारा ही बनाकर प्रस्तुत किये हैं। प्रभो, कृपया इन्हें स्वीकार करें ॥२ ॥ छत्र, दो चंवर, पंखा, निर्मलदर्पण, वीणा, भेरी, मृदंग, दुन्दुभि के वाद्य, गान और नृत्य, साष्टांग प्रणाम, नानाविध स्तुति ये सब मैं संकल्प से ही आपको समर्पण करता हूं। हे प्रभो, मेरी यह पूजा ग्रहण कीजिए ॥३ ॥ हे शंभो, मेरा आत्मा तुम हो, बुद्धि पार्वती जी हैं, प्राण आप के गण हैं, शरीर आप का मन्दिर है, सम्पूर्ण विषयभोग की रचना आपकी पूजा है। निद्रासमाधि है, मेरा चलना-फिरना आपकी परिक्रमा है तथा सम्पूर्ण शब्द आपके स्तोत्र हैं, इस प्रकार मैं जो-जो कर्म करता हूं, वह सब आपकी आराधना ही है ॥४ ॥ प्रभो, मैंने हाथ, पैर, वाणी, शरीर, कर्म, कर्ण, नेत्र अथवा मन से जो भी अपराध किया हो वे विहित हो अथवा अविहित, उन सबको आप क्षमा कीजिए। हे करुणासागर श्रीमहादेव शंकर, आपकी जय हो ॥

॥इति श्रीशिवमानस-पूजा स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

१६. वेदसारशिवस्तवः

पशूनां पतिं पापनाशं परेशं
गजेन्द्रस्य कृत्तिं वसानं वरेण्यम्।
जटाजूटमध्ये स्फुरद् गांगवारिं
महादेवमेकं स्मरारिं स्मरामि ॥१ ॥

जो सम्पूर्ण प्राणियों के रक्षक हैं, पाप का ध्वंस करने वाले हैं, परमेश्वर हैं, गजराजका चर्म पहने हुए हैं, तथा श्रेष्ठ हैं, और जिनके जटाजूट में श्रीगंगा जी खेल रही हैं, उन एकमात्र कामारि श्री महादेवजी का मैं स्मरण करता हूं ॥१ ॥

महेशं सुरेशं सुरारार्तिनाशं
विभुं विश्वनाथं विभूत्यंगभूषम्।
विरूपाक्षमिन्द्वर्क वह्निनत्रिनेत्रम्
सदानन्दमीड़े प्रभुं पञ्चवक्त्रम् ॥२ ॥

चन्द्र, सूर्य और अग्नि तीनों जिनके नेत्र हैं, उन विरूपनयन महेश्वर देवेश्वर, देवदुःखदलन, विभु, विश्वनाथ, विभूतिभूषण, नित्यानन्दस्वरूप पञ्चमुख भगवान् महादेव की मैं स्तुति करता हूं ॥२ ॥

गिरीशं गणेशं गले नील वर्णं
गवेन्द्राधिरूढ़ं गुणातीतरूपम्।
भवं भास्वरं भस्मना भूषितांगं
भवानी कलत्रं भजे पञ्चवक्त्रम् ॥३ ॥

जो कैलास नाथ हैं, गणनाथ हैं, नीलकण्ठ हैं, बैल पर चढ़े हुए हैं, अगणित रूप वाले हैं, संसार के आदिकारण हैं, प्रकाशस्वरूप हैं, शरीर में भस्म लगाये हुए हैं, और पार्वती जी जिनकी अर्द्धाङ्गिनी हैं, उन पञ्चमुख महादेव को मैं भजता हूं ॥३ ॥

शिवाकान्त शम्भो शशांकार्धमौले
महेशान शूलिन् जटाजूटधारिन् ।
त्वमेको जगद्व्यापको विश्वरूप
प्रसीद प्रसीद प्रभो पूर्णरूप ॥४ ॥

हे पार्वती वल्लभमहादेव, हे चन्द्र शेखर, हे महेश्वर, हे त्रिशूलिन, हे जटाजूटधारिन्, हे विश्वरूप, एकमात्र आप ही जगत में व्यापक हैं। हे पूर्ण रूप प्रभो ! आप प्रसन्न होइये, प्रसन्न होइये ॥

परमात्मानमेकं जगद्बीजमाद्यं
निरीहं निराकारमोङ्कारवेद्यम् ।
यतो जायते पाल्यते येन विश्वं
तमीशं भजे लीयते यत्र विश्वम् ॥५ ॥

जो परमात्मा हैं, एक हैं, जगत के आदिकरण हैं, इच्छा रहित हैं, निराकार हैं और प्रणव द्वारा जानने योग्य हैं तथा जिन से सम्पूर्ण जगत की उत्पत्ति एवं पालन होता है, और फिर जिनमें लय हो जाता है, उन प्रभु को मैं भजता हूं ॥५ ॥

न भूमिर्न चापो न बह्निर्न वायु-
र्न चाकाशमास्ते न तन्द्रा न निद्रा ।
न ग्रीष्मो न शीतं न देशो न वेषो
न यस्यास्ति मूर्तिस्त्रिमूर्तिं तमीडे ॥६ ॥

जो न पृथ्वी हैं न जल हैं, न अग्नि हैं और न आकाश हैं, न तन्द्रा हैं, न ग्रीष्म हैं और न शीत हैं, तथा जिनका न कोई देश है, न वेष है, उन मूर्तिहीन त्रिमूर्ति की मैं स्तुति करता हूं ॥६ ॥

अजं शाश्वतं कारणं कारणानां
शिवं केवलं भासकं भासकानाम् ।
तुरीयं तमः पारमाद्यन्त हीनं ।
प्रपद्ये परं पावनं द्वैतहीनम् ॥७ ॥

जो अजन्मा हैं, नित्य हैं, कारण के भी कारण हैं, कल्याण स्वरूप हैं, एक हैं, प्रकाशकों के भी प्रकाशक हैं, अवस्थात्रय हैं, अवस्थात्रय से विलक्षण हैं, अज्ञान से परे हैं, अनादि और अनन्त हैं, उन परमपावन अद्वैत स्वरूप को मैं प्रणाम करता हूं ॥७ ॥

नमस्ते नमस्ते विभो विश्वमूर्ते
नमस्ते नमस्ते चिन्दानन्दमूर्ते।
नमस्ते नमस्ते तपो योग गम्य
नमस्ते नमस्ते श्रुति ज्ञान-गम्य ॥८॥

हे विश्वमूर्ते, हे विभो, आप को नमस्कार है, नमस्कार है। हे चिदानन्द मूर्ते आप को नमस्कार है, नमस्कार है। हे तप तथा योग से प्राप्तव्य प्रभो आपको नमस्कार है, नमस्कार है। वेद वेद्य भगवन् आप को नमस्कार है, नमस्कार है ॥८॥

प्रभो शूलपाणे विभो विश्वनाथ
महादेव शम्भो महेश त्रिनेत्र।
शिवाकान्त शान्त स्मरारे पुरारे
त्वदन्यो वरेण्यो न मान्यो न गण्यः ॥९॥

हे प्रभो, हे त्रिशूलपाणे, हे विश्वनाथ, हे महादेव, हे शम्भो हे महेश्वर, हे त्रिनेत्र, हे पार्वती प्राण वल्लभ, हे शान्त, हे कामारे, हे त्रिपुरारे, तुम्हारे अतिरिक्त न कोई श्रेष्ठ है और न गणनीय है।

शम्भो महेश करुणामय शूलपाणे
गौरीपते पशुपत पशुपाशनाशिन्।
काशीपते करुणया जगदेतदेक
स्त्वं हंसि पासि विदधासि महेश्वरोऽसि ॥१०॥

हे शम्भो ! हे महेश्वर ! हे करुणामय ! हे त्रिशूलिन् ! हे गौरीपते ! हे पशुपते ! हे पशुपाशबन्धमोचन ! हे काशीश्वर ! एक तुम्हीं करुणावश इस जगत की उत्पत्ति, पालन और संहार करते हो, प्रभो, तुम ही इनके एकमात्र स्वामी हो।

त्त्वत्तो जगद्भवति देव भवस्मरारे
त्वय्येव तिष्ठति जगन्मृडविश्वनाथ।
त्वय्येव गच्छति लयं जगदेतदीश
लिंगात्मकं हर चराचर विश्वरूपिन् ॥११॥

हे देव, हे शंकर, हे कन्दर्पदलन, हे शिव, हे विश्वनाथ, हे ईश्वर, हे हर, हे चराचर जगद् रूप प्रभो, यह लिङ्गस्वरूप समस्त तुम्हीं से उत्पन्न होता है, तुम्हीं में स्थित रहता है और तुम्हीं में लय हो जाता है ॥११॥

१७. श्रीआदित्यहृदयस्तोत्रम्

ततो युद्धपरिश्रान्तं समरे चिन्तया स्थितम्।
रावणं चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम् ॥१॥

दैवतैश्च समागम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम्।
उपगम्याब्रवीद्राममगस्त्यो भगवांस्तदा ॥२॥
राम राम महाबाहो शृणु गुह्यं सनातनम्।
येन सर्वानरीन् वत्स समरे विजयिष्यसे ॥३॥

इस 'आदित्यहृदय' नामक स्तोत्र का विनियोग एवं न्यास विधि इस प्रकार है—

विनियोग

ॐ अस्य आदित्यहृदयस्तोत्रस्यागस्त्यऋषिरनुष्टुप्छन्दः, आदित्यहृदय-भूतो भगवान् ब्रह्मा देवता निरस्ताशेषविघ्नतया ब्रह्मविद्यासिद्धये सर्वत्र जयसिद्धये च विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास

ॐ अगस्त्यऋषये नमः, शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नमः, मुखे। आदित्यहृदयभूतब्रह्मदेवतायै नमः, हृदि। ॐ बीजाय नमः, गुह्ये। रश्मिमते शक्तये नमः, पादयोः। ॐ तत्सवितुरित्यादिगायत्रीकीलकाय नमः, नाभौ।

करन्यास

इस स्तोत्र के अङ्गन्यास और करन्यास तीन प्रकार से किये जाते हैं। केवल प्रणव से, गायत्री मन्त्र से अथवा '**रश्मिमते नमः**' इत्यादि छः नाम-मन्त्रों से। यहां नाम-मन्त्रों से किये जाने वाले न्यास का प्रकार बताया जाता है—

ॐ रश्मिमते अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ समुद्यते तर्जनीभ्यां नमः। ॐ देवासुरनमस्कृताय मध्यमाभ्यां नमः। ॐ विवस्वते अनामिकाभ्यां नमः। ॐ भास्कराय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ भुवनेश्वराय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादि अङ्गन्यास

ॐ रश्मिमते हृदयाय नमः। ॐ समुद्यते शिरसे स्वाहा। ॐ देवासुरनमस्कृताय शिखायै वषट्। ॐ विवस्वते कवचाय हुम्। ॐ भास्कराय नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ भुवनेश्वराय अस्त्राय फट्। इस प्रकार न्यास करके निम्नाङ्कित मन्त्र से भगवान् सूर्य का ध्यान एवं नमस्कार करना चाहिये—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

तत्पश्चात् 'आदित्यहृदय' स्तोत्र का पाठ करना चाहिये।

आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशत्रुविनाशनम्।
जयावहं जपं नित्यमक्षयं परमं शिवम्॥४॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वपापप्रणाशनम्।
चिन्ताशोकप्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम्॥५॥
रश्मिमन्तं समुद्यन्तं देवासुरनमस्कृतम्।
पूजयस्व विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम्॥६॥
सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वी रश्मिभावनः।
एष देवासुरगणांल्लोकान् पाति गभस्तिभिः॥७॥
एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कन्दः प्रजापतिः।
महेन्द्रो धनदः कालो यमः सोमो ह्यपाम्पतिः॥८॥
पितरो वसवः साध्या अश्विनौ मरुतो मनुः।
वायुर्वह्निः प्रजाः प्राणः ऋतुकर्ता प्रभाकरः॥९॥
आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान्।
सुवर्णसदृशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकरः॥१०॥
हरिदश्वः सहस्रार्चिः सप्तसप्तिर्मरीचिमान्।
तिमिरोन्मथनः शम्भु त्वष्टा मार्तण्डकोंऽशुमान्॥११॥
हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनोऽहस्करो रविः।
अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः शङ्खः शिशिरनाशनः॥१२॥
व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुः सामपारगः।
घनवृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथीप्लवङ्गमः॥१३॥
आतपी मण्डली मृत्युः पिङ्गलः सर्वतापनः।
कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्वभवोद्भवः॥१४॥
नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्वभावनः।
तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन् नमोऽस्तुते॥१५॥

नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नमः।
ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः ॥१६॥
जयाय जयभद्राय हर्यश्वाय नमो नमः।
नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः ॥१७॥
नम उग्राय वीराय सारङ्गाय नमो नमः।
नमः पद्मप्रबोधाय प्रचण्डाय नमोऽस्तुते ॥१८॥
ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूरायादित्यवर्चसे।
भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः ॥१९॥
तमोघ्नाय हिमघ्नाय शत्रुघ्नायामितात्मने।
कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः ॥२०॥
तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे।
नमस्तमोऽभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे ॥२१॥
नाशयत्येष वै भूतं तमेव सृजति प्रभुः।
पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभिः ॥२२॥
एष सुप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठितः।
एष चैवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम् ॥२३॥
देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतूनां फलमेव च।
यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परमप्रभुः ॥२४॥
एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कान्तारेषु भयेषु च।
कीर्तयन् पुरुषः कश्चिन्नावसीदति राघव ॥२५॥
पूजयस्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम्।
एत् त्रिगुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यसि ॥२६॥
अस्मिन् क्षणे महाबाहो रावणं त्वं जहिष्यसि।
एवमुक्त्वा ततोऽगस्त्यो जगाम स यथागतम् ॥२७॥

एत् श्रुत्वा महातेजा नष्टशोकोऽभवत् तदा।
धारयामास सुप्रीतो राघवः प्रयतात्मवान् ॥२८॥
आदित्यं प्रेक्ष्य जप्त्वेदं परं हर्षमवाप्तवान्।
त्रिराचम्य शुचिर्भूत्वा धनुरादाय वीर्यवान् ॥२९॥
रावणं प्रेक्ष्य हृष्टात्मा जयार्थं समुपागमत्।
सर्वयत्नेन महता वृतस्तस्य वधेऽभवत् ॥३०॥
अथ रविरवदन्निरीक्ष्य रामं मुदितमनाः परमं प्रहृष्यमाणः।
निशिचरपतिसंक्षयं विदित्वा सुरगणमध्यगतो वचस्त्वरेति ॥३१॥
॥ श्रीवाल्मीकीये रामायणे युद्धकाण्डे, अगस्त्यप्रोक्तमादित्यहृदयस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

१८. सूर्याष्टकम्

नमः सवित्रे जगदेक चक्षुषे
जगत्प्रसूतिस्थितिनाश हेतवे।
त्रयी मयाय त्रिगुणात्मधारिणे
विरञ्चि नारायण शंकरात्मने ॥१॥
यस्योदयेनेह जगत्प्रबुध्यते
प्रवर्तते चाखिलकर्मसिद्धये।
ब्रह्मेन्द्र नारायण रुद्रवन्दितः
सः न सदा यच्छतु मंगलं रविः ॥२॥
नमोऽस्तु सूर्याय सहस्ररश्मये,
सहस्रशाखान्वित संभवात्मने।
सहस्रयोगोद्भवभाव भागिने,
सहस्रसंख्यायुगधारिणे नमः ॥३॥
यन्मण्डलं दीप्तिकरं विशालं
रत्नप्रभं तीव्रमनादिरूपम्।
दारिद्र्यदुःखक्षय कारणं च,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥४॥

यन्मण्डलं देवगणैः सुपूजितं
विप्रैः स्तुतं भावन मुक्ति कोविदम्।
तं देवदेवं प्रणमामि सूर्यं,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥५॥
यन्मण्डलं ज्ञानघनं त्वगम्यं
त्रैलोक्य पूज्यं त्रिगुणात्मरूपम्।
समस्त तेजोमय दिव्यरूपं,
पुनातु मां तत्सवितु-र्वरेण्यम् ॥६॥
यन्मण्डलं गूढमतिप्रवोधं
धर्मस्य वृद्धिं कुरुते जनानाम्।
तत्सर्वपाप क्षयकारणं च,
पुनातु मां तत्सवितु र्वरेण्यम् ॥७॥
यन्मण्डलं व्याधिविनाशदक्षं
यदृग्यजुः सामसु संप्रगीतम्।
प्रकाशितं येन च भूर्भुवः स्वः
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥८॥
यन्मण्डलं वेदविदो विदन्ति
गायन्ति यच्चारण सिद्धसंघाः,
यद्योगिनो योगजुषां च संघाः,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥९॥
यन्मण्डलं सर्वजनेषु पूजितं
ज्योतिश्च कुर्यादिहमर्त्यलोके।
यत्काल कालादि मनादि रूपं
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥१०॥

यन्मण्डलं विष्णु चतुर्मुखाख्यं
यदक्षरं पापहरं जनानाम्।
यत्कालकल्पक्षयकारणं च,
पुनातु मां तत्सवितु र्वरेण्यम्॥११॥
यन्मण्डलं विश्वसृजां प्रसिद्ध-
मुत्पत्तिरक्षाप्रलय प्रगल्भम्।
यस्मिञ्जगत् संहरतेऽखिलं च
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥१२॥
यन्मण्डलं सर्वगतस्य विष्णो-
रात्मा परंधाम विशुद्धतत्त्वम्।
सूक्ष्मान्तरैर्योगपथानुगम्यं,
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥१३॥
यन्मण्डलं ब्रह्मविदो वदन्ति,
गायन्ति यच्चारणसिद्धसंघाः।
यन्मण्डलं वेदविदः स्मरन्ति
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥१४॥
यन्मण्डलं देवविदोपगीतं
यद्योगिनां योगपथानुगम्यम्।
तत्सर्ववेदं प्रणमामि सूर्यं
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥१५॥
मङ्गलाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेत्सततं नरः।
सर्वपापविशुद्धात्मा सूर्य लोके महीयते॥
ध्येयः सदासवितृ मण्डलमध्यवर्ती
नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः।

केयूरवान्मकरकुण्डलवान् किरीटी,
हारीहिरण्मयवपुर्धृत शंखचक्रः ॥
सशंखचक्रं रवि मण्डले स्थितं
कुशेशयाक्रान्तमनन्तमच्युतम् ।
भजामि बुद्धया तपनीय मूर्तिं
सुरोत्तमं चित्रविभूषणोज्ज्वलम् ॥

१९. सप्तश्लोकी दुर्गा

शिव उवाच

देवि त्वं भक्त सुलभे सर्व कार्यविधायिनि ।
कलौ हि कार्यसिद्धयर्थमुपायं ब्रूहि यत्नतः ॥

देव्युवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कलौ सर्वेष्ट साधनम् ।
मया तवैव स्नेहेनाप्यम्वा स्तुतिः प्रकाश्यते ॥

ॐ अस्य श्री दुर्गा सप्तश्लोकी स्तोत्रमन्त्रस्य
नारायण ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्रीमहाकाली
महालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः श्री दुर्गाप्रीत्यर्थं
सप्तश्लोकी दुर्गापाठे विनियोगः

ॐ ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ॥१ ॥
दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः,
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
दारिद्र्य दुःख भय हारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥२ ॥
सर्वमंगलमांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्वके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ॥३ ॥

शरणागत दीनार्त परित्राणपरायणे।
सर्वस्यार्ति हरे देवि नारायणि नमोऽस्तुते ॥४॥
सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तुते ॥५॥
रोगानशेषानपहंसि तुष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान्
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥६॥
सर्वाबाधा प्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद् वैरिविनाशनम् ॥७॥

२०. अन्नपूर्णास्तोत्रम्

ध्यानम्। तप्तस्वर्णनिभा शशाङ्कमुकुटा रत्नप्रभाभासुरा, नानावस्त्रविराजिता त्रिनयना भूमीरमाभ्यां युता। दर्वी हाटकभाजनञ्च दधती रम्योच्चपीनस्तनी। नित्यं तां शिवमाकलय्य मुदिता ध्येयान्नपूर्णेश्वरी॥

स्तोत्रम्

ॐ नमः कल्याणदे देवि नमः शंकरवल्लभे। नमो मुक्ति प्रदे देवि ह्यन्नपूर्णे नमोऽस्तुते ॥१॥ नमो मायागृहीताङ्गि नमः शंकरवल्लभे। माहेश्वरि नमस्तुभ्यमन्न पूर्णे नमोऽस्तुते ॥२॥ अन्नपूर्णे हव्यवाहपत्नीरूपे हरप्रिये। कलाकाष्ठास्वरूपे च अन्नपूर्णे नमोऽस्तुते ॥३॥ उद्यद्भानुसहस्राभे नयनत्रयभूषिते चन्द्रचूड़े महादेवि ह्यन्नपूर्णे नमोऽस्तुते ॥४॥ विचित्रवसने देवि त्वन्नदानरतेऽनघे। शिवनृत्यकृतामोदे ह्यन्न पूर्णे नमोऽस्तुते ॥५॥ षट्कोणपदमध्यस्थे षडंग युवतिप्रिये। ब्रह्माण्यादिस्वरूपे च ह्यन्नपूर्णे नमोऽस्तुते ॥६॥ देवि चन्द्रकला पीठे सर्वसाम्राज्यदायिनी। सर्वानन्दकरे देवि ह्यन्नपूर्णे नमोऽस्तुते ॥७॥ साधकाभीष्टदे देवि भवदुःख-विनाशिनी। कुचभारनते देवि ह्यन्नपूर्णे नमोऽस्तुते ॥८॥ इन्द्राद्यार्चितपादाब्जे रुद्रादिरूपधारिणी। सर्वसम्पत्प्रदे देवि ह्यन्नपूर्णे नमोऽस्तुते ॥९॥ पूजाकाले

पठेद्यस्तु स्तोत्रमेतत् समाहितः। तस्य गेहे स्थिरा लक्ष्मीर्जायते नात्र संशयः ॥१० ॥ प्रातःकाले पठेद्यस्तु मन्त्रजापपुरःसरम् ॥ तस्यैवान्नसमृद्धिः स्यात् वर्द्धमाना दिने दिने ॥११ ॥

श्रीगणेश नमः

२१. अथ सान्वयं हिन्दीभाषासिहतं माध्यन्दिनीयपुरुषसूक्तम।

विनियोगः

सहस्रशीर्षेत्यादि षोडशर्चस्यानुबाकस्य नारायण ऋषिर्जगद्बीजपुरुषो देवता, आद्यानाम्पञ्चदशानामनुष्टुप्छन्दोऽन्त्यायास्त्रिष्टुप्छन्दः पुरुषस्तुतौ विनियोगः ॥१ ॥

ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमिꣳ सर्वतः स्पृत्त्वात्त्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥१ ॥

(अन्वयः) सहस्रशीर्षा सहस्राक्षः सहस्रपात (चेतनो यः) पुरुष (विराजाख्योऽस्ति) ॥ सः भूमिं सर्वतः स्पृत्वा दशाङ्गुलम् अति अतिष्ठत् ॥१ ॥

(मन्त्रार्थः) असंख्य शिर, नेत्र, पैर आदि अवयवों से युक्त विराट पुरुष विराजमान हैं। अर्थात् समस्त प्राणियों के जो शिर, नेत्र, पैर आदि शरीर के अवयव (पञ्च ज्ञानेन्द्रिय तथा पञ्च कर्मेन्द्रिय) हैं, वे उस विराट पुरुष के ही समझने चाहिएं। वह पुरुष इस पृथिवी को अर्थात् पृथिव्यादि पञ्चभूतों को तथा ब्रह्माण्ड से बहिर्भूत प्रदेश को भी सर्वप्रकारेण व्याप्तकर दश २ अङ्गुल प्रदेश को छोड़कर प्रत्येक स्थावर जङ्गम के अन्दर विराजमान है। जैसे मनुष्य के शरीर में दश दश अङ्गुल की दूरी पर मस्तक से लेकर पैर के अंगूठे तक ४८ मर्मस्थान स्थित हैं। इन मर्मस्थानों में (आत्मा) पुरुष की विशेष रूप से स्थिति हैं, अत एव मर्मस्थान में किसी प्रकार के आघात होने पर आत्मा शरीर को छोड़ देती है। अथवा वह पुरुष दशाङ्गुल अर्थात् दश इंद्रियों को या नासिकाग्र को छोड़कर हृदय में विराजमान है। अथवा नाभि से दश अङ्गुल प्रदेश छोड़कर हृदय में विराजमान है। जैसे गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है—

"ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति। भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढ़ानि मायया ॥" इति।

पुरुष एवेदꣳ सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्त्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥२ ॥

(अन्वयः) यत् इदं (वर्तमान जगत्) (यत्) भूतं यच्च भाव्यं सर्वं पुरुष एव। उत अमृतत्वस्य ईशानः (पुरुष एव) यत् अन्नेन अतिरोहति ॥२ ॥

(मन्त्रार्थः) जो यह वर्तमानकालिक जगत् है तथा जो जगत् व्यतीत हुआ है और जो होने वाला है वह सब विराट पुरुष के अवयव हैं—ऐसा समझना चाहिये। अमरण धर्मा देवताओं के भी स्वामी विराट पुरुष ही हैं। क्योंकि प्राणियों के (अन्न) अर्थात् शुभाशुभ कर्मफल भोग के लिये वह पुरुष अपनी कारणावस्था को छोड़ कर कार्यावस्था को अर्थात् जगद्रूप विकार को धारण करता है। यह जगत् पुरुष का वास्तविक स्वरूप नहीं है।

(शंका)—पुरुष को यदि जगत्-स्वरूप मानेंगे तो जगत् का परिणामी होने के कारण पुरुष को भी परिणामी मानना होगा ?

(समाधान)—वह पुरुष जगत स्वरूप ही नहीं है, किन्तु अमृतत्व अर्थात् मोक्ष का भी स्वामी है। इतना ही नहीं, जो ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्त भूतजात अन्न से उत्पन्न होता है उसका भी स्वामी वह पुरुष ही है। अतः वह पुरुष मरणरहित (नित्य) है ॥२ ॥

एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः।
पादोस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतंदिवि ॥३ ॥

(अन्वयः) (कालत्रयसम्बद्धं जगद्यावदस्ति) एतावान् (सर्वोऽपि) अस्य महिमा (विभूतिः) (वास्तवः) पुरुष अतः ज्यायान्। विश्वा भूतानि अस्य पादः अस्य त्रिपात् (स्वरूपम्) अमृतं दिवि (अवतिष्ठत् इति शेषः) ॥३ ॥

(मन्त्रार्थ) भूत, भविष्य एवं वर्तमान काल-सम्बन्धी जितने जगत् हैं, वे सब इस विराट पुरुष की विभूति हैं, वास्तविक रूप नहीं है वास्तव पुरुष तो इस जगत् समुदाय से बहुत अधिक है। इन्हीं दोनों विषयों को आगे स्पष्ट किया जाता है। कालत्रयवर्ती प्राणिसमुदाय इस पुरुष का (पाद) चतुर्थांश है। अवशिष्ट त्रिपातस्वरूप जो विनाश रहित है वह स्वप्रकाश रूप से अवस्थित है। यद्यपि "**सत्य ज्ञानमनन्तं ब्रह्म**" इस श्रुति के अनुसार ब्रह्म को इयता न होने के कारण पदचतुष्टय की कल्पना अयुक्त है तथापि यह जगत् ब्रह्म की अपेक्षा अत्यल्प लेशमात्र है, इसी अभिप्राय से पादचतुष्टय की कल्पना की गयी है ॥३ ॥

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि ॥४ ॥

(अन्वयः) त्रिपात्पुरुषः ऊर्ध्वः उदैत् अस्य पादः इह पुनः अभवत्। ततः विष्वङ्साशनानशने अभि व्यक्रामत् ॥४ ॥

(मन्त्रार्थः) यह जो संसार स्पर्शरहित ब्रह्मस्वरूप त्रिपात् पुरुष है वह इस मायामय संसार से बहिर्भूत है एवं संसार के गुण दोषों से रहित होता हुआ सबसे उत्कृष्ट रूप में स्थित है। इसका लेशमात्र इस माया जगत् में यह देवतिर्यङ्मनुष्यादि रूप से बार-बार आता रहता है। यह समस्त जगत् ब्रह्म का लेशमात्र है। इस विषय को गीता में भी भगवान् कृष्ण ने कहा है—"विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्" ॥ (१० ।४२) माया में आया हुआ ब्रह्म का (लेश) एक अंश साशन

अर्थात् भोजनादि व्यवहार वाले चेतन प्राणिसमुदाय को तथा अनशन अर्थात् भोजनादिरहित स्थावर प्राणिसमुदाय को लक्ष्य कर, विष्वङ् अर्थात् देवतिर्यगादि नानारूपों में आभासित होकर व्याप्त हो रहा है ॥४ ॥

ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥५ ॥

(अन्वय) ततः आदिपुरुषात्) विराट अजायत विराजः अधि पूरुषः। सः जात अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिम् अथो पुरः (ससर्जेति शेषः) ॥५ ॥

(मन्त्रार्थ) (पूर्वमन्त्र में जो 'विष्वङ् व्यक्रामत् कहा गया है उसी को विस्तृतरूप से अग्रिम मन्त्र में कहा जाता है) उस आदि पुरुष परमात्मा से विराट पुरुष अर्थात् जिसका शरीर ब्रह्माण्ड है वह उत्पन्न हुआ। विराट पुरुष के शरीर में परमात्मा जीव रूप से स्वयं प्रविष्ट हुआ। "तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्" यह श्रुति भी उक्त विषय को पुष्ट करती है। उस उत्पन्न विराट पुरुष ने देव-तिर्यङ्मनुष्यादि नानाविध रूपों को धारण किया है। पश्चात् पृथिवी तथा देवादि जीवों के आधारभूत शरीरों को भी उत्पन्न किया ॥५ ॥

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।
पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥६ ॥

(अन्वयः) सर्वहुतः तस्मात् यज्ञात् पृषदाज्यं संभृतम् (पुरुषेणेति शेषः)। ये आरण्याः ग्राम्याश्च तान् वायव्यान् पशून् चक्रे ॥६ ॥

(मन्त्रार्थः) जिसमें सर्वस्व समर्पण किया जाता है ऐसा जो पुरुषमेधाख्य (उपासना द्वारा जीव और ब्रह्म का ऐक्यरूप) यज्ञ है उससे विराट पुरुष ने पृषदाज्य अर्थात् दधियुक्त घृत सम्पादित किया। अर्थात् वह पुरुष वायुदेवता के वन्य हरिणादि तथा ग्राम्य गवादि दोनों प्रकार के पशुओं को उत्पन्न किया ॥६ ॥

तस्माद् यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत ॥७ ॥

(अन्वयः) सर्वहुतः तस्मात् यज्ञात् ऋचः सामानि जज्ञिरे। तस्मात् छन्दांसि जज्ञिरे तस्मात् यजुः अजायत ॥७ ॥

(मन्त्रार्थः) सर्वहुत् उस पुरुषमेध यज्ञ से ऋक्, साम और यजुः यह तीन वेद और गायत्री आदि सात छन्द आविर्भूत हुए जो कि यज्ञों के साधनभूत हैं। लिखा भी है—"वेदा हि यज्ञार्थमभिप्रवृत्ताः" इति ॥७ ॥

तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥८ ॥

(अन्वयः) तस्मात् (यज्ञात्) अश्वाः ये के च उभयादतः अजायन्त । तस्मात् गावो ह जज्ञिरे तस्मात् अजावयः जाताः ॥८ ॥

(मन्त्रार्थः) उस पुरुषमेध यज्ञ से घोड़े, गदहे, खच्चर आदि नीचे ऊपर दोनों तरफ दांतों वाले पशु उत्पन्न हुए। गौएं, बकरे तथा भेड़ भी उसी यज्ञ पुरुष से उत्पन्न हुए। क्योंकि पशु के बिना यज्ञ नहीं सिद्ध हो सकते ॥८ ॥

तं यज्ञम्बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः ।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ॥९ ॥

(अन्वयः) तं यज्ञं पुरुषम् अग्रतः जातं बर्हिषि प्रौक्षन् । साध्याः देवाः ऋषयश्च (ते) तेन अयजन्त ॥९ ॥

(मन्त्रार्थः) सृष्टि के आदि में उत्पन्न होने वाले यज्ञ के साधनभूत उस विराट पुरुष को पशु मानकर मानसयज्ञ में प्रोक्षणादि संस्कार द्वारा संस्कृत किया। पश्चात सृष्टि—साधन योग्य प्रजापति प्रभृति देवगण और मन्त्रद्रष्टा ऋषिगण ने उस पुरुषरूप पशु के द्वारा मानसयज्ञ किया ॥९ ॥

यत् पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखंकिमस्यासीत्किंबाहू किमूरू पादा उच्येते ॥१० ॥

(अन्वयः) यत् पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् । अस्य मुखं किमासीत, किं बाहू, किमुरू, पादौ (च किम्) उच्येते ॥१० ॥

(मन्त्रार्थः) (ब्राह्मणादि वर्णों की सृष्टि बतलाने के लिए इस मन्त्र द्वारा ब्रह्मवादियों के प्रश्न कहे जाते हैं) प्रजापति के प्राणस्वरूप देवगण ने जब पुरुष को यज्ञ साधन-भूत पशु स्वीकार किया, उस समय कितने प्रकार से उस पुरुष को कल्पित किया ? उस पुरुष का मुख क्या था ? बाहु, जंघा और पैर कौन हुए ? ॥१० ॥

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्य-कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याꣳशूद्रोअजायत ॥११ ॥

(अन्वयः) अस्य ब्राह्मणः मुखम् आसीत् राजन्यः बाहू कृतः । तदस्य ऊरू यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रः अजायत ॥११ ॥

(मन्त्रार्थः) (पूर्वमन्त्रोक्त प्रश्नों के उत्तर इस मन्त्र में कहे जाते हैं)

ब्राह्मण उस प्रजापति का मुख था अर्थात् ब्राह्मण मुख से उत्पन्न हुए, क्षत्रिय बाहु से, वैश्य जंघा से और शूद्र पैरों से उत्पन्न हुए ॥११ ॥

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षो सूर्यो अजायत ।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ॥१२ ॥

(अन्वयः) मनसः चन्द्रमा जातः चक्षोः सूर्यः अजायत । श्रोत्रात् वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ॥१२ ॥

(मन्त्रार्थः) जिस प्रकार दही घृतादि के साधनभूत गवादि, पशु, ऋगादि वेद और ब्राह्मणादि मनुष्य उस विराट पुरुष से उत्पन्न हुए, उसी प्रकार चन्द्रमा आदि देवगण भी उन्हीं से उत्पन्न हुए, यह विषय इस मन्त्र में कहा गया है। उस विराट पुरुष के मन से चन्द्रमा, नेत्रों से सूर्य, कानों से सूत्रात्मा वायु और पञ्चप्राण तथा मुख से अग्नि उत्पन्न हुए ॥१२ ॥

नाभ्या आसीदन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकां २ अकल्पयन् ॥१३ ॥

(अन्वयः) नाभ्याः अन्तरिक्षम् आसीत् शीर्ष्णः द्यौः समवर्तत। पद्भ्यां भूमिः श्रोत्रात् दिशः तथा (तेनोक्तप्रकारेण) लोकान् (भूरादीन त्रीन्) अकल्पयन् (फलदानोत्सुकाः काला इति शेषः) ॥१३ ॥

(मन्त्रार्थः) (जिस प्रकार प्रजापति के मन आदि से चन्द्रमा प्रभृति उत्पन्न हुए, उसी प्रकार अन्तरिक्षादि लोक भी, यह विषय इस मन्त्र से बतलाया है)

प्रजापति के नाभि से अन्तरिक्ष, शिर से द्युलोक, पैरों से पृथिवी, कानों से दश दिशाएं उत्पन्न हुईं। पूर्वोक्त प्रकार से जीवों के फलप्रदानोत्सुक काल प्रजापति विराट से पृथिव्यादि तीनों लोकों को तथा दिशाओं को उत्पन्न किया ॥१३ ॥

यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ॥१४ ॥

(अन्वयः) यत् (यदा) देवाः पुरुषेण हविषा यज्ञम् अतन्वत। तदा वसन्तः आज्यम् आसीत् ग्रीष्म इध्मः शरत् हविः ॥१४ ॥

(मन्त्रार्थः) पूर्वोक्त प्रकार से देवशरीर उत्पन्न हो जाने पर, देवगण उत्तर सृष्टि की सिद्धि के लिये, उस समय बाह्य घृतादि द्रव्य के उत्पन्न न होने के कारण पुरुष को ही हवि मानकर, उस पुरुष रूप हवि के द्वारा मानसयज्ञ का सम्पादन किया। उस समय उस मानस यज्ञ में वसन्त ऋतु घृत के स्थान में मानी गई। ग्रीष्म इध्म (लकड़ी) शरद्ऋतु पुरोडाशादि हवि मानी गई हैं। पहले पुरुष की हवि की सामान्य रूप से कल्पना की गई है और यहां वसन्तादि ऋतुओं की जो हवि है उसकी विशेष रूप से कल्पना की गई है, इसलिये पूर्वापर विरोध की शंका नहीं करनी चाहिये।

(यहां मन्त्रों का व्युत्क्रम है। उक्त मन्त्र के बाद **"तंयज्ञम्"** (९) फिर 'तस्माद्यज्ञात्' (६ ।७ ।८ ।) तीन मन्त्र पश्चात् **'सप्तास्यासन्'** (१५ ।) इस प्रकार मन्त्रों का क्रम होना चाहिये। अन्यथा अर्थ में पूर्वापर विरोध आता है) ॥१४ ॥

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरुषम्पशुम् ॥१५ ॥

(अन्वयः) यत् (यदा) यज्ञं तन्वानाः देवाः पुरुषं पशुम् अबध्नन्। तदा

अस्य सप्त (छन्दांसि) परिधयः आसन् त्रिः सप्त (त्रिगुणिताः सप्त) समिधः कृताः ॥१५ ॥

(मन्त्रार्थः) जब प्रजापति के प्राण और इन्द्रियरूप देवगण उपासनात्मक मानसयज्ञ करते हुए विराट पुरुष को पशु मानकर यूप में बांधे। पश्चात् संकल्पित यज्ञ करते हुए गायत्री आदि सात छन्द परिधिः माने गये। द्वादश मास, पड्ऋतु और तीन लोक ये २१ इक्कीस समिधाएं मानी गईं ॥१५ ॥

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥१६ ॥

(अन्वयः) देवाः यज्ञेन अयजन्त। तानि धर्माणि प्रथमानि आसन्। यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति (तं) नाकम् ते ह महिमानः (महात्मानः) सचन्त (अड्भाव आर्षः) ॥१६ ॥

(मन्त्रार्थः) (पूर्व मन्त्रों द्वारा कही गई विस्तृत सृष्टिप्रक्रिया को इस मन्त्र द्वारा संक्षिप्तरूप में ऋषि कहते हैं) प्रजापति के प्राणेन्द्रियरूप देवगण ने मानसयज्ञ द्वारा यज्ञपुरुष प्रजापति का आराधन किया। उस आराधन से समस्त जगत् को धारण करने वाला प्राणिसमुदाय उत्पन्न हुआ। (यहां तक सृष्टि प्रक्रिया कही गई, अब उपासना तथा उसके फल का प्रतिपादक वेदार्थ संगृहीत किया जाता है) जिस विराट पुरुष की प्राप्ति रूप स्वर्ग में पुरातन देवगण हैं उस स्वर्ग को विराट पुरुषोपासक महात्मागण प्राप्त करते हैं। **"सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्"** ऋग्वेद के इस मन्त्र द्वारा यह सृष्टि के प्रवाह की तरह अथवा बीजाङ्कुर की तरह अनादि है, यह भी सिद्ध हो जाता है ॥१६ ॥

इति पुरुषसूक्तम्।

अथोत्तरनारायणम्

'अद्भ्यः सम्भृतः' इत्यादि-षड्चस्यानुवाकस्योत्तरनारायणऋषिरादित्यो देवता आद्यानां तिसृणान्त्रिष्टुप्छन्दो द्वयोरनुष्टुप्छन्दोऽन्त्यायास्त्रिष्टुप्छन्दः आदित्यरूपि पुरुषमेधयाजिनः स्तुतौ विनियोगः ॥

अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यैरसाच्च विश्वकर्म्मणा समवर्त्तताग्रे।
तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्त्वमाजानमग्रे ॥१७ ॥

(अन्वयः) अदभ्यः पृथिव्यै (षष्ठ्यर्थे चतुर्थी) (यो रसः) संभृतः विश्वकर्मणः (कालस्य) रसाच्चः रसः) अग्रे समवर्तत। त्वष्टा तस्य रूपं विदधत्येति अग्रे मर्त्यस्य तत् आजानम् देवत्वम् ॥१७ ॥

(मन्त्रार्थः) पूर्वकल्प में पुरुषमेधयाजी पुरुष के सूक्ष्म शरीर में पृथिव्यादि पञ्चभूतों से तथा विश्वकर्मा कालकी प्रसन्नता से जो उत्तम जन्मप्रद रस विशेष उत्पन्न होता है उस रसके रूप को

धारण करते हुए सूर्य (त्वष्टा) भगवान् प्रतिदिन उदय करते हैं। पुरुषमेधयाजी मनुष्य उत्तरकल्प में आजानदेवत्व यानी सूर्यत्व को प्राप्त होता है। देवगण दो प्रकार के होते हैं—आजानदेव और कर्मदेव। जो उत्कृष्ट कर्म द्वारा देवत्व को प्राप्त होते हैं वे कर्मदेव कहलाते हैं और जो सृष्टि के आदि में ही सूर्यादि रूप से उत्पन्न होते हैं वे आजानदेव कहलाते हैं। इन दोनों में आजानदेव श्रेष्ठ हैं ॥१७॥

इस मन्त्र में अप और पृथिवी पञ्चभूतों का उपलक्षण है।

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्त्वाऽतिमृत्युमेति नाऽन्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥१८॥

(अन्वयः) एतं महान्तं पुरुषम् आदित्यवर्णं तमसः परस्तात् (अवस्थितम्) अहं वेद। तमेव विदित्वा मृत्युमत्येति अयनाय अन्यः पन्था न विद्यते ॥१८॥

(मन्त्रार्थः) इस महान् सर्वोत्कृष्ट सूर्यमण्डलस्थ आदित्य के समान वर्णवाले अन्धकार से दूरतर अर्थात् अज्ञानरहित पुरुष को आत्मरूप से मैं जानता हूं। उसी आदित्य मण्डलस्थ पुरुष को आत्म रूप समझ कर मनुष्य आवागमन से छूट जाता है अर्थात् ब्रह्मसायुज्य को प्राप्त होता है। मोक्ष के लिए शास्त्र में आत्मज्ञान के सिवाय दूसरा मार्ग नहीं है ॥१८॥

प्रजापतिश्चरति गर्भे ऽअन्तरजायमानो बहुधा विजायते।
तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन् ह तस्थुर्भुवनानिविश्वा ॥१९॥

(अन्वयः) (यः) प्रजापतिः गर्भे चरति अन्तः अजायमानो बहुधा विजायते। धीराः तस्य योनिं परिपश्यन्ति तस्मिन् ह विश्वा भुवनानि तस्थुः ॥१९॥

(मन्त्रार्थः) (जो) प्रजापति परमात्मा सब प्राणियों के हृदय में स्थिर होकर गर्भ में प्रवेश करता है। लिखा भी है—"**आत्मा वै जायते पुत्रः।**" तथा जो नित्य होता हुआ भी बहुत प्रकार से (कार्य कारणरूप से) अपनी माया द्वारा संसार-प्रपञ्चरूप से उत्पन्न होता है।

ब्रह्मवेत्ता ऋषिगण उस प्रजापति के (योनि) स्वरूप को "**अहं ब्रह्मास्मि**" इस रूप से जानते हैं। सारा जगत् उस कारण ब्रह्मरूप प्रजापति में ही स्थित है अर्थात् "**सर्वं खल्विदं ब्रह्म**" ॥१९॥

ये देवेभ्य ऽआतपति यो देवानां पुरोहितः।
पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये ॥२०॥

(अन्वयः) यो देवेभ्यः आतपति यो देवानां पुरोहितः। यः देवेभ्यः पूर्वः जातः (तस्मै) रुचाय ब्राह्मये नमः ॥२०॥

(मन्त्रार्थः) जो आदित्यरूपी प्रजापति देवताओं के लिए प्रकाशित हो रहे हैं, जो देवताओं में अग्रसर मुख्य हैं तथा जो देवताओं से पहले आविर्भूत हुए हैं, उन दीप्यमान ब्रह्म के अंश आदित्यस्वरूप प्रजापति को नमस्कार समर्पित करता हूं ॥२०॥

रुचं ब्राहमं जनयन्तो देवा अग्रे तदब्रुवन्।
यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवा असन्वशे ॥२१ ॥

(अन्वयः) देवाः रुचं ब्राह्मं जनयन्तः अग्रे तत् अब्रुवन् यः त्वा ब्राह्मणो विद्यात् तस्य वशे देवा आसन ॥२१ ॥

(मन्त्रार्थः) प्रजापति के प्राणरूप देवगण दीप्यमान तथा ब्रह्म के अपत्य अर्थात् अंशरूप आदित्य को उत्पन्न करते हुए पहले यह वचन बोले हे—आदित्य ! जो ब्राह्मण उसको पूर्वोक्त प्रकार से उत्पन्न समझेगा उसके वश में समस्त देवगण होगें, वे जगत्पूज्य होते हैं ॥२१ ॥

श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्।
इष्णन्निषाणा मुं म इषाण सर्वलोकं म इषाण ॥२२ ॥

(अन्वयः) (हे आदित्य !) श्रीः लक्ष्मीश्च ते पत्न्यौ अहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपम् अश्विनौ व्यात्तं (मुखम्)। इष्णन् इषाण (इच्छ) अमुं (परलोकम्) इषाण सर्वलोकम् मे इषाण ॥२२ ॥

(मन्त्रार्थः) वेद आदित्य की स्तुति कर प्रार्थना करता है—हे आदित्य ! श्री (सम्पत्) और लक्ष्मी (शोभा) ये दोनों तुम्हारी पत्नीस्थानीय हैं। दिन और रात्रि तुम्हारा करवट बदलना है। आकाश के तारे तुम्हारे रूप हैं, अश्विनीकुमार अर्थात् द्यावापृथिवी तुम्हारे विकसित मुख हैं, तुम जो ऐसे हो इसीलिए तुम से याचना करता हूं। मुझे कर्मफल को देने के लिए इच्छा करो तथा मेरे परलोक को समीचीन बनाओ, समस्त लोक मेरे लिए अनुकूल करो अर्थात् मैं तुम्हारी कृपा से सर्वात्मक हो जाऊं यानी मुक्त हो जाऊं ॥२२ ॥

इति सान्वयं हिन्दीभाषासहितं उत्तरनारायणं समाप्तम्।

२२. श्रीसूक्तं भाषाटीकाप्रारम्भः

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुर्वणरजतस्रजाम्।
चन्द्रां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥१ ॥

हे जातवेद ! (अग्ने !) तुम सुवर्ण के वर्ण के समान कुछ हरितवर्ण लिए कान्तिमान् हो—हरिणी रूप धारिणी बन भ्रमण कारिणी थीं। सोने और चांदी के समान पुरुषों की मालायें धारण करने वाली चन्द्रमा के सदृश प्रकाशमान और चन्द्रसदृश सबको प्रसन्न करने वाली हो। चञ्चला सुवर्ण के समान रूप वाली इस हिरण्य रूपी लक्ष्मी को मेरे लिये बुलाओ ॥१ ॥

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥२ ॥

हे जातवेद ! (अग्ने !) तुम उन लक्ष्मी को मेरे लिए बुलाओ—जिनके आने से मैं सुवर्ण, गौ घोड़े पौत्रादि से युक्त रहूं जो मुझे छोड़कर कभी न जायें ॥२ ॥

अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् ।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ॥३ ॥

ऐसी लक्ष्मी को मैं प्राप्त करूं—जिनके आगे घोड़े रथ मध्य में रहें। ऐसी रथारूढ़ लक्ष्मी हाथियों के शब्दों से जगत को आनन्दित करने वाली दीप्तमान हो, ऐसी वह आश्रय देने वाली आवाहित लक्ष्मी मेरे यहां प्रसन्न होकर निवास करें ॥३ ॥

कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारमार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् ।
पद्मेस्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥४ ॥

जो वाणी और मन के अगोचर या ब्रह्मरूप हैं—तथा जो मन्द-मन्द हास्य युक्त हैं चारों ओर से सुवर्ण से लिप्त हैं। दयार्द्रहृदया प्रशस्त प्रकाशवाली जो स्वयं तृप्त हैं—सम्पूर्ण भक्तों के मनोरथों को पूर्ण कर देने वाली विश्व विख्यात पद्म में निवास करने वाली—कमल सदृश वर्णा लक्ष्मी को मैं अपने समीप बुलाता हूं ॥४ ॥

चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं,
श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।
तां पद्मनेमीं शरणमहं प्रपद्ये,
ऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमि ॥५ ॥

चन्द्रमा के समान प्रकाशवान् कान्तिवाली, कीर्ति से प्रकाशित, स्वर्ग में देवताओं द्वारा सेवित, अत्यन्त उदार हृदया, कमलवत आकार वाली लक्ष्मी की शरण में मैं आश्रय पाने के लिए अपनी दरिद्रता को दूर करने के लिए—वरण करता हूं ॥५ ॥

आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो,
वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः ।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु,
मायान्तरायाश्च वाह्याऽअलक्ष्मीः ॥६ ॥

हे सूर्य के समान कान्तिवाली ! आपके तप और तेज से वनस्पति रूपी बिल्ववृक्ष की उत्पत्ति हुई ? उस बिल्व वृक्ष का फल मेरे अन्तर और बाह्य की दरिद्रता को दूर करे ॥६ ॥

उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ॥७ ॥

हे लक्ष्मि ! महादेव के सखा कुबेर, इन्द्रादि देवताओं की अग्नि एवं मणि के साथ मणिभद्र के साथ रत्न, कीर्ति, दक्षकन्या या कुबेर की कोषाध्यक्षता अथवा यश आदि मुझे प्राप्त हों। मैं भारतदेश में उत्पन्न हूं अतः मुझे ऐश्वर्य और यश दें ॥७ ॥

क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्।
अभूतिमसमृद्धिञ्च सर्वान्निर्णुद मे गृहात्॥८॥

लक्ष्मी की ज्येष्ठ भगिनी अलक्ष्मी जो भूख और प्यास से मलिन तथा क्षीण रहती है उसका मैं नाश चाहता हूं। हे देवि ! मेरे घर से असमृद्धि और अनैश्वर्य को दूर करो॥८॥

गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्॥९॥

सुगन्धित पुष्पों को समर्पित करने पर उनसे प्राप्त करने योग्य किसी के वश में रहने वाली धन धान्यादि से परिपूर्ण गौ-अश्व आदि पशुओं की समृद्धि को देने वाली सभी प्राणियों की ईश्वरी, आधारभूत पृथ्वीरूपी लक्ष्मी का मैं आवाहन करता हूं अर्थात् मैं अपने यहां बुलाता हूं॥९॥

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः॥१०॥

हे लक्ष्मि ! आपसे मानसिक संकल्प, वाणी की सत्यता मुझे सदैव प्राप्त हो। गौ आदि—जिनसे दधि-दुग्धादि पूर्ण रहें। अन्नादि में गोधूम, यवादि-ब्रीहि से भक्ष्य-भोज्य-चोष्य लेह्य भी प्राप्त करूं। लक्ष्मी-कीर्ति मेरे यहां सर्वदा वास करें॥१०॥

कर्दमेन प्रजाभूता मयि सम्भव कर्दम !
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्॥११॥

कर्दम नाम के ऋषिपुत्र से लक्ष्मी देवी सन्तानवती हुई। हे कर्दम ऋषि ! तुम मेरे यहां उत्पन्न होकर मेरे वंश में कमल की माला धारण करने वाली सारे संसार की जननी लक्ष्मी माता को निवास कराओ॥११॥

आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे।
नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले॥१२॥

जल और स्निग्ध पदार्थों को या स्नेह युक्त कार्यों को उत्पन्न करा कर हे चिक्लीत ! लक्ष्मी पुत्र आप मेरे घर में माता लक्ष्मी देवी सहित वास करो॥१२॥

आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम्।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥१३॥

हे अग्निदेव ! तुम आर्द्रगन्धा स्वभाव वाली, अभिषेकार्थ हाथियों के शुण्डाग्र भाग से अभिषिच्यमाना, कमलहस्ता-पद्मलता रूपा-पुष्टि स्वरूपा पीतवर्णा कमल-मालाधारिणी चन्द्र सदृश शुभ्र कान्तिमती स्वर्गमणी लक्ष्मी को मेरे गृह में बुलाओ॥१३॥

आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥१४॥

हे अग्ने ! दयावान आर्द्रचित्ता आर्द्रगन्ध वाली तथा दुष्टों को दण्ड देने वाली यष्टि स्वरूप, सुन्दर कांतिमान एवं सुवर्णवत् कमलों की माला धारण करने वाली, सूर्य सदृश, प्रकाशित होने वाली सुवर्ण के समान आभावाली या सुवर्णरूपा लक्ष्मी को मेरे घर में बुला कर बसाओ ॥१४ ॥

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूतिं गावो दास्योऽश्वान्विन्देयं पुरषानहम् ॥१५ ॥

हे अग्ने ! तुम मेरे यहां उस लक्ष्मी को बुलाओ जो कभी नष्ट न हो, मुझे छोड़कर कभी न जावे। जिनके आगमन से मैं बहुत सुवर्ण, धन, गौ-दास-दासियां, घोड़े और पुत्र-पौत्रादि से युक्त रहूं ॥१५ ॥

यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ।
सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत् ॥१६ ॥

लक्ष्मी प्राप्ति की इच्छा करने वाला मनुष्य पवित्र और सावधान हो स्वस्थ चित्त से प्रतिदिन अग्नि में गोघृत की इन पन्द्रह ऋचाओं से आहुति दे तो अवश्य लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ॥१६ ॥

॥श्रीसूक्त भाषाटीका सम्पूर्ण ॥

२३. लक्ष्मीसूक्तं-भाषाटीका

ध्यानम्–

सिन्दूरारुणकान्तिमब्ज वसतिं सौन्दर्य धारानिधिं,
कोटीराङ्गदहार कुंडलकटीसूत्रादिभिर्भावितम् ।
हस्ताब्जैर्वसुपत्रमब्ज युगलादर्शौ वहन्तीं पराम्,
आबीतां परिचारिकाभिरनिशं ध्यायेत्, प्रियां शार्ङ्गिणः ॥
पद्ममाने पद्मविपद्मपत्रे पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि ।
विश्वप्रिये विष्णुमनोऽनुकूले त्वत्पादपद्मं मयि सन्निधत्स्व ॥१ ॥

हे कमलमुखि ! हे कमलिनि, हे कमलपत्रों वाली, हे कमल प्रेमी, हे कमल सदृश बड़े-बड़े नेत्रों वाली, संसार को प्रिय विष्णु के अनुरूप हे महालक्ष्मि ! तुम अपने चरणकमलों सहित मेरे घर में निवास करो ॥१ ॥

पद्मानने पद्म ऊरू पद्माक्षी पद्मसम्भवे ।
तन्मे भजसि पद्माक्षी येन सौख्यं लभाम्यहम् ॥२ ॥

हे कमलवत् मुखवाली ! हे कमल समान ऊरूवाली ! हे कमलनयनि ! हे कमलवासिनि ! हे पद्माक्षि ! तुम मेरे यहां सदैव निवास करो। जिससे सर्वसौख्य मुझे मिलते रहें ॥२ ॥

अश्वदायि गोदायि धनदायि महाधने ।
धनं मे जुषतां देवि सर्वकामांश्च देहि मे ॥३ ॥

हे अश्वों को देने वाली, गौओं को देने वाली, धन देने वाली, महाधने लक्ष्मी ! विपुल धन ऐश्वर्य देकर सर्व कामों की पूर्ति करती रहो ॥३ ॥

पुत्र-पौत्र धनं धान्यं हस्त्यश्वतरीरथम् ।
प्रजानां भवसि माता आयुष्मन्तं करोतु मे ॥४ ॥

हे माता ! पुत्र-पौत्र, धन-धान्य हस्ति, अश्व ; गौ-अश्वतरी, सहित जुते रथ प्रजाओं को प्रदान करो और मुझे आयुष्मान करो ॥४ ॥

धनमग्निर्धनं वायुर्धनं सूर्यो धनं वसुः ।
धनमिन्द्रो बृहस्पतिर्वरुणो धनमश्विना ॥५ ॥

हे अग्निदेव ! धन दो । हे वायुदेव धन दो । हे सूर्यदेव धन दो । हे वसुदेव धन दो । हे इन्द्र धन दो, हे वृहस्पति वरुण एवं अश्विनी कुमारो धन दो ॥५ ॥

वैनतेय सोमं पिब सोमं पिबतु वृत्रहा ।
सोमं धनस्य सोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः ॥६ ॥

हे गरुड़ ! आप और हे इन्द्रदेव ! आप भी सोम रस पीवें । कुवेर आदिक सभी देव मुझे सोम रस दें । हे सोम रसपान करने वाले सर्वदा हमारे घर में बास करें । जिससे मैं ऐश्वर्यवान बनूं ॥६ ॥

न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः ।
भवन्ति कृतपुण्यानां भक्त्या श्रीसूक्तजापिनाम् ॥७ ॥

इनका पाठ करने वालों को क्रोध, मत्सरता, लोभ एवं अशुभ विचार कभी भी नहीं होते हैं । सर्वदा पुण्य करने वालों एवं भक्ति के द्वारा श्री सूक्त का जाप करने वालों का आप की ओर मन लगा रहता है ॥७ ॥

सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशुकगन्धमाल्यशोभे ।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम् ॥८ ॥

हे कमलवासिनि ! कमलवत करों वाली ! हे स्वच्छ वस्त्र व सुगन्धित पुष्पों की माला वाली, शोभा युक्ता ! हे विष्णुप्रिये ! मन की बातों को जानने वाली ! त्रैलोक्य को ऐश्वर्य प्रदान करने वाली ! धन देने वाली हे देवि ! मेरे ऊपर प्रसन्न होकर वास करो ॥८ ॥

विष्णुपत्नीं क्षमां देवीं माधवीं माधवप्रियाम् ।
लक्ष्मीं प्रियसखीं देवीं नमाम्यच्युतवल्लभाम् ॥९ ॥

मैं—विष्णुपत्नी, क्षमारूपिणी, माधवी, विष्णुप्रिया, माधवप्रिया, प्रिय सखी, अच्युतवल्लभा देवी लक्ष्मी को प्रणाम करता हूं ॥९ ॥

महालक्ष्म्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥१० ॥

मैं महालक्ष्मी की जिज्ञासा करता हूं। विष्णु पत्नी का ध्यान करता हूं। अतएव श्री महालक्ष्मी हमें प्रेरित करें, हमारे घर में सर्वदा निवास करें ॥१० ॥

आनन्दः कर्दमः श्रीदश्चिक्लीत इति विश्रुताः।
ऋषयः श्रियः पुत्राश्च मयि श्रीदेवी देवता मता ॥११ ॥

आनन्द, कर्दम, श्रीद, चिक्लीत ये चार जो आपके प्रसिद्ध पुत्र हैं और इस श्री सूक्त के ऋषि भी हैं। इस सूक्त के प्रधान देवता भी लक्ष्मी के पुत्र ही हैं मुझे श्री एवं धन दें ॥११ ॥

ऋणरोगादि दारिद्र्यं पापञ्च अपमृत्यवः ॥
भयशोकमनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा ॥१२ ॥

हे महालक्ष्मि ! मुझे—ऋण-रोगादि बाधायें, दरिद्रता, पाप, अकाल मृत्यु, भयशोक, एवं समस्त मनः तापों से कभी भी क्लेश न उत्पन्न हो—और मैं सर्वदा सुखी रहूं ॥१२ ॥

श्रीवर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते।
धनं धान्यं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः ॥१३ ॥

इस सूक्त के पाठ करने से, लक्ष्मी, तेज, आयु, आरोग्य, पवित्रता, गौरव वृद्धि सभी वस्तुयें प्राप्त हों। धन-धान्य-पशु-बहुपुत्र लाभ हो, सौ वर्षों तक आयु प्राप्त हो ॥१३ ॥

॥ इति ऋक्परिशिष्टोक्तं लक्ष्मीसूक्तं समाप्तम् ॥

प्रार्थना—

ॐ सुरासुरेन्द्रादिकिरीटमौक्तिकैर्युक्तं सदा यत्त्वत्पाद पंकजम् ॥
परावरं पातुवरं सुमंगलं नमामि भक्त्या तव कामसिद्धये ॥

२४. रामरक्षास्तोत्रम्

'रामरक्षाकवच' की सिद्धि की विधि।

नवरात्रों में प्रतिदिन नौ दिनों तक ब्रह्म-मुहूर्त में नित्य-कर्म तथा स्नानादि से निवृत्त हो कर शुद्ध वस्त्र धारण कर कुशा के आसन पर सुखासन लगाकर बैठ जाइये। भगवान् श्रीराम के कल्याणकारी स्वरूप में चित्त को एकाग्र करके इस महान् फलदायी स्तोत्र का कम-से-कम ग्यारह बार और यदि यह न हो सके तो सात बार नियमित रूप से प्रतिदिन पाठ कीजिये। पाठ करने वाले की श्रीराम की शक्तियों के प्रति जितनी अखण्ड श्रद्धा होगी, उतना ही फल प्राप्त होगा। वैसे 'रामरक्षाकवच' कुछ लंबा है, पर इस संक्षिप्त रूप से भी काम चल सकता है। पूर्ण शान्ति और विश्वास से इसका जाप होना चाहिये, यहां तक कि यह कण्ठस्थ हो जाए।

विनियोगः

अस्य श्रीरामक्षास्तोत्रमन्त्रस्य बुधकौशिक ऋषिः श्रीसीतारामचन्द्रो देवता अनुष्टुप् छन्दः सीता शक्तिः श्रीमहान् हनुमान् कीलकं श्रीरामचन्द्रप्रीत्यर्थे रामरक्षास्तोत्रजपे विनियोगः।

ध्यानम्

ध्यायेदाजानुबाहुं धृतशरधनुषं बद्धपद्मासनस्थं
पीतं वासो वसानं नवकमलदलस्पर्धिनेत्रं प्रसन्नम्।
वामाङ्कारूढसीतामुखकमलमिलल्लोचनं नीरदाभं
नानालंकारदीप्तं दधतमुरुजटामण्डलं रामचन्द्रम्॥

स्तोत्रम्

चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम्।
एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम्॥१॥
ध्यात्वा नीलोत्पलश्यामं रामं राजीवलोचनम्।
जानकीलक्ष्मणोपेतं जटामुकुटमण्डितम्॥२॥
सासितूणधनुर्बाणपाणिं नक्तंचरान्तकम्।
स्वलीलया जगत्त्रातुमाविर्भूतमजं विभुम्॥३॥
रामरक्षां पठेत् प्राज्ञः पापघ्नीं सर्वकामदाम्।
शिरो मे राघवः पातु भालं दशरथात्मजः॥४॥
कौसल्येयो दृशौ पातु विश्वमित्रप्रियः श्रुती।
घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्रिवत्सलः॥५॥
जिह्वां विद्यानिधिः पातु कण्ठं भरतवन्दितः।
स्कन्धौ दिव्यायुधः पातु भुजौ भग्नेशकार्मुकः॥६॥
करौ सीतापतिः पातु हृदयं जामदग्न्यजित्।
मध्यं पातु खरध्वंसी नाभिं जाम्बवदाश्रयः॥७॥
सुग्रीवेशः कटी पातु सिक्थनी हनुमत्प्रभुः।
ऊरू रघूत्तमः पातु रक्षःकुलविनाशकृत॥८॥

जानुनी सेतुकृत् पातु जङ्घे दशमुखान्तकः।
पादौ विभीषणश्रीदः पातु रामोऽखिलं वपुः ॥९॥
एतां रामबलोपेतं रक्षां यः सुकृती पठेत्।
स चिरायुः सुखी पुत्री विजयी विनयी भवेत् ॥१०॥
पातालभूतलव्योमचारिणश्छद्मचारिणः।
न द्रष्टुमपि शक्तस्ते रक्षितं रामनामभिः ॥११॥
रामेति रामभद्रेति रामचन्द्रेति वा स्मरन्।
नरो न लिप्यते पापैर्भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति ॥१२॥
जगज्जैत्रैकमन्त्रेण रामनाम्नाभिरक्षितम्।
यः कण्ठे धारयेत्तस्य करस्थाः सर्वसिद्धयः ॥१३॥
वज्रपञ्जरनामेदं यो रामकवचं स्मरेत्।
अव्याहताज्ञः सर्वत्र लभते जयमङ्गलम् ॥१४॥
आदिष्टवान् यथा स्वप्ने रामरक्षामिमां हरः।
तथा लिखितवान् प्रातः प्रबुद्धो बुधकौशिकः ॥१५॥
आरामः कल्पवृक्षाणां विरामः सकलापदाम्।
अभिरामस्त्रिलोकानां रामः श्रीमान् स नः प्रभुः ॥१६॥
तरुणौ रूपसम्पन्नौ सुकुमारौ महाबलौ।
पुण्डरीकविशालाक्षौ चीरकृष्णाजिनाम्बरौ ॥१७॥
फलमूलाशिनौ दान्तौ तामसौ ब्रह्मचारिणौ।
पुत्रौ दशरथस्यैतौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥१८॥
शरण्यौ सर्वसत्त्वानां श्रेष्ठौ सर्वधनुष्मताम्।
रक्षःकुलनिहन्तारौ त्रायेतां नो रघूत्तमौ ॥१९॥
आत्तसज्जधनुषाविषुस्पृशावक्षयाशुगनिषङ्गसङ्गिनौ।
रक्षणाय मम रामलक्ष्मणावग्रतः पथि सदैव गच्छताम् ॥२०॥

संनद्धः कवची खड्गी चापबाणधरो युवा।
गच्छन् मनोरथान् नश्च रामः पातु सलक्ष्मणः ॥२१॥
रामो दाशरथिः शूरो लक्ष्मणानुचरो बली।
काकुत्स्थः पुरुषः पूर्णः कौसल्येयो रघूत्तमः ॥२२॥
वेदान्तवेद्यो यज्ञेशः पुराणपुरुषोत्तमः ॥२३॥
इत्येतानि जपन् नित्यं मद्भक्तः श्रद्धयान्वितः।
अश्वमेधाधिकं पुण्यं सम्प्राप्नोति न संशयः ॥२४॥
रामं दूर्वादलश्यामं पद्माक्षं पीतवाससम्।
स्तुवन्ति नामभिर्दिव्यैर्न ते संसारिणो नराः ॥२५॥
रामं लक्ष्मणपूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुन्दरं
काकुत्स्थं करुणार्णवं गुणनिधिं विप्रप्रियं धार्मिकम्।
राजेन्द्रं सत्यसंधं दशरथतनयं श्यामलं शान्तमूर्तिं
वन्दे लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम् ॥२६॥
रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे।
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ॥२७॥
श्रीराम राम रघुनन्दन राम राम
श्रीराम राम भरताग्रज राम राम
श्रीराम राम रणकर्कश राम राम
श्रीराम राम शरणं भव राम राम ॥२८॥
श्रीरामचन्द्रचरणौ मनसा स्मरामि
श्रीरामचन्द्रचरणौ वचसा गृणामि।
श्रीरामचन्द्रचरणौ शिरसा नमामि।
श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥२९॥
माता रामो मत्पिता रामचन्द्रः
स्वामी रामो मत्सखा रामचन्द्रः।

सर्वस्वं मे रामचन्द्रो दयालु-
र्नान्यं जाने नैव जाने न जाने ॥३० ॥
दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे च जनकात्मजा ।
पुरतो मारुतिर्यस्य तं वन्दे रघुनन्दनम् ॥३१ ॥
लोकाभिरामं रणरङ्गधीरं
राजीवनेत्रं रघुवंशनाथम् ।
कारुण्यरूपं करुणाकरं तं
श्रीरामचन्द्रं शरणं प्रपद्ये ॥३२ ॥
मनोजवं मारुततुल्यवेगं
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं
श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥३३ ॥
कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम् ।
आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ॥३४ ॥
आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम् ।
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥३५ ॥
भर्जनं भवबीजानामर्जनं सुखसम्पदाम् ।
तर्जनं यमदूतानां रामरामेति गर्जनम् ॥३६ ॥
रामो राजमणिः सदा विजयते रामं रमेशं भजे
रामेणाभिहता निशाचरचमू रामाय तस्मै नमः ।
रामान्नास्ति परायणं परतरं रामस्य दासोऽस्म्यहं
रामे चित्तलयः सदा भवतु मे भो राम मामुद्धर ॥३७ ॥
राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ॥३८ ॥

॥ इति श्रीबुधकौशिकमुनिविरचितं श्रीरामरक्षास्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

२५. दुर्गास्तुतिः

महाभारत के युद्ध के समय भगवान् द्वारा प्रेरित होकर श्री अर्जुत द्वारा की गई महत्त्वपूर्ण दुर्गा स्तुति।

(महाभारत के भीष्म पर्व में युद्ध क्षेत्र में युद्ध होने से पूर्व भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को युद्ध में विजय प्राप्ति के लिये भगवती दुर्गा का स्तवन कर उनसे आशीर्वाद प्राप्त करने का आदेश दिया था। यह स्तुति उस समय अर्जुन ने की थी। जो अत्यधिक प्रभावशाली एवं शीघ्र फलदायी है)।

नमस्ते सिद्धसेनानि आर्ये मन्दरवासिनि।
कुमारि कालि कापालि कपिले कृष्णपिंगले ॥१॥
भद्रकालि नमस्तुभ्यं महाकालि नमोऽस्तुते।
चण्डि चण्डे नमस्तुभ्यं तारिणि वरवर्णिनि ॥२॥
कात्यायनि महाभागे करालि विजये जये।
शिखिपिच्छधरे देवि नानाभरणभूषिते ॥३॥
अट्टशूल प्रहरणे खड्गखेटक धारिणि।
गोपेन्द्रस्यानुजे ज्येष्ठे नन्दगोपकुलोद्भवे ॥४॥
महिषासृक्प्रिये नित्यं कौशिकि पीतवासिनि।
अट्टहासे कोकमुखे नमस्तेऽस्तु रणप्रिये ॥५॥
उमे शाकम्भरि श्वेते कृष्णे कैटभनाशिनि।
हिरण्याक्षिविरूपाक्षि सुधूम्राक्षि नमोऽस्तुते ॥६॥
वेद श्रुति महापुण्ये ब्रह्मण्ये जातवेदसि।
जम्बूकटक चैत्येषु नित्यं सन्निहितालये ॥७॥
त्वं ब्रह्मविद्या विद्यानां महानिद्रा च देहिनाम्।
स्कन्द मातर्भगवति दुर्गे कान्तार वासिनि ॥८॥
स्वाहाकारः स्वधा चैव कला काष्ठा सरस्वति।
सावित्री वेदमाता च तथा वेदान्त उच्यते ॥९॥
स्तुतासि त्वं महादेवि विशुद्धेनान्तरात्मना।
जयोभवतु मे नित्यं त्वत्प्रसादाद् रणाजिरे ॥१०॥
कान्तारभय दुर्गेषु भक्तानां चालयेषु च।
नित्यं वससि पाताले युद्धे जयसि दानवान् ॥११॥

त्वं जम्भिनी मोहिनी च माया ह्री श्रीस्तथैव च।
सन्ध्या प्रभावती चैव सावित्री जननी तथा ॥१२॥
तुष्टिः पुष्टिः धृतिर्दीप्तिश्चन्द्रादित्यविमर्दिनि।
भूतिभूतिमतां संख्ये वीक्ष्यसे सिद्धचारणैः ॥१३॥

देव्युवाच

स्वल्पेनैव तु कालेन शत्रून् जेष्यसि पाण्डव,
नरस्त्वमसि दुर्धर्ष नारायण सहायवान् ॥
अजेयस्त्वं रणेऽरीणामपि वज्रभृतः स्वयम्।
इत्येवमुक्त्वा वरदा क्षणेनान्तरधीयत।
लब्धा वरं तु कौन्तेयो मेने विजयात्मनः ॥

महाभारत के समय कुरुक्षेत्र में जब भगवान् श्री कृष्ण चन्द्र जी ने कौरव-सेना को युद्ध के लिए उपस्थित देखा तो उन्होंने अर्जुन से उनके हित के लिए कहा—

हे महाबाहु अर्जुन ! तुम शत्रुओं को पराजित करने के निमित्त रणोऽभिमुख खड़े होकर पवित्र भाव से दुर्गा भगवती का स्तवन करो।

संग्राम में बुद्धिमान् वसुदेव नन्दन के ऐसा कहने पर अर्जुन रथ से उतर पड़े और हाथ जोड़कर दुर्गा का ध्यान करते हुए इस प्रकार स्तवन करने लगे—

हे सिद्ध समुदाय की नेत्री आर्ये ! तुम मन्दराचल के विपिन में निवास करती हो, तुम्हारा कौमार (ब्रह्मचर्य) व्रत अक्षुण्ण है, तुम काल शक्ति एवं कपाल धारिणी हो, तुम्हारा वर्ण कपिल और कृष्णपिङ्गल है, तुम्हें मेरा नमस्कार है। भद्रकाली तथा महाकाली के रूप में तुम्हें नमस्कार है। अत्यन्त कुपित चण्डिका रूप में तुम्हें प्रणाम है। हे सुन्दरि ! तुम्हीं संकटों से पार करने वाली हो ; तुम्हें सादर नमस्कार है। तुम मोर पंख की ध्वजा धारण करती हो और नाना भान्ति के आभूषणों से भूषित रहती हो। हे महामाये तुम्हीं कात्यायनी, कराली, विजया तथा जया हो। अत्यन्त उत्कट शूल तुम्हारा शस्त्र है, तुम खड्ग तथा चर्म धारण करती हो, हे रणप्रिये तुम्हें नमस्कार है। उमा, शाकम्भरी, महेश्वरी, कृष्णा, कैटभनाशिनी, हिरण्याक्षी, विरूपाक्षी, और धूम्राक्षी आदि रूपों में तुम्हें मेरा प्रणाम है। हे देवि ! तुम्हीं वेद श्रवण से होने वाला महान् पुण्य हो, तुम वेद एवं ब्राह्मणों की प्रिय तथा भूतकाल को जानने वाली हो। जम्बू द्वीप की राजधानियों और मन्दिरों में तुम्हारा निवास स्थान है। हे भगवति कार्तिकेय जननि, हे कान्तारवासिनि दुर्गे, तुम विद्याओं में महाविद्या और प्राणियों में महानिद्रा हो। हे देवि ! तुम्हीं स्वाहा, स्वधा, कला, काष्ठा, सरस्वती, सावित्री और वेदान्त आदि नामों से कही जाती हो। आपके प्रसाद से रणक्षेत्र में मेरी सदा ही विजय हो। वीहडपंथ, भय जनक स्थान, दुर्गमभूमि, भक्तों के गृह तथा पाताल लोक में तुम निवास करती हो और संग्राम में दानवों पर विजय पाती हो। तुम्हीं जम्भिनी (तन्द्रा) मोहिनी (निद्रा) माया, लज्जा, लक्ष्मी, सन्ध्या, प्रभावती, सावित्री

तथा जननी हो। तुष्टि, पुष्टि, धृति, तथा सूर्य और चन्द्रमा को अधिक कान्तिमान करने वाली ज्योति भी तुम्हीं हो। तुम्हीं भूति मानों की भूति (ऐश्वर्य) हो और समाधि में सिद्ध तथा चारणजन तुम्हारा ही दर्शन करते हैं॥

इस प्रकार स्तुति करने के अनन्तर मनुष्यों पर कृपा रखने वाली दुर्गा अर्जुन की भक्ति को समझकर भगवान् कृष्ण के सामने ही आकाश में स्थित होकर बोलीं—

हे पाण्डुनन्दन ! तुम स्वयं नर हो और दुर्धर्ष नारायण तुम्हारा सहायक हैं, अतः तुम थोड़े ही समय में शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर लोगे। रण में शत्रुओं की कौन कहे साक्षात इन्द्र के लिए भी तुम अजेय हो, ऐसा कह कर वरदायिनी देवी उसी क्षण अन्तर्हित हो गईं॥

२६. सिद्धकुञ्चिका स्तोत्रम्

शिव उवाच

शृणुदेवि प्रवक्ष्यामि कुञ्चिकास्तोत्रमुत्तमम्।
येन मंत्र प्रभावेन चण्डीजापः शुभो भवेत्॥१॥
न कवचं नार्गला स्तोत्रं कीलकं न रहस्यकम्।
न सूक्तं नापि ध्यानं च न न्यासो न च वार्चनम्॥२॥
कुंचिकापाठमात्रेण दुर्गापाठफलं लभेत।
अति गुह्यतरं देवि देवानामपि दुर्लभम्॥३॥
गोपनीयं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव पार्वति।
मारणं मोहनं वश्यं स्तम्भनोच्चाटनादिकम्।
पाठमात्रेण संसिद्धयेत कुंचिकास्तोत्रमुत्तमम्॥४॥

अथमंत्र

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे। ॐ ग्लौं हुं क्लीं जूं सः ज्वालय ज्वालय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा॥

नमस्ते रुद्ररूपिण्यै नमस्ते मधुमर्दिनि।
नमः कैटभहारिण्यै नमस्ते महिषार्दिनि॥१॥
नमस्ते शुम्भहन्त्र्यै च निशुम्भासुर घातिनि॥२॥

जाग्रतं हि महादेवि जपं सिद्धं कुरुष्व मे।
ऐंकारी सृष्टिरूपायै ह्रींकारी प्रतिपालिका ॥३॥
क्लींकारि कामरूपिण्यै वीजरूपे नमोऽस्तु ते।
चामुण्डा चण्डघाती च यैकारी वरदायिनी ॥४॥
विच्चे चाभयदा नित्यं नमस्ते मंत्ररूपिणी ॥५॥
धां धीं धूं धूर्जटेः पत्नी वां वीं वूं वागधीश्वरि।
क्रां क्रीं क्रूं कालिका देवि शां शीं शूं मे शुभं कुरु ॥६॥
हुं हुं हुंकाररूपिण्यै जं जं जं जम्भनादिनी।
भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवी भद्रे भवान्यै ते नमो नमः ॥७॥
अं कं चं टं तं पं यं शं वीं दुं ऐं वीं हं क्षं
धिजाग्रं धिजाग्रं त्रोटय त्रोटय दीप्तं कुरु-कुरु स्वाहा ॥
पां पीं पूं पार्वती पूर्णा खां खीं खूं खेचरी तथा ॥८॥
सां सीं सूं सप्तशती देव्या मन्त्रसिद्धिं कुरुष्व मे!
इदं तु कुंचिकास्तोत्रं मंत्रजागर्त्ति हेतवे।
अभक्ते नैव दातव्यं गोपितं रक्ष पार्वति ॥९॥
यस्तु कुंचिकया देवी हीनां सप्तशतीं पठेत्।
न तस्य जायते सिद्धिः अरण्ये रोदनं तथा ॥१०॥

इति रुद्रयामले गौरी तन्त्रे शिवपार्वती संवादे कुंचिकास्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

२७. श्री शंकराचार्य कृतगंगाष्टकम्

भगवति तव तीरे नीर मात्राशनोऽहं
विगत विषयतृष्णः कृष्णमाराधयामि।
सकल कलुषभंगे स्वर्गसोपानसंगे
तरल तर तरंगे देवि गंगे प्रसीद ॥१॥
भगवति भवलीला मौलि माले तवाम्भः
कणमणुपरिमाणं प्राणिनो ये स्पृशन्ति।

अमर नगर नारी चामर ग्राहिणीनां
विगत कलिकलंका तंकमंके लुठन्ति ॥२॥
ब्रह्माण्डं खण्डयन्ती हरशिरसि जटा वल्ली मुल्लासयन्ती।
स्वर्लोकादापतन्ती कनकगिरिगुहागण्ड शैलात् स्खलन्ती।
क्षोणीपृष्ठे लुठन्ति दुरितचय चमूर्निर्भरं भर्त्सयन्ती
पाथोधिं पूरयन्ती सुरनगर सरित्पावनी नः पुनातु ॥३॥
मज्जन्-मातंगकुम्भ च्युतमदमदिरामोहमत्तालिजालं
स्नानैः सिद्धांगनानां कुचयुगलविगलत कुंकुमासंगपिंगम्।
सायं प्रातर्मुनीनां कुश कुसुमचयैः छन्नतीरस्थ नीरं
पायान्नो गांगमम्भः करिकलभकरा क्रान्तरंहः तरंगम् ॥४॥
आदावादि पितामहस्य नियमव्यापारमात्रे जलं
पश्चात् पन्नगशायिनो भगवतः पादोदकं पावनम्।
भूयः शंभुजटा विभूषणमणिः जह्नोः महर्षेरियं
कन्या कल्मषनाशिनी भगवती भागीरथी दृश्यते ॥५॥
शैलान्द्रादवतारिणी निज जले मज्जज्जनोतारिणी
पारावार विहारिणी भवभय श्रेणी समुत्सारिणी।
शेषाहेरनुकारिणी हर शिरो वल्लीदलाकारिणी
काशी प्रान्त विहारिणी विजयते गंगामनोहारिणी ॥६॥
कुतो वीचिर्वीचिः तव यदि गता लोचन पथं।
त्वमापीता पीताम्वरपुर निवासं वितरसि।
त्वदुत्संगे गंगे पतति यदि कायः तनुभृतां
तदा मातः शातक्रतवपद लाभोऽप्यति लघुः ॥७॥
गंगे त्रैलोक्य सारे सकल सुरवधू धौत विस्तीर्ण तोये
पूर्ण ब्रह्मस्वरूपे हरिचरण रजोहारिणी स्वर्ग मार्गे।
प्रायश्चित्तं यदि स्यात् तव जलकणिका ब्रह्म हत्यादि पापे
कस्त्वां स्तोतुं समर्थः त्रिजगदधहरे देवि गंगे प्रसीद ॥८॥

मातर्जाह्नवि शंभुसंगवलिते मालौ निधायांजलिं
त्वत्तीरे वपुषोऽवसान समये नारायणांघ्रिद्वयम्
सानन्दं स्मरतो भविष्यति मम प्राणप्रयाणोत्सवे
भूयात् भक्तिरविच्युता हरिहरा द्वैतात्मिका शाश्वती ॥९ ॥
गंगाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेत्प्रयतो नरः
सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति ॥१० ॥

इति मत्परमहंस परिवाजकाचार्य श्री मच्छंकराचार्य विरचितं
गंगाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२८. श्रीनवग्रह-स्तोत्रम्

जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम्। तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ॥१ ॥ दधिशङ्खतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम्। नमामि शशिनं सोमं शम्भोर्मुकुटभूषणम् ॥२ ॥ धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्कान्ति समप्रभम्। कुमारं शक्तिहस्तं तं मंगलं प्रणमाम्यहम् ॥३ ॥ प्रियंगुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं वुधम्। सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं वुधं प्रणमाम्यहम् ॥४ ॥ देवानां च ऋषीणां च गुरुं कांचनसन्निभम्। बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि वृहस्पतिम् ॥५ ॥ हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम्। सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम् ॥६ ॥ नीलांजनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम्। छायामार्तण्डसंभूतं तं नमामि शनैश्चरम् ॥७ ॥ अर्द्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम्। सिंहिकागर्भसम्भूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ॥८ ॥ पलाशपुष्पसंकाशं तारकाग्रहमस्तकम्। रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम् ॥९ ॥ इति व्यासमुखोद्गीतं यः पठेत् सुसमाहितः। दिवा वा यदि वा रात्रौ विघ्नशान्तिर्भविष्यति ॥१० ॥ नरनारीनृपाणां च भवेद्दुःस्वप्ननाशनम्। ऐश्वर्यमतुलं तेषामारोग्यं पुष्टिवर्धनम् ॥११ ॥

॥ इति श्रीव्यासविरचितं नवग्रह स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

२९. गज़ेन्द्र-मोक्ष-स्तोत्रम्

श्रीशुक उवाच

एवं व्यवसितो बुद्धया समाधाय मनो हृदि।
जजाप परमं जाप्यं प्राग्जन्मन्यनुशिक्षितम् ॥१ ॥

गजेन्द्र उवाच

ॐ नमो भगवते तस्मै यत एतच्चिदात्मकम्। पुरुषायादिवीजाय परेशायाभिधीमहि ॥२ ॥ यस्मिन्निदं यतश्चेदं येनेदं य इदं स्वयम्। योऽस्मात् परस्माच्च परस्तं प्रपद्ये स्वयंभुवम् ॥३ ॥ यः स्वात्मनीदं निजमाययार्पितं, क्वचिद्विभातं क्व च तत्तिरोहितम्। अविद्धदृक् साक्ष्युभयं तदीक्षते, स आत्ममूलोऽवतु मां परात्परः ॥४ ॥ कालेन पञ्चत्वमितेषु कृत्स्नशो लोकेषु पालेषु च सर्वहेतुषु। तमस्तदाऽऽसीद्गहनं गभीरं यस्तस्य पारेऽभिविराजते विभुः ॥५ ॥ न यस्य देवा ऋषयः पदं विदुर्जन्तुः पुनः कोऽर्हति गन्तुमीरितुम्। यथा नटस्याकृतिभिर्विचेष्टतो दुरत्ययानुक्रमणः स मामवतु ॥६ ॥ दिदृक्षवो यस्य पदं सुमङ्गलं विमुक्तसंगा मुनयः सुसाधवः। चरन्त्यलोकव्रतव्रणं वने भूतात्मभूताः सुहृदः स मे गतिः ॥७ ॥ न विद्यते यस्य च जन्म कर्म वा न नामरूपे गुणदोष एव वा। तथापि लोकाप्ययं सम्भवाय यः स्वमायया तान्यनुकालमृच्छति ॥८ ॥ तस्मै नमः परेशाय ब्रह्मणेऽनन्तशक्तये। अरूपायोरुरूपाय नम आश्चर्यकर्मणे ॥९ ॥ नम आत्मप्रदीपाय साक्षिणे परमात्मने, नमो गिरां विदूराय मनसश्चेतसामपि ॥१० ॥ सत्वेन प्रतिलभ्याय, नैष्कर्म्येण विपश्चिताः। नमः कैवल्यनाथाय निर्वाण सुख सम्विदे ॥११ ॥ नमः शान्ताय घोराय मूढ़ाय गुणधर्मिणे। निर्विशेषाय साम्याय नमो ज्ञानघनाय च ॥१२ ॥ क्षेत्रज्ञाय नमस्तुभ्यं सर्वाध्यक्षाय साक्षिणे। पुरुषायात्ममूलाय मूलप्रकृतये नमः ॥१३ ॥ सर्वेन्द्रियगुणद्रष्ट्रे सर्वप्रत्ययहेतवे। असताच्छाययोक्ताय सदाभासाय ते नमः ॥१४ ॥ नमो नमस्तेऽखिलकारणाय निष्कारणायाद्भुतकारणाय। सर्वागमाम्नाय महार्णवाय नमोऽपवर्गाय परायणाय ॥१५ ॥ गुणारणिच्छन्नचिदूष्मपाय, तत्क्षोभविस्फूर्जित-मानसाय। नैष्कर्म्यभावेन विवर्जितागम स्वयं प्रकाशाय नमस्करोमि ॥१६ ॥ मादृक् प्रपन्न पशुपाश विमोक्षणाय मुक्ताय भूरिकरुणाय नमोऽलयाय। स्वांशेन सर्वतनुभृन्मनसि प्रतीत, प्रत्यग्दृशे भगवते वृहते नमस्ते ॥१७ ॥ आत्ममात्मजाप्त गृहवित्त जनेषु सक्तैर्दुष्प्रापणाय गुण-संग विवर्जिताय। मुक्तात्मभिः स्वहृदये परिभाविताय, ज्ञानात्मने भगवते नमः ईश्वराय ॥१८ ॥

यं धर्मकामार्थ-विमुक्ति-कामाः भजन्त इष्टां गतिमाप्नुवन्ति। किं त्वाशिषो रात्यपि देहमव्ययं करोतु मेऽदभ्रदयो विमोक्षणम् ॥१९ ॥ एकान्तिनो यस्य न कञ्चनार्थं, वाञ्छन्ति ये वै भगवत् प्रपन्नाः। अत्यद्भुतं तच्चरितं सुमङ्गलं, गायन्त आनन्द समुद्रमग्नाः ॥२० ॥ तमक्षरं ब्रह्म परं परेशमव्यक्तमाध्यात्मिक योग गम्यम्। अतीन्द्रियं सूक्ष्ममिवाति दूरमनन्तमाद्यं परिपूर्णमीडे ॥२१ ॥ यस्य ब्रह्मादयो देवा वेदा लोकाश्चराचराः। नाम-रूप-बिभेदेन फल्गव्या च कलया कृताः ॥२२ ॥ यथार्चिषोऽग्नेः सवितुर्गभस्तयो निर्यान्ति संयान्त्यस-कृत्स्वरोचिषः। तथा यतोऽयं गुणसम्प्रवाहो बुद्धिर्मनःखानि शरीरसर्गाः ॥२३ ॥ स वै न देवासुरमर्त्यतिर्यङ् न स्त्री न षण्ढो न पुमान्न जन्तुः। नायं गुणः कर्म न सन्न चासन्निषेधशेषो जयतादशेषः ॥२४ ॥ जिजीविषे नाहमिहामुया किमन्तर्वहिश्चावृतयेभयोन्या इच्छामि कालेन न यस्य विप्लवस्तस्यात्म लोकावरणस्य मोक्षम् ॥२५ ॥ सोऽहं विश्व सृजं विश्वमविश्वं विश्ववेदसम्। विश्वात्मानमजं ब्रह्म प्रणतोऽस्मि परं पदम् ॥२६ ॥ योग रन्धित कर्माणो हृदि योग विभाविते। योगिनो यं प्रपश्यन्ति योगेशं तं नतोऽस्म्यहम् ॥२७ ॥ नमो नमस्तुभ्यमसह्य-वेग-शक्ति त्रयायाऽखिल धीगुणाय। प्रपन्न-पालाय दुरन्त शक्तये कदिन्द्रियाणामनवाप्य वर्त्मने ॥२८ ॥ नायं वेद स्वमात्मानं यच्छक्त्याहं धिया हृतम्। तं दुरत्यय-माहात्म्यं भगवन्तमितोस्म्यहम् ॥२९ ॥

श्रीशुक उवाच

एवं गजेन्द्रमुपवर्णित-निर्विशेषं, ब्रह्मादयो विविधलिङ्गभिदाभिमानाः। नैते यदोप-ससृपुर्निखिलात्मकत्वात्तत्राखिलामरमयो हरिराविरासीत् ॥ तं तद्वदार्त्तमुपलभ्य जगन्निवासः स्तोत्रं निशम्य दिविजैः सह संस्तुवद्भिः। छन्दोमयेन गरुडेन समुह्यमानश्चक्रायुधोऽभ्यगमदाशु यतो गजेन्द्रः ॥३१ ॥ सोऽन्तः सरस्युरुबलेन गृहीत आर्तो दृष्ट्वा गरुत्मति हरिं ख उपात्तचक्रम्। उत्क्षिप्य साम्बुजकरं गिरमाह कृच्छ्रान्नारायणाखिल गुरो भगवन् नमस्ते ॥३२ ।। तं वीक्ष्य पीडितमजः सहसावतीर्य, सग्राहमाशु सरसः कृपयोज्जहार। ग्राहा द्विपाटित-मुखादरिणा गजेन्द्रं संपश्यतां हरिरमूमुचदुस्त्रियाणाम् ॥३३ ॥

॥ इति श्रीमद्भागवते अष्टमस्कन्धे गजेन्द्रमोक्षस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

३०. तुलसीस्तोत्रम्

जगद्धात्रि नमस्तुभ्यं विष्णोश्च प्रियवल्लभे।
यतो ब्रह्मादयो देवा सृष्टिस्थित्यन्तकारिणः ॥१॥
नमस्तुलसि कल्याणि नमो विष्णुप्रिये शुभे।
नमो मोक्षप्रदे देवि नमः सम्पत्प्रदायिके ॥२॥
तुलसी पातु मां नित्यं सर्वापद्भ्योऽपि सर्वदा।
कीर्तितापि स्मृता वापि पवित्रयति मानवम् ॥३॥
नमामि शिरसा देवीं तुलसीं विलसत्तनुम्।
यां दृष्ट्वा पापिनो मर्त्या मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषात् ॥४॥
तुलस्या रक्षितं सर्वं जगदेतच्चराचरम्।
या विनिहन्ति पापानि दृष्ट्वा वा पापिभिर्नरैः ॥५॥
नमस्तुलस्यतितरां यस्यै बध्वाञ्जलिं कलौ।
कलयन्ति सुखं सर्वं स्त्रियो वैश्यास्तथाऽपरे ॥६॥
तुलस्या नापरं किंचिद्दैवतं जगतीतले।
यथा पवित्रितो लोको विष्णुसंगेन वैष्णवः ॥७॥
तुलस्याः पल्लवं विष्णोः शिरस्यारोपितं कलौ।
आरोपयति सर्वाणि श्रेयांसि वरमस्तके ॥८॥
तुलस्यां सकला देवाः वसन्ति सततं यतः।
अतस्तामर्चयेल्लोके सर्वान् देवान् समर्चयन् ॥९॥
नमस्तुलसि सर्वज्ञे पुरुषोत्तमवल्लभे।
पाहि मां सर्वपापेभ्यः सर्वसम्पत्प्रदायिके ॥१०॥
इति स्तोत्रं पुरा गीतं पुण्डरीकेण धीमता।
विष्णुमर्चयता नित्यं शोभनैस्तुलसीदलैः ॥११॥
तुलसी श्रीर्महालक्ष्मीर्विद्याविद्या यशस्विनी।
धर्म्या धर्मानना देवी देवीदेवमनः प्रिया ॥१२॥

लक्ष्मीप्रियसखी देवी द्यौर्भूमिरचला चला।
षोडशैतानि नामानि तुलस्याः कीर्तयन्नरः ॥१३॥
लभते सुतरां भक्तिमन्ते विष्णुपदं लभेत्।
तुलसी भूर्महालक्ष्मीः पद्मिनी श्रीर्हरिप्रिया ॥१४॥
तुलसि श्रीसखि शुभे पापहारिणि पुण्यदे।
नमस्ते नारदनुते नारायणमनः प्रिये ॥१५॥

॥ श्रीपुण्डरीककृतं तुलसीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

३१. सप्तश्लोकी गीता

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन्। यः प्रयाति त्यजन् देहं स याति परमां गतिम् ॥१॥ स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च। रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्ध संघाः ॥२॥ सर्वतः पाणिपादं तत् सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्। सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥३॥ कविं पुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः। सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूपमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥१४॥ ऊर्ध्वमूलमधः-शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्। छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥५॥ सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च। वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ॥६॥ मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु। मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥७॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन-सम्वादे सप्तश्लोकी गीता सम्पूर्णा।

इक्यावन शक्तिपीठ रहस्य

दक्षके यज्ञ में शिवका निमन्त्रण न होने से उनका अपमान जानकर सतीने उस देहको त्याग कर हिमवत्पुत्री पार्वती के रूप में शिवपत्नी होने का निश्चय किया और योग बल से देह त्याग दिया। समाचार विदित होने पर शिवजी को बड़ा क्षोभ और मोह हुआ। दक्ष यज्ञ को नष्ट करके सतीके शव को लेकर शिवजी घूमते रहे। सम्पूर्ण देवताओं ने या सर्वदेवमय विष्णु ने शिवमोहशान्ति एवं साधकों के सिद्धि आदि कल्याण के लिये शव के भिन्न-भिन्न अंगों को भिन्न-भिन्न स्थलों में गिरा दिया, वे ही ५१ पीठ हुए।

हृदय से ऊर्ध्व भाग के अङ्ग जहां पतित हुए, वहां वैदिक एवं दक्षिण मार्ग की सिद्धि होती है और हृदय से निम्न भाग के अङ्गों के पतन स्थलों में वाममार्ग की सिद्धि होती है। १—सतीकी योनिका जहां पात हुआ, वहां काम रूप नामक पीठ हुआ, वह 'अकार' का उत्पत्ति स्थान एवं श्रीविद्या से अधिष्ठित है। यहां कौलशास्त्र से अणिमादि सिद्धियां होती हैं। लोम से उत्पन्न इसके वंश नामक दो उपपीठ हैं, वहां शाबरमन्त्रों की सिद्धि होती है। २—स्तनों के पतनस्थल में काशिकापीठ हुआ और वहां से 'आकार' उत्पन्न हुआ। वहां देह त्याग करने से मुक्ति प्राप्त होती है। सतीके स्तनों से दो धाराएं निकलीं, वे ही असी और वरणा नदी हुईं। असी के तीर पर दक्षिण-सारनाथ एवं वरणा के उत्तर में उत्तर-सारनाथ उपपीठ है। वहां क्रमशः दक्षिण एवं उत्तर मार्ग के मन्त्रों की सिद्धि होती हैं। ३—गुह्यभाग जहां पतित हुआ, वहां नेपाल पीठ हुआ ; वहां से 'इकार' की उत्पत्ति हुई। वह पीठ वाममार्ग का मूलस्थान है। वहां ५६ लाख भैरव-भैरवी, दो हजार शक्तियां, तीन सौ पीठ एवं चौदह श्मशान संनिहित हैं। वहां चार पीठ दक्षिण-मार्ग के सिद्धिदायक हैं। उनमें से भी चार में वैदिक मन्त्र सिद्ध होते हैं। नेपाल से पूर्व में मल का पतन हुआ, अतः वहां किरातों का निवास हुआ। तीस हजार देवयोनियों का वहां निवास है। ४—वामनेत्र का पतन स्थान रौद्र पर्वत है, वह महत्पीठ हुआ, 'ईकार की' उत्पत्ति वहां से हुई। वामाचार से वहां मन्त्रसिद्धि होकर देवता का दर्शन होता है। ५—वामकर्ण के पतन स्थान में काश्मीरपीठ हुआ, वहां 'उकार' का उत्पत्ति स्थान है। वहां सर्वविध मन्त्रों की सिद्धि होती है। वहां अनेक अद्‌भुत तीर्थ हैं, किन्तु कलि में सब म्लेच्छों द्वारा आवृत कर दिये जायेंगे। ६—दक्षिणकर्ण के पातस्थल में कान्यकुब्जपीठ हुआ, और 'ऊकारकी' उत्पत्ति हुई। गङ्गा-यमुना के मध्य में अन्तर्वेदी नामक पवित्र स्थल में ब्रह्मादि देवों ने स्वत्व तीर्थों का निर्माण किया है। वहां वैदिक मन्त्रों की सिद्धि होती है। कर्ण के मल के पतन स्थान में यमुना-तट पर इन्द्रप्रस्थ नामक उपपीठ हुआ, उसके प्रभाव से विस्मृत वेद ब्रह्मा को वहां पुनः उपलब्ध हुए। ७—नासिका के पतन स्थान में पूर्णगिरिपीठ है, वह 'ऋकारका' उत्पत्ति स्थल है। वहां योगसिद्धि होती है और मन्त्राधिष्ठातृदेव प्रत्यक्ष दर्शन देते हैं। ८—वामगण्डस्थल की पतन भूमि पर अर्बुदाचल पीठ हुआ और 'ॠकार' का प्रादुर्भाव हुआ। वहां अम्बिका नाम की शक्ति है तथा वाममार्ग की सिद्धि होती है। दक्षिण-मार्ग में यहां विघ्न होते हैं। ९—दक्षिण गण्डस्थल के पतन स्थान में अमृतकेश्वरपीठ हुआ तथा 'लृकार' की उत्पत्ति हुई। वह धनदादि तक्षिणियों का निवास स्थान है।

१०—नखों के पतन स्थल में एकाम्रपीठ हुआ तथा 'लृकार' की उत्पत्ति हुई। वह पीठ विद्याप्रदायक है। ११—त्रिवलिके पतन स्थल में त्रिलोक्यपीठ हुआ और वहां 'एकार' का जन्म हुआ। वस्त्र तीन खण्ड उसके पूर्व, पश्चिम तथा दक्षिण में गिरे ये तीन उपपीठ हुए। गृहस्थ द्विजको पौष्टिक मन्त्रों की सिद्धि वहां होती है। १२—नाभिकी पतनभूमि ज्ञानकोटिपीठ हुई, वहां 'ऐकार' का प्रादुर्भाव हुआ। समस्तवाममन्त्रों की सिद्धि वहां होती है। उसकी चारों दिशाओं में उपपीठ हैं, जहां अप्सराएं निवास करती हैं। १३—अंगुलियों के पतन स्थल हिमालय पर्वत में कैलासपीठ हुआ तथा 'ओंकार' का प्राकट्य हुआ। अङ्गुलियां ही लिङ्गरूप में प्रतिष्ठित हुईं। वहां करमाला से मन्त्रजप करने पर तत्क्षण सिद्धि होती है। १४—दन्तों के पतन स्थल में भृगुपीठ हुआ वहां से 'औंकार' का प्रादुर्भाव हुआ। वैदिकादि मन्त्र वहां सिद्ध होते हैं। १५—दक्षिण करतल के पतन स्थान में केदारपीठ हुआ। वहां 'अं' की उत्पत्ति हुई। उसके दक्षिण में कङ्कण के पतन स्थान में अगस्त्याश्रमनाम सिद्ध उपपीठ हुआ और उसके पश्चिम में मुद्रिका के पतन स्थल में इन्द्राक्षी उपपीठ हुआ। उसके पश्चिम में बलल के पतन स्थान में रेवती-तटपर राजराजेश्वरी उपपीठ हुआ तथा १६—वामगण्डकी निपात भूमि पर चन्द्रपुरपीठ हुआ तथा 'अ' की उत्पत्ति हुई। सभी मन्त्र वहां सिद्ध होते हैं।

१७—जहां मस्तक का पतन हुआ, वहां श्रीपीठ हुआ तथा 'अकार' का प्रादुर्भाव हुआ। कलि में पापी जीवों का वहां पहुंचना दुर्लभ है। उसके पूर्व में कर्णाभरण के पतन से उपपीठ हुआ, जहां ब्रह्मविद्या-प्रकाशिका ब्राह्मी शक्ति का निवास है। उससे अग्नि कोण में कर्णार्द्धाभरण के पतन से दूसरा उपपीठ हुआ, जहां मुखशुद्धिकरी माहेश्वरीशक्ति है। दक्षिण में पत्रवल्ली की पातभूमि में कौमारी शक्तियुक्त तीसरा उपपीठ हुआ। नैर्ऋत्य में कण्ठमाल के निपात स्थल में ऐन्द्रजालविद्या-सिद्धिप्रद वैष्णवी शक्तिसमन्वित चौथा उपपीठ हुआ। पश्चिम में नासा-मौक्तिक के पतन स्थान में बाराही-शक्त्यधिष्ठित पांचवां उपपीठ हुआ। वायु कोण में मस्तकाभरण के पतन स्थान में चामुण्डा-शक्तियुक्त क्षुद्रदेवता-सिद्धिकर छठा उपपीठ हुआ और ईशान के केशाभरण के पतन से महालक्ष्मी द्वारा अधिष्ठित सातवां उपपीठ हुआ। १८—उसके ऊपर में कञ्चुकीकी पतन भूमि में एक और पीठ हुआ, जो ज्योतिर्मन्त्र-प्रकाशक एवं ज्योतिष्मतीद्वारा अधिष्ठित है। वहां 'खकार' का प्रादुर्भाव हुआ। वह पीठ नर्मदाद्वारा अधिष्ठित है, वहां तप करने वाले महर्षि जीवन्मुक्त हो गये। १९—वक्षः स्थल के पातस्थल में एक पीठ हुआ और 'खकार' की उत्पत्ति हुई। अग्नि ने वहां तपस्या की और देवमुखत्व को प्राप्त होकर ज्वालामुखी संज्ञक उपपीठ में स्थित हुए। २०—वामस्कन्ध के पतन स्थान में माल व पीठ हुआ, वहां 'घकार' की उत्पत्ति हुई। गन्धर्वोंने रागज्ञान के लिये तपस्याकर वहां सिद्धि पायी। २१—दक्षिणकक्षका जहां पात हुआ,वहां कुलान्तकपीठ हुआ, एवं 'डकार' की उत्पत्ति हुई। विद्वेषण, उच्चाटन, मारण के प्रयोग वहां सिद्ध होते हैं। २२—जहां वामकक्षका पतन हुआ, कोट्टकपीठ हुआ और 'चकार' का प्राकट्य हुआ। वहां राक्षसों ने सिद्धि प्राप्त की है। २३—जठरदेशके पतन स्थल में गोकर्णपीठ हुआ तथा 'छकार' की उत्पत्ति हुई। २४—प्रथम वल्लि का जहां निपात हुआ, वहां मातुरेश्वरपीठ होकर 'जकार' की उत्पत्ति हुई, वहां शैवमन्त्र शीघ्र सिद्ध होते हैं। २५—अपर वल्लि के पतन स्थान में अट्टहासपीठ

हुआ तथा 'झकार' का प्रादुर्भाव हुआ, वहां गणेश-मन्त्रों की सिद्धि होती है। २६–तीसरी वल्लि का जहां पतन हुआ, वहां विरजपीठ हुआ और 'ञकार' की उत्पत्ति हुई। वह पीठ विष्णु मन्त्रों का सिद्धिप्रदायक है। २७—जहां बस्तिपात हुआ, वहां राजगृहपीठ तथा 'टकार' की उत्पत्ति हुई। नीचे क्षुद्रघण्टिका के पतन स्थल में घण्टिका नामक उपपीठ हुआ, वहां ऐन्द्रजालिक मन्त्र सिद्ध होते हैं। राजगृह में वेदार्थज्ञान की प्राप्ति होती है। २८—नितम्बके पतन स्थल में महापथपीठ हुआ तथा 'ठकार' की उत्पत्ति हुई। जातिदुष्ट ब्राह्मणों ने वहां शरीर अर्पित किया और दूसरे जन्म में कलियुग में देहसौख्यदायक वेदमार्ग-प्रलुम्पक अघोरादि मार्ग को चलाया। २९—जघनका जहां पात हुआ, वहां कौलगिरिपीठ हुआ और 'डकार' की उत्पत्ति हुई। वन-देवताओं के मन्त्रों की वहां सिद्धि शीघ्र होती है। ३०—दक्षिण ऊरुके पतन स्थल में एलापुरपीठ हुआ तथा 'ढकार' का प्रादुर्भाव हुआ। ३१—वाम ऊरुके पतन स्थान में कालेश्वर पीठ हुआ तथा 'णकार' की उत्पत्ति हुई। वहां आयुर्वृद्धिकारक मृत्युञ्जयादि मन्त्र सिद्ध होते हैं। ३२—दक्षिण जानुके पतन स्थान में जयन्तीपीठ होकर 'तकार' की उत्पत्ति हुई। वहां धनुर्वेद की सिद्धि अवश्य होती है। ३३—वाम-जानु जहां पतित हुआ, वहां उज्जयिनीपीठ हुआ तथा 'थकार' प्रकट हुआ, वहां कवचमन्त्रों की सिद्धि होकर रक्षण होता है। अतः उसका नाम 'अवन्ती' है। ३४—दक्षिण जङ्घा के पतन स्थान में योगिनी पीठ हुआ तथा 'दकार' की उत्पत्ति हुई। वहां कौलिक मन्त्रों की सिद्धि होती है। ३५—वामजङ्घाकी पतन भूमि पर क्षीरिका पीठ होकर 'थकार' का प्रादुर्भाव हुआ। वहां वैतालिक तथा शबर मन्त्र सिद्ध होते हैं। ३६—दक्षिण गुल्फके पतन स्थान में हस्तिनापुरपीठ हुआ तथा नकार की उत्पत्ति हुई। वहीं नूपुरका पतन होने में नूपुरार्णवसंज्ञक उपपीठ हुआ, वहां सूर्यमन्त्रों की सिद्धि होती है।

३७—वामगुल्फ के पतन स्थल में उड्डीशपीठ होकर 'पकार' का प्रादुर्भाव हुआ। उड्डीशाख्य महातन्त्र वहां सिद्ध होता है। जहां दूसरे नूपुरका पतन हुआ, वहां डामर उपपीठ हुआ। ३८—देह-रसके पतन-स्थान में प्रयागपीठ हुआ तथा 'फकार' की उत्पत्ति हुई। वहां मृत्तिका श्वेतवर्ण की दृष्टिगोचर होती है। वहां अन्यान्य अस्थियों का पतन होने से अनेक उपपीठों का प्रादुर्भाव हुआ। गङ्गा के पूर्व में बगलोपपीठ एवं उत्तर में चामुण्डादि उपपीठ, गङ्गा-यमुना में राजराजेश्वरी संज्ञक तथा यमुना के दक्षिण तटपर भुवनेशी नामक उपपीठ हुआ। इसलिये प्रयाग तीर्थराज एवं पीठराज कहा गया है। ३९—दक्षिण पृष्णि के पतन स्थान में पष्ठीशपीठ हुआ एवं बकार' का प्रादुर्भाव हुआ। यहां पादुकामन्त्र की सिद्धि होती है। ४०—वामपृष्णि का जहां पात हुआ, वहां मायापुरपीठ हुआ तथा 'भकार' की उत्पत्ति हुई, समस्त मायाओं की सिद्धि वहां होती है। ४१—रक्त के पतन स्थान में मलयपीठ हुआ एवं 'मकार' की उत्पत्ति हुई। रक्ताम्बरादि बौद्धों के मन्त्र यहां सिद्ध होते हैं। ४२—पित्तकी पतन भूमि पर श्रीशैलपीठ हुआ तथा 'यकार' का प्रादुर्भाव हुआ। विशेषतः वैष्णव मन्त्र यहां सिद्ध होते हैं। ४३—मेदके पतन स्थान में हिमालय पर मेरुपीठ हुआ एवं 'रकार' की उत्पत्ति हुई। स्वर्णाकर्षण भैरव की सिद्धि वहां होती है। ४४—जहां जिह्वाग्रका पतन हुआ, वहां गिरिपीठ हुआ तथा 'लकार' की उत्पत्ति हुई। यहां जप करने से वाक्सिद्धि होती है। ४५—मज्जा के पतन स्थान में माहेन्द्रपीठ हुआ, वह 'बकार' के प्रादुर्भाव का स्थान है, यहां शाक्तमन्त्रों

के जपसे अवश्य सिद्धि होती है। ४६—दक्षिण अंगुष्ठ के पातस्थल में वामनपीठ हुआ एवं 'शकार' की उत्पत्ति हुई, यहां समस्त मन्त्रों की सिद्धि होती है। ४७—वामाङ्गुष्ठ के निपतन स्थान में हिरण्यपुरपीठ हुआ तथा 'षकार' की उत्पत्ति हुई। वहां वाममार्ग से सिद्धिलाभ होता है। ४८—रुचि (शोभा) के पतन स्थान में महालक्ष्मीपीठ हुआ एवं 'सकार' का प्राकट्य हुआ। यहां सर्वसिद्धियां होती हैं। ४९—धमनी के पतन स्थल में अत्रिपीठ हुआ, वहां 'हकार' की उत्पत्ति हुई तथा यावत् सिद्धियां होती हैं। ५०—छाया के सम्पात स्थान में छायापीठ हुआ, एवं 'लकार' की उत्पत्ति हुई। ५१—केशपात के पतन स्थल में क्षत्रपीठ का प्रादुर्भाव हुआ, यहीं 'क्षकार' का उद्गम हुआ। यहां समस्त सिद्धियां शीघ्र प्राप्त होती हैं।

बलि वैश्वदेव पद्धति

रसोई तैयार होने पर प्रथमवैश्वदेव के निमित्त पाक ले मण्डल बनाकर संकल्पवाक्य के अन्त में "मम गृहे पञ्चसूनाजनितसकलदोषपरिहारपूर्वकनित्यकर्मानुष्ठानसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं बलिवैश्वदेवाख्य-महायज्ञं करिष्ये" कहकर संकल्प करे। पश्चात् अग्नि पात्र में ७, जलपात्र के समीप ३ और मण्डल में २० आहुतियां अंकों के स्थान पर देवें।

नोट—यजमान के लिए करे तो उसका गोत्र तथा नाम उच्चारण कर "मम" की जगह यजमान का गोत्र तथा नाम कहकर संकल्प के अन्त में "करिष्ये" की जगह करिष्यामि कहे।

अग्नि में (नमक रहित दें)

ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे न मम। ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्र०। ॐ गृह्याभ्यः स्वाहा इदं गृ०। ॐ कश्यपाय स्वाहा इदं क०। ॐ अनुमतये स्वाहा इदं अ०। ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा इदं वि०। ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदं अ०॥ (जलपात्र के समीप)। ॐ पर्जन्याय नमः इदं पर्जन्याय न मम। ॐ अद्भ्यो नमः इदं अ०। ॐ पृथिव्यै नमः इदं पृ०॥

मण्डल में

ॐ धात्रे नमः इदं धात्रे न मम १। ॐ विधात्रे नमः इदं वि० २।

ॐ वायवे नमः इदं वा० ३। ॐ वायवे नमः इदं वा० ४।

ॐ वायवे नमः इदं वा० ५। ॐ वायवे नमः इदं वा० ६।

ॐ प्राच्यै नमः इदं प्रा० ७। ॐ अवाच्यै नमः इदं अ० ८।

ॐ प्रतीच्यै नमः इदं प्र० ९। ॐ उदीच्यै नमः इदं उ० १०।

ॐ ब्रह्मणे नमः इदं ब्र० ११। ॐ अन्तरिक्षाय नमः इदं अ० १२।

ॐ सूर्याय नमः इदं सू० १३। ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः इदं वि० १४।

ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः इदं वि० १५। ॐ उषसे नमः इदं उ० १६।

ॐ भूतानां पतये नमः इदं भू० १७। (कण्ठी कृत्वा) ॐ हन्त ते सनकादि मनुष्येभ्यो नमः इदं हन्त० १८। (अपसव्य) ॐ पितृभ्यः स्वधा नमः इदं० पि० १९॥ (सव्य होकर बचे हुए अन्न से) ॐ यक्ष्मैतत्ते निर्णेजनं नमः इदं य० २०॥

पञ्चबलि (सव्य होकर कर)

गोग्रास—(पत्ते दार)—सौरभेय्यः सर्वहिताः पवित्राः पुण्यराशयः।
प्रतिगृह्णन्तु मे ग्रासं गावस्त्रैलोक्यमातरः॥
इदमन्नं गोभ्यो नमः॥

श्वानवलि मन्त्र—(पत्ते पर)—द्वौ श्वानौ श्यामधवलौ वैवस्वतकुलोदभवौ।
ताभ्यामन्नं प्रदास्यामि स्यातामेतावहिंसकौ॥
इदमन्नं श्वभ्यां नमः॥

काकवलि मन्त्र—(पृथ्वी पर)—ऐन्द्रवारुणवाव्याः याम्या वै नैर्ऋतास्तथा ।
वायसाः प्रतिगृह्णन्तु भूमावन्नं मयार्पितम् ।
इदमन्नं वायसेभ्यो नमः ॥

अतिथिवलिमन्त्र—(पत्ते पर)—देवा मनुष्याः पशवोवयांसि सिद्धाश्च यक्षोरगदैत्यसंघा ।
प्रेताः पिशाचास्तरवः समस्ता ये चान्नमिच्छन्ति मया प्रदत्तम् ।
इदमन्नं देवादिभ्यो नमः ॥

पिपीलिकादिवलि मन्त्र—(पत्ते पर)—
पिपीलकाः कीटपतङ्गकाद्याः बुभुक्षिताः कर्मनिबन्धबद्धाः ।
तृप्त्यर्थमन्नं हि मया प्रदत्तं तेषामिदं ते मुदिता भवन्तु ॥
इदमन्नं पिपीलिकादिभ्यो नमः ।

ईशानकोण	दक्षिण	अग्निकोण
अग्नि पात्र०		
ॐ ब्रह्मणे स्वाहा। ॐ प्रजापतये स्वाहा २ । ॐ गृह्याभ्यः स्वाहा ३ । ॐ कश्यपाय स्वाहा ४ । ॐ अनुमतये स्वाहा ५ । ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा ६ । ॐ अग्नये स्विष्टकृतेस्वाहा ७ ।	मण्डल । ७. प्राच्यैनमः ३ वायवेनमः	पूर्व

विधात्रे नमः २	१ धात्रे नमः
(कण्ठी कृत्वा) १८	१३ सूर्याय नमः
हन्त ते सनकादि मनुष्येभ्यो नमः	१२ अन्तरिक्षाय नमः
भूतानां पतये नमः १७	११ ब्रह्मणे नमः
उषसे नमः १६	१२ विश्वेभ्यो भूतेभ्योनमः
	१४ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः
६ वायवे नमः	वायवे नमः ४
१० उदीच्यै नमः	अवाच्यै नमः ८
(सव्य) २० यक्ष्मैतत्तै निर्णेजनंनमः	अपसव्य (पितृभ्यः स्वधानमः १९
५ वायवे नमः	
९ प्रतीच्यै नमः	

गोग्रास, श्वान, काक, अतिथि, पिपीलिकादि पञ्चबलि ।

वायव्यनकोण	उत्तर	नैर्ऋत्यकोण
पर्जन्याय नमः १० जलपात्र		
अद्भ्यो नमः ३		
पृथिव्यै नमः ३		

श्राद्ध विधि

श्राद्धकर्त्ता श्राद्ध के उपयुक्त वेदपाठी ब्राह्मणों को पहले दिन निमन्त्रित करे। वार्षिक तिथि को एकोद्दिष्ट और महालय तथा पर्व में पार्वणादि श्राद्ध करे। यदि इस प्रकार नहीं कर सके तो पितृ-तृप्ति के लिए सांकल्पिक श्राद्ध तथा तर्पण अवश्य करे। श्राद्ध के समय लोहे के पात्र में पाकादि न रखे। तथा लोहे का पात्र किसी काम में न ले।

न जातुकुसुमैर्विद्वान् विल्वपत्रैश्च नार्चयेत्। सुरभिनागकर्णाद्यैर्ह्यारिकांचनारकैः। विल्वपत्रैर्नार्चयेत्तान् पितृन् श्राद्धविगर्हितैः। तद्भुञ्जन्त्यसुराः श्राद्धं निराशैः पितृभिर्गतम्। सर्वाणि रक्तपुष्पाणि निषिद्धान्यपराणि तु। वर्जयेत् पितृश्राद्धेषु केतकीकुसुमानि च ॥ वृ० पा० स्म० ॥

श्राद्ध में बेलपत्र, मालती, चम्पा, नागकेशर, कनेर, गुल्हर, कचनार, केतकी और समस्त लाल पुष्प वर्जित हैं। इन पुष्पों से पूजन करने से पितरों को नहीं मिलता है, उसे राक्षस ग्रहण करते हैं। श्राद्ध में श्वेत पुष्प पूजन में शुभ हैं।

खञ्जो वा यदि वा काणो दातुः प्रेष्योऽपि वा भवेत्।
दीनातिरिक्त गात्रो वा तमप्यपनयेत् पुनः ॥ मनुस्मृतिः ॥

श्राद्धों में लंगड़ा, काना, दाता का दास, अंगहीन और अधिक अंग वाला निषिद्ध है।

अश्रून् गमयति प्रेतान् कोपोऽरीननृतं शुनः।
पादस्पर्शस्तु रक्षांसि दुष्कृतानिवधूननम्॥ मनु० ॥

श्राद्ध के समय आंसू आ जाने से पाक प्रेतों के लिए, क्रोध में शत्रुओं के लिए, झूठ बोलने से कुत्तों के लिये, पैर से छूने पर राक्षसों के लिए और पाक उछालने से पापियों को मिलता है।

चतुर्दश्यष्टमी चैव अमावस्या च पूर्णिमा।
पर्वाण्येतानि राजेन्द्र रविसंक्रान्तिमेव च॥
यत्फलं कपिलादाने कार्तिक्यां ज्येष्ठपुष्करे।
तत्फलं पांडवश्रेष्ठ विप्राणां पादशौचने॥

हे पाण्डवश्रेष्ठ ! कार्तिकी पूर्णिमा के दिन पुष्करतीर्थ में कपिला गौ के दान का जो फल प्राप्त होता है वही फल ब्राह्मण के चरण प्रक्षालन से मिलता है।

श्राद्ध (पितृ-श्राद्ध)

श्राद्धकर्ता आसन पर पूर्वाभिमुख बैठकर दूसरा वस्त्र ले बाईं अनामिका अंगुली की जड़ में तीन और दाहिनी में दो कुशा की पवित्री पहिन कर आचमन करके तीन कुशाओं को सीधी बांट कर ग्रंथि लगा अग्रभाग पूर्व में रखते हुए नीचे लिखे मन्त्र से पाक तथा सामग्री को पवित्र करे।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥
दृष्टिस्पर्शनदोषात् पाकादीनां पवित्रतास्तु॥

बाएं हाथ में पीली सरसों को रखकर नीचे लिखा मन्त्र बोले।

ॐ नमो नमस्ते गोविन्द पुराणपुरुषोत्तम।
इदं श्राद्धं हृषीकेश रक्ष त्वं सर्वतो दिशः॥

पश्चात् उन सरसों को दाहिने हाथ से "ॐ प्राच्यै नमः" (पूर्व में) "ॐ अवाच्यै नमः" (दक्षिण में) "ॐ प्रतीच्यै नमः" (पश्चिम में) "ॐ उदीच्यै नमः" (उत्तर में) "ॐ अन्तरिक्षाय नमः" (ऊपर) "ॐ भूम्यै नमः" (नीचे) छोड़े।

जौं और पुष्पों से "भूम्यै नमः" बोलता हुआ तीन वार पृथ्वी का पूजन करे। गायत्री तथा नीचे लिखा मन्त्र तीन बार जपे।

ॐ देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च।
नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमोनमः॥

पिता के श्राद्ध का प्रतिज्ञा संकल्प

पितुः की जगह, दादा को "पितामहस्य" परदादा को "प्रपितामहस्य" कहे। ॐ अद्य विक्रमसम्वत्सरे (अमुक संख्यके) (अमुक) मासे (अमुक) पक्षे (अमुक) तिथौ (अमुक) वासरे (अमुक) गोत्रस्य अस्मत् पितुः (अमुक) पितरों के नाश के अन्त में ब्रह्मण को शर्मणः क्षत्रिय को वर्मणः, वैश्य को गुप्तस्य कहे) सांकल्पिक श्राद्धं तदंगत्वेन बलिवैश्व-देवाख्यं पञ्चबलि कर्म च करिष्ये।

बलिवैश्वदेव तथा पञ्चबलि पीछे लिखे अनुसार करे।

अपसव्य तथा दक्षिण मुख होकर बायां घुटना मोड़कर पितृलोक से आ रहे हैं, ऐसे पिता का ध्यान कर नीचे लिखा संकल्प आसन (पार्वण में) पर छोड़े।

पिता की जगह पितुः, दादा को 'पितामहस्य' परदादा को 'प्रपितामहस्य' ऐसा कहे।

अद्य (अमुक), गोत्रस्य पितुः अमुक (शर्मणः, वर्मणः, गुप्तस्य) सांकल्पिक, श्राद्धे इदं आसनं ते स्वधा।

गन्धादि

आसन पर गन्ध, पुष्प, पान सुपारी, सिंदूर और वस्त्रादि रखे।

पाक लेकर नीचे लिखे मन्त्र से बाईं ओर भूस्वामी के निमित्त पृथ्वी पर रखे।

इदमन्नमेतद् भूस्वामि-पितृभ्यो नमः।

पात्र में पाकादि परोस कर पाक के ऊपर मधु लगा के पितृ पार्वण सम्मुख रखे। उस पात्र के पूर्व में चल पात्रादि तथा पत्ते पर घृत रखने के पश्चात् पितृ आसन तथा अन्न पात्रादि के चारों ओर जल से मण्डल करे। फिर पात्र का स्पर्श करते हुए बायां हाथ अपनी दाहिनी ओर उल्टा, उस पर दाहिना हाथ बाईं ओर उलटा रखकर नीचे लिखा मन्त्र बोले—

ॐ पृथिवी ते पात्रं द्यौरपिधानं ब्राह्मणस्य मुखे अमृते अमृतं जुहोमि स्वाहा। ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्य पा॰सुरे॥ ॐ कृष्णकव्यमिदं रक्ष मदीयम्।

बाएं हाथ को वैसे ही रखते हुए दाहिने हाथ के अंगूठे से अन्नादि का स्पर्श करे। "इदमन्नम्" (पाकस्पर्श) "इमा आपः" (जलस्पर्श) "इदमाज्यम्" (घृतस्पर्श) "इदं हविः" (फिर पाक स्पर्श करे) पाक की रक्षा के लिये नीचे लिखे वाक्य से पात्र के बाहर तिल छोड़े।

ॐ अपहता असुरा रक्षाꣳसि वेदिषदः।

पाक का संकल्प

पिता की जगह पित्रे, दादा को "पितामहाय" परदादा को "प्रपितामहाय" ऐसा कहे। ॐ अद्य (अमुक) गोत्राय पित्रे (अमुक) (शर्मणे, वर्मणे, गुप्ताय) सांकल्पिक-श्राद्धे इदमन्नं परिविष्टं परिविष्यमाणं ब्राह्मण-भोजनतृप्तिपर्यन्तं सोपकरणं ते स्वधा।

"सव्य" तथा "पूर्वाभिमुख" होकर अंजलि पूर्वक आशीर्वाद के लिये प्रार्थना करे।

ॐ गोत्रं नो वर्द्धतां दातारो नोऽभिवर्द्धन्ताम्। वेदाः सन्ततिरेव च। श्रद्धा च नो मा व्यगमद् बहुदेयं च नोऽस्तु॥ अन्नं च वो बहु भवेदतिथींश्च लभेमहि। याचितारश्च नः सन्तु मा च याचिष्व कञ्चन॥ एताः सत्या आशिषः सन्तु॥

फिर "अपसव्य" तथा "दक्षिणाभिमुख" होकर नीचे लिखे संकल्प से वस्त्र पर दक्षिणा रखे।

ब्राह्मण दक्षिणा संकल्प

कृतैतत् श्राद्धप्रतिष्ठार्थं दक्षिणाद्रव्यं यथानाम-गोत्राय ब्राह्मणाय दक्षिणा दातुमहमुत्सृजे॥

"सव्य तथा पूर्वाभिमुख" होकर नीचे लिखी प्रार्थना करे।

अन्नहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यद् भवेत्।
तत्सर्वमच्छिद्रमस्तु पित्रादीनां प्रसादतः॥
प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥

काक और श्वान की बलि छोड़कर बाकी सभी बलि गौ को दे। पश्चात् ब्राह्मणों के पैर धोकर आसन पर बैठाकर पाक परोसकर के भोजन करने की प्रार्थना करे। श्राद्धकर्ता पाक का गुण वर्णन करते हुए नम्रतापूर्वक बार-बार परोसे। ब्राह्मण पाक की प्रशंसा नहीं करे। भोजन के पश्चात् तिलक करके दक्षिणा देकर उनसे पूछे "शेषमन्नं किं कर्तव्यं" ब्राह्मण कहे "इष्टैः सह भोक्तव्यम्" पश्चात् पितृ तृप्ति के लिएं तर्पण करके काकबलि कौवे को और श्वान बलि कुत्ते को देकर इष्ट-मित्रों सहित भोजन करे।

श्राद्ध (मातृश्राद्ध)

श्राद्धकर्त्ता श्राद्ध के दिन आसन पर पूर्वाभिमुख बैठकर दूसरा वस्त्र लेकर बाईं अनामिका अंगुली में तीन ओर दाहिनी में दो कुशा की पवित्री धारण करके आचमन प्राणायाम करके तीन कुशाओं को सीधी बांटकर ग्रंथि लगाकर अग्रभाग पूर्व में रखते हुए नीचे लिखे मन्त्र से सामग्री को छींटा दे।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥
दृष्टिस्पर्श दोषात् पाकादीनां पवित्रताऽस्तु॥

बाएं हाथ में पीली सरसों लेकर नीचे लिखा मन्त्र बोले।

ॐ नमो नमस्ते गोविन्द पुराणपुरुषोत्तम।
इदं श्राद्धं हृषीकेश रक्ष त्वं सर्वतो दिशः॥

पश्चात् उन सरसों को दाहिने हाथ से "**ॐ प्राच्यै नमः**" (पूर्व में) "**ॐ अवाच्यै नमः**" (दक्षिण में) "**ॐ प्रतीच्यै नमः**" (पश्चिम में) "**ॐ उदीच्यै नमः**" (उत्तर में) "**ॐ अन्तरिक्षायै नमः**" (ऊपर) "**ॐ भूम्यै नमः**" (नीचे छोड़े)।

जौ और पुष्पों से "**ॐ भूम्यै नमः**" ऐसा बोलता हुआ तीन बार पृथ्वी की पूजा करे।

गायत्री तथा नीचे लिखा हुआ मन्त्र तीन बार जपे।

ॐ देवाताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च।
नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमोनमः॥

माता के श्राद्ध का संकल्प

मातुः की जगह दादी को "पितामह्याः" परदादी को "प्रपितामह्याः" कहे। ॐ अद्य विक्रम-सम्वत्सरे (अमुक) संख्यके (अमुक) मासे (अमुक) पक्षे (अमुक) तिथौ (अमुक) वासरे (अमुक) गोत्रायाः मातुः (अमुकी) देव्याः सांकल्पिक-श्राद्धं तदंगत्वेन बलिवैश्वदेवाख्यं पञ्चबलि कर्म च करिष्ये।

बलिवैश्वदेव तथा पञ्चबलि करके—

आसन (पत्ता आदि दक्षिण में रखे)

"अपसव्य" तथा "दक्षिणाभिमुख" हो बायां घुटना मोड़ पितृलोक से आती हुई माता श्री का ध्यान कर नीचे लिखा संकल्प बोल कर आसन पर छोड़े।

मातुः की जगह दादी को "पितामह्याः" परदादी को "प्रपतिमह्याः" कहे। ॐ अद्य (अमुक) गोत्रायाः मातुः (अमुकी) देव्या सांकल्पिक-श्राद्धे इदमासनं ते स्वधा।

गन्धादि

आसन पर गन्ध, पुष्प, पान सुपारी और वस्त्रादि रखे।

माता की जगह, दादी को "पितामही" परदादी को "प्रपितामही" कहे। अद्य (अमुक) गोत्रें मातः (अमुकी) देवी एतानि गन्ध-पुष्प-ताम्बूल पूगीफन-सिन्दूर-वासांसि ते स्वधा।

पाक लेकर नीचे लिखे मन्त्रों से बाईं ओर भू स्वामी के निमित्त पृथ्वी पर रखे।

ॐ इदमन्नमेतत् भूस्वामि पितृभ्यो नमः।

पात्र में पाकादि परोसकर पाक के ऊपर मधु लगा के मातृ आसन के सम्मुख रखे। उस पात्र के पूर्व में जलपात्रादि तथा पत्ते पर घी रखे बाद में मातृ आसन तथा अन्न पात्रादि के चारों ओर जल से मण्डल बनावे फिर पात्र का स्पर्श करते हुए बायां हाथ अपनी दाहिनी ओर उलटा। उस पर दाहिना हाथ बाईं ओर उल्टा रखकर नीचे लिखा मंत्र बोले।

ॐ पृथ्वी ते पात्रं द्यौरपिधानं ब्राह्मणस्य मुखे अमृते अमृतं जुहोमि स्वाहा॥ ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्य पाꣳसुरे ॐ कृष्णकव्यमिदं रक्ष मदीयम्॥

बाएं हाथ को वैसे ही रखते हुए दाहिने हाथ के अंगूठे से अन्नादिका स्पर्श करे। 'इदमन्नम्' (पाक स्पर्श) इमा आपः" (जल स्पर्श) "इदमाज्यम्" (घृत स्पर्श) "इदं हविः" (फिर पाक स्पर्श करे) पाक रक्षा के हेतु नीचे लिखे वाक्य से पात्र के बाहर तिल छोड़े।

ॐ अपहता असुरा रक्षाꣳसि वेदिषदः।

पाक का संकल्प

"मात्रे की जगह, दादी को "पितामह्यै" परदादी को "प्रपितामह्यै" कहे। ॐ अद्य (अमुक) गोत्रायै मात्रे (अमुकी देव्यै) इदमन्नं परिविष्टं परिविष्यमाणं ब्राह्मणभोजन तृप्तिपर्यन्तं सोपस्करं ते स्वधा।

"सव्य तथा पूर्वाभिमुख" होकर आशीर्वाद के लिए अंजलि द्वारा प्रार्थना करे।

ॐ गोत्रं नो वर्द्धतां दातारो नोऽभिवर्द्धन्ताम् वेदाः सन्ततिरेव च। श्रद्धा च नो मा व्यगमद्बहुदेयं च नोऽस्तु॥ अन्नं च नो बहु भवेदतिथींश्च लभेमहि। याचितारश्च नः सन्तु मा च याचिष्म कंचन॥ एताः सत्या आशिषः सन्तु॥

अपसव्य तथा दक्षिणाभिमुख हो करके नीचे लिखे संकल्प से वस्त्र पर दक्षिणा रखे।

दक्षिणा संकल्प

कृतैतत्श्राद्धप्रतिष्ठार्थं दक्षिणाद्रव्यं यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे॥

"सव्य तथा पूर्वाभिमुख" होकर नीचे लिखी प्रार्थना करे।

अन्नहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यद्भवेत्।
तत्सर्वमच्छिद्रमस्तु पित्रादीनां प्रसादतः॥
प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥

काक और श्वान बलि छोड़कर बाकी सभी बलि गौ को दे। पश्चात् ब्राह्मणों के पैर धोकर आसन पर बैठाकर पाक परोस करके भोजन करने के लिए हाथ जोड़कर प्रार्थना करे। श्राद्धकर्ता पाक का गुण वर्णन करते हुए नम्रता पूर्वक बार-बार परोसे। ब्राह्मण पाक की प्रशंसा नहीं करे। भोजन के पश्चात् तिलक करके दक्षिणा देकर उनसे पूछे 'शेषमन्नं किं कर्त्तव्यम्' ब्राह्मण कहें 'इष्टैः सह भोक्तव्यम्' पश्चात् पितृतृप्ति के लिए तर्पण करके काकबलि कौवे को और श्वान बलि कुत्ते को देकर इष्ट मित्रों सहित भोजन करे।

इति श्राद्ध कर्म सम्पूर्णम्

भोजन विधि

आयुः सत्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्द्धना।
रस्याः स्निग्धाः स्थिराः हृद्याः आहाराः सात्विकप्रियाः॥

आयुवर्द्धक, सात्विक भाव पैदा करने वाला, बलदायी, आरोग्यदायक, सुख तथा रुचिवर्द्धक घी, दूध आदि युक्त सात्विक अन्न तथा फल आदि को ग्रहण करना चाहिए।

एकपंक्त्युपविष्टानां विप्राणां सह भोजने॥
यद्येकोऽपि त्यजेत् पात्रं शेषमन्नं न भुज्यते॥

एक पंक्ति में बैठकर भोजन करते हुए ब्राह्मणों में से यदि कोई एक भी भोजन करते समय उठ जाए तो औरों को भी भोजन नहीं करना चाहिए। औरों के भोजन करते समय बीच में उठना निषेध है।

उपलिप्ते शुचौ देशे पादौ प्रक्षाल्य वाग्यतः।
प्राङ्मुखोऽन्नं तु भुञ्जीत शुचि पीठमधिष्ठितः॥
प्राङ्मुखोऽन्नानि भुञ्जीत पञ्चार्द्रो वाग्यतः शुचिः।
आर्द्रपादस्तु भुञ्जानः शतं वर्षाणि जीवति॥

शुद्ध स्थान में हाथ पैर धोकर आसन पर बैठकर पूर्वाभिमुख मौन होकर भोजन करे।

नृणां भोजनकाले तु यदि दीपो निवर्त्तते।
तदन्नं पाणिना स्पृष्ट्वा सावित्रीं मनसा स्मरेत्॥
पुनर्दीपं ततो लब्ध्वा शेषं भुञ्जीत वाग्यतः॥

भोजन करने के समय दीपक बुझ जावे तो भोजन करना बन्द कर देना चाहिये। पुनः दीपक (या बिजली बत्ती आदि) का प्रकाश होने पर ही भोजन करे।

भोजन के पहले भगवद्-दर्शन करके तुलसी चरणामृतादि लेना चाहिए। दूसरा वस्त्र लेकर बलिवैश्वदेव करके भोजन-पात्र के चारों ओर जल से ब्राह्मण चौकोर, क्षत्रिय त्रिकोण और वैश्य गोल मण्डल बनावे। बाएं हाथ से भोजनादि न करे। यदि ऊपर लिखी समस्तविधि नहीं कर सके तो प्रत्येक मनुष्य को "आपोशान" के तीन ग्रास अवश्य देने चाहिएं।

आपोशान

नीचे लिखे हुए प्रत्येक मन्त्र से एक-एक ग्रास देकर जल छोड़ता जाए।

ॐ भूपतये स्वाहा १। ॐ भुवनपतये स्वाहा २। ॐ भूतानांपतये स्वाहा । पश्चात् नीचे लिखा मन्त्र बोलकर आचमन करे। "अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा।"

नीचे लिखे प्रत्येक मन्त्र से ग्रास देकर आचमन करके भोजन करे।

ॐ प्राणाय स्वाहा १। ॐ अपानाय स्वाहा २। ॐ व्यानाय स्वाहा ३। ॐ उदानाय स्वाहा ४। ॐसमानाय स्वाहा ५। भोजन के अन्त में "ॐ अमृतंपिधानमसि स्वाहा।" बोलकर आचमन करके उच्छिष्ट अन्न को नीचे लिखे मन्त्र से दक्षिण में फेंक दे।

मद्भुक्तोच्छिष्टशेषं ये भुञ्जते पितरोऽधमाः।
तेषामन्नं मया दत्तमक्षय्यमुपतिष्ठतु॥

मुख शुद्धि के लिए सोलह कुल्ले करके नीचे लिखे मन्त्र पाचन हेतु बोले।

अगस्त्यं कुम्भकर्णञ्च शनिञ्च वडनालम्।
आहार परिपाकाय संस्मरामि वृकोदरम्॥
आतापी भक्षितो येन वातापी च महाबलः।
समुद्रः शोषितो येन स मेऽगस्त्यः प्रसीदतु॥

संक्षिप्त-व्रत-तिथि-निर्णय

व्रत में साधारणतः तिथि दो प्रकार की मानी जाती है। १—शुद्धा तथा २—विद्धा। इन दोनों प्रकारों में जो तिथि सूर्योदय से प्रथम आरम्भ होकर दूसरे सूर्योदय तक अथवा व्रत नियत काल पर्यन्त हो वह तिथि शुद्धा है। उसमें कोई निर्णय की आवश्यकता नहीं है। जो तिथि आदि तथा अन्त में अर्थात् तिथि के आरम्भ में या समाप्ति में दूसरी तिथि से संस्पृष्ट हो वह विद्धा तिथि कहलाती है और निर्णय की आवश्यकता होती है। यह 'तिथिवेध' कहा गया है। यह 'वेध' प्रातः सूर्योदय से पहले तथा सायंकाल में ३ मुहूर्त का माना जाता है। मुहूर्त २ घटिका का नाम है। अन्य सब कार्यों में स्व-स्व-कालव्यापिनी तिथि का ग्रहण है। एकाहारी व्रत में मध्याह्न-व्यापिनी तिथि का ग्रहण करना चाहिए। दो दिन हो अथवा तिथि-क्षय हो तो भी पूर्व दिन ही लेना। रात्रिव्रत में प्रदोष काल-व्यापिनी ग्रहण की जाती है। (सूर्यास्त के बाद '३ मुहूर्त' प्रदोष काल कहलाता है) दो दिन प्रदोष-व्यापिनी हो तो पर तिथि ग्रहण करनी चाहिए। यह अति संक्षिप्त व्रत निर्णय है। इस सम्बन्ध में कुछ विशेष जानकारी इस-प्रकार से हैं—

प्रतिपदा—शुक्लपक्ष की मध्याह्नोत्तरकाल पर्यन्त की लेना। कृष्ण पक्ष की पूर्वाह्नव्यापिनी श्रेष्ठ है।

द्वितीया—हेमाद्रि के मत से कृष्ण पक्ष की पूर्वाह्नव्यापिनी और शुक्ल पक्ष की परान्हव्यापिनी लेना। माधवाचार्य के मत से परा ही श्रेष्ठ है।

तृतीया—दोनों ही पक्षों में मध्याह्नोत्तरकाल पर्यन्त की लेना। दो दिन हो तो पर दिन ही श्रेष्ठ है। 'गौरी' व्रत में परा ही लेना।

चतुर्थी—गणेश व्रत में 'तृतीया विद्धा' पूर्वा लेना अथवा चन्द्रोदय कालव्यापिनी श्रेष्ठ है। दो दिन हो तो पूर्वा। अन्य व्रतों में परा लेना।

पञ्चमी—'माधव' के मत से दोनों पक्ष की पूर्वा ही लेना। 'हेमाद्रि' के मत से कृष्ण पक्ष में पूर्वा तथा शुक्ल पक्ष में उत्तरा लेना। निर्णयसिन्धु के मत से 'नागपञ्चमी' परा ही लेना।

षष्ठी—'स्कन्दषष्ठी' व्रत में पूर्वा लेना। अन्य व्रतों में परा ग्रहण करना। षष्ठी व्रत में अर्ध-काल व्यापिनी लेना। दोनों दिन अर्धकाल व्यापिनी के अभाव में पूर्वा अन्यथा परा लेना।

सप्तमी—सदा पूर्वाह्नव्यापिनी ही लेना।

अष्टमी—(कृष्णजन्माष्टमी-निर्णय आगे दिया है) कृष्ण पक्ष की पूर्वा एवं शुक्ल पक्ष की उत्तरा लेना। देवी के व्रत में कृष्ण पक्ष की 'परा' ही लेना।

नवमी—दोनों पक्षों में पूर्वा लेना।

दशमी—हेमाद्रि के मत से परा और माधव के मत से कृष्णा-पूर्वा और शुक्ला उत्तरा, कमलाकर भट्ट के मत से पूर्वा लेना। सूर्योदयी श्रेष्ठ है।

एकादशी—व्रत का निर्णय आगे दिया गया है।

द्वादशी—दोनों पक्षों में पूर्वा ही ग्रहण करना।

त्रयोदशी—शुक्ल पक्ष की पूर्वा तथा कृष्णपक्ष की परा ग्रहण करना। उपवास रूप व्रत में दोनों पक्षों में परा लेना, शिवरात्रि व्रत में रात्रि व्यापिनी लेना।

चतुर्दशी—कृष्ण पक्ष में पूर्वा शुक्ल पक्ष में परा लेना। 'उपवास व्रत में दोनों पक्षों की परा ही लेना 'शिवरात्रि व्रत में पूर्वा ही लेना।

पूर्णिमा तथा अमावस्या—व्रत, दान तथा पितृकार्य में कार्यकाल-व्यापिनी अथवा अपाह्नव्यापिनी लेना। दो दिन अपराह्न व्यापिनी हो तो पर दिन की ग्रहण करना। क्षय तिथि पूर्व दिन की लेना।

कुछ मुख्य व्रतों का संक्षिप्त—निर्णय

एकादशी—निर्णय

वेध-नि०— दशम्यर्कोदये चेत् स्यात् स्मार्तानां वेध इष्यते।
वैष्णवानां तु पूर्वं स्यात् घटिकानां चतुष्टये।
वल्लभाः पञ्चनाडीषु केचिद्यामद्वयं जगुः।
पूर्वं सूर्योदयाद्वेधं, निर्णये वैष्णवैः समाः।

व्रत-नि०— यो द्वादशी विरामाहः स्मार्तैस्तत्प्रथमं दिनम्।
उपोष्यमितिहेमाद्रिर्माधवस्य मतं शृणु।
द्वादश्यां वृद्धिगामिन्यां अविद्धैकादशी यदि।
लभ्यते या व्रते ग्राह्याऽन्यत्र हेमाद्रि निर्णयः।
केचिदाहुर्विष्णुभक्तैः स्मार्तैः कार्यं व्रतद्वयम्।
विद्धायां वां विवृद्धायां एकादश्यां परेऽहिनच।
समाप्येत परेऽहन्यस्मिन् द्वादशी यदि नान्यथा।
माधवीय—व्रतस्यैव प्रचारो व्रतनिर्णये।
एकादशी द्वादशी वा वृद्धिगा चेत् तदा व्रते।
शुद्धाप्येकादशी त्याज्या सदा विद्धापि वैष्णवैः।
एकादशी व्रतं कार्यं परेऽहिन त्याज्यवासरान्।
असूयानुगमे नात्र कार्या विद्वद्भिरर्थये॥

विद्धा और शुद्धा एकादशी

१—एकादशी के दिन सूर्योदय काल में दशमी हो तो स्मार्त सम्प्रदाय के मत में 'विद्धा' है।

२—सूर्योदय से ४ घड़ी पहिले 'अरुणोदय काल' होता है उसमें दशमी हो तो वैष्णव सम्प्रदाय के मत से विद्धा है।

३—सूर्योदय से पूर्व ५ घड़ी, किसी मत से अर्द्ध रात्रि के बाद तक दशमी हो तो वल्लभ सम्प्रदाय के मत में विद्धा होती है। 'विद्धा' एकादशी का त्याग और शुद्धा का ग्रहण करना चाहिये।

एकादशी व्रत-निर्णय

१—द्वादशी जिस दिन समाप्त होती हो उसके प्रथम दिन व्रत करना। यह हेमाद्रि का मत है।

२—द्वादशी यदि दूसरे दिन भी (यहां प्रथम सूर्योदय से द्वितीय सूर्योदय तक दिन समझना) हो तो सूर्योदयी वेध रहित एकादशी का व्रत करना। नहीं तो हेमाद्रि मतानुसार व्रत करना।

३—कुछ आचार्यों के मत से—सूर्योदय बेधबाली एकादशी के दिन तथा दूसरे दिन भी अथवा दो एकादशी हो तो दूसरी एकादशी और द्वादशी दोनों व्रत कर सकते हैं। परन्तु यह निर्णय वहीं लागू होता है, जहां दूसरे दिन द्वादशी समाप्त होती है। पर आजकल माधवीय मत की प्रधानता देखी जाती है।

४—एकादशी या द्वादशी वृद्धि हो तो एकादशी छोड़कर दूसरे दिन व्रत करना यह 'वैष्णव' मत है।

श्रावणी निर्णय (संक्षिप्त–निर्णय)

श्रावण शुक्ल पूर्णिमा–

ऋग्वेदियों के लिए श्रवण और हस्त नक्षत्र तथा पञ्चमी तिथि उत्तम मानी गई है। परन्तु प्रधानता श्रवण नक्षत्र की ही है। यदि पूर्णिमा को श्रवण नक्षत्र न हो तो पञ्चमी या हस्त नक्षत्र लेना चाहिए। यजुर्वेदियों के लिये पूर्णिमा श्रेष्ठ है। श्रवण नक्षत्र होने से अति श्रेष्ठ है। सामवेदियों की श्रावणी का समय भाद्रशुक्ल पक्ष का हस्त नक्षत्र उत्तम माना गया हैं। ऐसा धर्मसिंधु के मत का सारांश है। तथापि आजकल श्रावण पूर्णिमा को उपाकर्म करते हैं। इसमें श्रावणपूजा तथा रक्षाबन्धन भद्रा रहित पूर्णिमा में ही किया जाता है। सत्यनारायण व्रत कथा भी प्रायः इसी दिन होती है। बलदेव जयन्ती का उत्सव प्रायः प्रदोष काल में किया जाता है। पूर्णिमा के दिन संक्रांति या चन्द्रग्रहण हो तो ऋषि पञ्चमी को श्रावणी कर्म किया जाता है।

श्रीकृष्णजन्माष्टमी

१—अर्द्ध रात्रि में अष्टमी तिथि और रोहिणी नक्षत्र हो तो सर्वोत्तम है।

२—यदि रोहिणी नक्षत्र न हो तो निशीथ-व्यापिनी अष्टमी को ही कृष्ण जन्मोत्सव मनाना चाहिये।

३—धर्मसिंधुकार के मत में उदयव्यापिनी अष्टमी को भी ग्रहण किया गया है।

४—रोहिणी नक्षत्र युक्ता अति श्रेष्ठा तथा जयन्ती नामक होती है। जहां तक हो सके अर्द्ध रात्रिव्यापिनी ही लेना चाहिये। सामान्यतया इसके भी चार भेद होते हैं।

१—सप्तमी की अर्द्धरात्रि में अष्टमी का होना।

२—अष्टमी की अर्द्धरात्रि में अष्टमी का होना।

३—दोनों दिन अर्द्धरात्रि में अष्टमी का होना।

४—दोनों दिन अर्द्धरात्रि में अष्टमी का न होना।

पूर्व दिन यदि रोहिणी युक्ता निशीथव्यापिनी अष्टमी हो तो सर्वश्रेष्ठ, नहीं, तो अष्टमी को व्रत करना चाहिये। दोनों दिन अर्द्धरात्रि व्यापिनी न मिले तो उदय कालव्यापिनी लेना।

इसमें भी सप्तमी तथा नवमी का वेध और न्यून, सम और अधिक भेद से अनेक भेद होते हैं। विस्तार भय से नहीं लिखा गया।

होलिका-दहन

१—पूर्णिमा के दिन प्रदोषव्यापिनी लेना।

२—यदि दो दिन प्रदोषव्यापिनी हो तो पर दिन की ग्रहण करना।

३—यदि प्रदोष काल में भद्रा हो तो भद्रा का मुख (आरम्भ की ५ घटिका) भाग त्याग कर होलिका-दहन करना।

४—यदि प्रथम दिन दिनार्द्ध के बाद भद्रा हो तथा दूसरे दिन प्रदोष में पूर्णिमा न हो तो भद्रा के बाद सूर्योदय से प्रथम दिन करना।

५—रात्रिभर हो तो भद्रा के शेष (पुच्छ भाग) की ३ घटिका में दहन करना।

६—यदि प्रथम दिन रात्रि भर में भद्रा और दूसरे दिन प्रदोष काल में 'चन्द्र ग्रहण' हो तथा भद्रा का पुच्छ दिन में सूर्योदय के बाद पड़ता हो तो भद्रा का मुख भाग छोड़कर बाकी भाग में ही होलिका-दहन करना।

मन्वादि-तिथि

चैत्र शुक्ल में तृतीया और पूर्णिमा, ज्येष्ठ में पूर्णिमा, आषाढ़ में दशमी और पूर्णिमा, श्रावण में कृष्णपक्ष की अष्टमी, भाद्रपद में तृतीया। आश्विन में नवमी। कार्तिक में द्वादशी और पूर्णिमा, पौष में एकादशी माघ में सप्तमी। फाल्गुण में अमावस्या और पूर्णिमा ये चौदह तिथियां मन्वादि हैं। वैसाख, मार्गशीर्ष में मन्वादि तिथि नहीं होती। तिथियां शुक्ल पक्ष की पूर्वाह्नव्यापिनी और कृष्ण पक्ष की अपराह्नव्यापिनी लेनी चाहिएं। इन तिथियों में पिंडरहित श्राद्ध करने से पितरों की पूर्ण तृप्ति होती है।

जयन्ती-निर्णय

२—जयन्तियों के प्रसंग से दस अवतारों की जयन्ती तिथियां लिखी जाती हैं। जिस देवता की जयन्ती तिथि हो उस दिन चक्र में लिखे गये समय में उस देवता का बड़े समारोह से पूजन तथा भजन, कथा, उपदेश आदि के द्वारा महोत्सव मनाना चाहिए। जयन्ती महोत्सव मनाने से मनुष्य की सम्पूर्ण कामनाएं सिद्ध होती हैं।

जयन्ती-तिथि-चक्रम्

मास	पक्ष	तिथि	अवतार	समय
चैत्र	शुक्ल	३	मत्स्य	अपराह्न
चैत्र	शुक्ल	९	रामचन्द्र	मध्याह्न
वैशाख	कृष्ण	३०	कूर्म	सायंकाल
वैशाख	शुक्ल	१४	नरसिंह	सायंकाल
वैशाख	शुक्ल	३	परशुराम	मध्याह्न
श्रावण	शुक्ल	६	बाराह	अपराह्न
श्रावण	शुक्ल	६	कल्कि	सायंकाल
भाद्रपद	कृष्ण	८	श्रीकृष्ण	अर्द्धरात्रि
भाद्रपद	शुक्ल	१२	वामन	मध्याह्न
आश्विन	शुक्ल	१०	बुद्ध	सायंकाल

सायं-दीपस्तुति

जिसके घर में सूर्यास्त से सूर्योदय तक दीपक जलता है उसके घर में दरिद्रता नहीं रहती है। दीपक जलाकर नीचे लिखी प्रार्थना करके भजनादि करे।

दीपो ज्योतिः परं ब्रह्म दीपो ज्योतिर्जनार्दनः।
दीपो हरतु मे पापं सन्ध्यादीपं नमोऽस्तु ते॥
शुभं करोतु कल्याणं आरोग्यं सुखसम्पदाम्।
मम बुद्धि प्रकाशञ्च दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते॥

शयन-विधि

रात्रि में शयन-समय में दिन में किये हुए सभी कर्मों का स्मरण करे। यदि त्रुटि हो गयी हो तो उसके निमित्त यथाशक्ति भगवान् का नाम लेकर क्षमा-प्रार्थना करे, मन में दृढ़ संकल्प करे जिससे फिर त्रुटि न हो। नीचे लिखे मन्त्र बोल, पूर्व या दक्षिण की ओर सिर कर तथा भगवत् स्मरण करता हुआ निद्रा ले।

जले रक्षतु वाराहः स्थले रक्षतु वामनः।
अटव्यां नरसिंहश्च सर्वतः पातुः केशवः॥
अगस्तिर्माधवश्चैव मुचुकुन्दो महामुनिः।
कपिलो मुनिरास्तीकः पञ्चैते सुखशायिनः॥
असितं चार्तिमन्तञ्च सुनीथं चापि यः स्मरेत॥
दिवा वा यदि वा रात्रौ नास्यसर्पभयं भवेत्॥
सर्पापसर्प भद्रं ते गच्छ सर्प वनान्तरम्।
जनमेजयस्य यज्ञान्ते आस्तीकवचनं स्मर॥
आस्तीकस्य वचः श्रुत्वा यः सर्पो न निवर्त्तते॥
शतधाभिद्यते मूर्ध्नि शिरीषस्यफलं यथा॥

स्मरण रहे देव, गुरु, विप्र से ऊंची शय्या पर नहीं सोना चाहिये। उच्छिष्टमुख, नग्न तथा गीले वस्त्र युक्त नहीं सोना चाहिये।

सामग्री प्रकरण

सन्ध्या

आसन १। माला १।
गोमुखी १। पञ्चपात्र १।

तर्पण सामग्री

आसन १, जलपात्र १,
टोपिया १, तिल, जौ,

चमची २ । जलपात्र १ । चावल, पवित्री २,
अर्घा १ । कुशा । पवित्री । मोटक १, कुशा, । पुष्प,
तष्टी १ । चन्दन । पुष्प । चन्दन । अर्घा ।

देवपूजा सामग्री

घरकी—शंख १, घण्टा १, पंचपात्र १, आचमनी १, अर्घपात्र १, जलकलश १, आसनी २, दीपपात्र १-२, धूपपात्र १ रोली, नाल, (मौली) चन्दन, घी, चौकी, यज्ञोपवीत, चावल, काजल, सोने की टिकड़ी, वस्त्र-लाल, गेहूं ।

लहवाई की—दूध, दही, लड्डू शिवपूजन में भांग ।

माली की—पुष्प, पुष्पमाला, दूर्वा, पञ्चपल्लव, तुलसी, बिल्वपत्र, शमीपत्र ।

पंसारी की—शहद, सिन्दूर, अबीर, गुलाल, धूप, सुपारी, सफेदतिल, सप्तधान्य, सर्वौषधि, सप्तमृत्तिका, पंचरत्न, पीली सरसों, कपूर, केसर, इतर, लौंग, इलायची ।

फुटकर—नारियल फल, पान, कलश, सराई, सिकोरा ।

वसना पूजन सामग्री

घरकी—थाली १ । कटोरा २ । लोटा १ । रोली २ तोला । नाल नग २ । घी १ छटांक । चावल १ पाव । चीनी १ छटांक । रूई । दियासलाई । पट्टा १ गंगाजल । मृत्तिका ।

कपड़े वाले की—श्वेत वस्त्र सवा गज । लाल वस्त्र एक गज । गुलाबी रेशमी वस्त्र दो गज । वरण वस्त्र २ ।

मालीकी—केला खम्भा २ । आमका पत्ता १०० । पञ्चपल्लव । पुष्प पुड़िया । पुष्पमाला ५ । कमल । दूर्वा । विल्वपत्र । तुलसी ।

कुम्हारकी—लड्डू यथेच्छ । दूध १ पाव । दही २ छ० ।

पंसारी की—सूतली । पञ्चरत्न १ पु० । सर्वौषधि । पुड़िया सिन्दूर १ पु० । अबीर । गुलाल । केशर । कपूर । चन्दन । धूप । अगरबत्ती । सुपारी २५ । लौंग । इलायची । धनिया । हल्दी । मजीठ । कमलगट्टा । पीली सरसों । शहद । इतर । सप्तमृत्तिका ।

साग गोला की—नारियल १ । डाभ २ । पान २५ । फल २५ ।

विशेष—गेहूं ५ छ० । जनेऊ ५-७ । गुड़ मूर्ति-गणेश, लक्ष्मी । वसना । चांदी या तांबा की घण्टी । तामड़ी १ । सोने की टिकड़ी २ । रुपया पैसा । खेरज ।

खाते वाले की—बही ५-७-११-१३-१५-२१ । दवात । कलम । स्याही । पाट । सोखता । रेती आदि ।

विशिष्ट–सामग्री का विवेचन

पञ्चपल्लव—बड़, पीपल, आम, पाकर, गूलर।

पञ्चरत्न—सोना, हीरा, मोती, पुखराज नीलम।

अथवा-(सोना, चांदी, तांबा, मूंगा मोती।)

पञ्चगव्य—दूध, दही, घी गोबर, गोमूत्र (केवल गौके हों)

पञ्चामृत—दूध, दही, घी (केवल गौ के हों) मधु, चीनी।

पञ्चधान्य—तिल, मूंग, जौ, उड़द, चावल।

सप्तधान्य—चावल, जौ, गेहूं, मूंग, उड़द तिल, कंगनी।

सप्तमृत्तिका—घोड़ा, हाथी, राजद्वार, गौ, नदीसंगम, चौरास्ता, तालाव, वल्मीक। इन स्थानों की मृत्तिका।

सर्वौषधि—मुरा, जटामांसी, बच, कुठ, शिलाजीत, हल्दी, दारुहल्दी, आमला, श्वेतचन्दन, नागरमोथा।

नवसमिधा—आक, ढाक, खैर, ऊंचा, पीपल, गूलर, जण्ड, दूर्वाकुशा।

नवरत्न—मणिक, मोती, मूंगा, पन्ना, पुखराज, हीरा, नीलम, गोमेद, लसनिया। ये रत्न क्रमशः ९ ग्रहों के हैं।

दीपावली पूजन में विशेष सामग्री—दीपक, बाती, तेल, नैवेद्य, चक, बतासा, धानकी खील।

नवरात्र में दुर्गा–पूजा की विशेष सामग्री

देवता के वस्त्र तथा पूजा के वस्त्र, कलश, तांबा या मृत्तिका का १ तामड़ी १, "पुण्याह-वाचन" के लिये घण्टी १, कांसी की कटोरी २, ब्राह्मण—वरण के लिये—धोती, दुपट्टा, अंगोछा, आसन, माला गोमुखी, लोटा, पञ्चपात्र, चमची, तष्टी, अर्घा, अंगूठी। देवता पूजा के वस्त्र-श्वेत, वस्त्र लाल, वस्त्र रेशमीवस्त्र, धोती, दुपट्टा, चूनड़ी, केला, खम्बा ४। उपर्युक्त सामग्री इच्छानुसार लेना।

सांकल्पिक श्राद्ध–सामग्री

कुशा, दो कुशा की पवित्री १, तीन कुशाकी पवित्री १, तीन कुशा का मोटक १, अक्षत, तिल, पीली सरसों, चन्दन, श्वेत पुष्प, ताम्बूल, सुपारी, लवंग, इलायची, यज्ञोपवीत, वस्त्र (धोती, अंगोछा), मधु, दक्षिणा, भोजन सामग्री।

नित्य हवन सामग्री

ताम्र कुण्ड अथवा वेदी। घृत। चरु (तिल, चावल, जौ उत्तरोत्तर अर्द्धभाग), घी, चीनी, मेवा, सुगन्धित, द्रव्य यथेच्छ। कुशा अथवा दूर्वा। अग्नि, स्रुवा। घृत-पात्र। सामान्य पूजा सामग्री।

विवाह सामग्री

घर की—सिकोरा २० । लोढी १ । वर के वस्त्र २ । कन्या के वस्त्र २ । मेंहदी १ छ० । आटा १ छ० । रोली १ तोला । घृत आधा सेर । मिठाई आधा सेर । नाल ४-५, चावल आधा सेर । पाटा बड़ा २, छोटा १ । गंगाजल । मृत्तिका, दियासलाई, रूई । दही १ छटांक ।

कुम्हार की—कलश १ । गमला १ बारुंडा ४ ।

खाती की—खूंटी ४ । पाटा १ । स्रुव १ । तोरण १ ।

माली की—वर कन्या का हार २ । पुष्प । दूर्वा । पुष्पमाला १ । आम का पत्ता । पञ्चपल्लव ।

बर्तन वाले की—पीतल का टोपियां २ । पीतल का लोटा १ । कांसी की कटोरी ४ । कांसी का कटोरा १ । तांबा की घण्टी १ ।

पंसारी की—सर्वौषधि १ पु० । पंचरत्न १ पु० । हल्दी की गांठ ७ । सिंदूर । शहद । केसर । सुपारी २५ । धूप । लौंग । इलायची । पीली सरसों ।

विशेष—जनेऊ ५ । नारियल १ । साठी ४ । कूकड़ी १ । जन्डकी पत्ती । धान की खील । छाज १ । गोबर । श्वेत वस्त्र १ गज लाल वस्त्र आधा गज । शंख १, गेहूं छ०, पान २५ । फल । समिधा १ सेर ।

ब्राह्मण वरण सामग्री—धोती, अंगोछा, लोटा, अंगूठी, जनेऊ ।

उपनयन—सामग्री

घर की चीज़ें—नाल ३-४, रोली २ तोला, घृत ऽ १ । रुई, दियासलाई, चीनी ऽ ॥, गोबर, गोमूत्र, मुंज की रस्सी (तागड़ी), अरणा ५-७, आभूषण, उबटना । चौकी १ । पाटा १ । दर्पण १ । लाठी छाता १ । काजल । ५ वस्त्र गुरु का । शिष्य का वस्त्र । आरती की थाली । पानी की घण्टी । चौपटा १ । सूत की अट्टी १ । आटा ऽ = । गंगाजल, मृत्तिका ।

पंसारी की—केशर, कपूर, धूपबत्ती, पंचमेवा ऽ ॥, सुपारी ४० । लौंग, इलायची, अबीर ॥, गुलाल) ॥ अतर, शहद, सिन्दूर । सर्वौषधि । पीली सरसों । सूतली ५० पैसा । लाल रंग ५० पैसा । नीला रंग ५० पैसा । हरा रंग ५० पैसा । काला रंग ५० पैसा । सिरयाई । गुग्गल ऽ २ । छड़छडोला । कपूरवत्ती । बेलगिरी । चन्दन चूरा । काले तिल । पंचरत्न १ पु० ।

माली की—पुष्प, पुष्पमाला, तुलसी, दुर्वा, कुशा, आम का पत्ता १००, बड़का ७, पीपल का ७, पाकरका ७, गूलरका ७ । जामनका ७ । ढाकका दण्ड १ । समिधा ९ । आक १ । ढक १ । खैर१ । ऊंगा १ । पीपल १ । जण्ड १ । दूर्वा । कुशा १ । केला खम्भा ४ । ऊंगा की दांतुन ।१ ।

बर्तन—ताम्र कलश । ताम्रघण्टी १ । कांसी की कटोरी ४ । कांसी का कटोरा १, छायापात्र १, टोपिया पीतल का २, गिलास नग-८ । पंचपात्र २ । चमची । अर्घा २ । तामड़ी २ । लोटा २ ।

कुम्हारकी—कलश १ । सरांई २० ।

कपड़े वाले की—रेशमी दुपट्टा १ । श्वेत वस्त्र १० गज । लाल वस्त्र १ गज । धोती २ । अंगोछा २, चूनड़ी १ । रेशमी वस्त्र $\frac{१}{४}$ गज ।

हलवाईकी—लड्डू ऽ ॥, पेड़ा ऽ ॥ दूध, ऽ ।, दही ऽ ॥

साग गोला की—नारियल ५ । गुड़ ऽ ॥ पान । केला १०-१५ । फल १) पत्तल १५ ।

अन्न—चावल २ सेर ॥, गेहूं आधा सेर ॥, उड़द आधा सेर, तिल आधा सेर ॥, जौ आधा सेर । = ।

फुटकर—मृगछाला १ । खड़ाऊ १ जोड़ा । मखाना ऽ । तिल का तेल २ छटांक । जनेऊ २०, गोमुखी । माला २ । आसन २ । काठ की पट्टी नग १ । सोना की टिकड़ी ३-४ ।

नित्यकर्म पद्धित सम्पूर्ण

———

नवग्रह मण्डलम

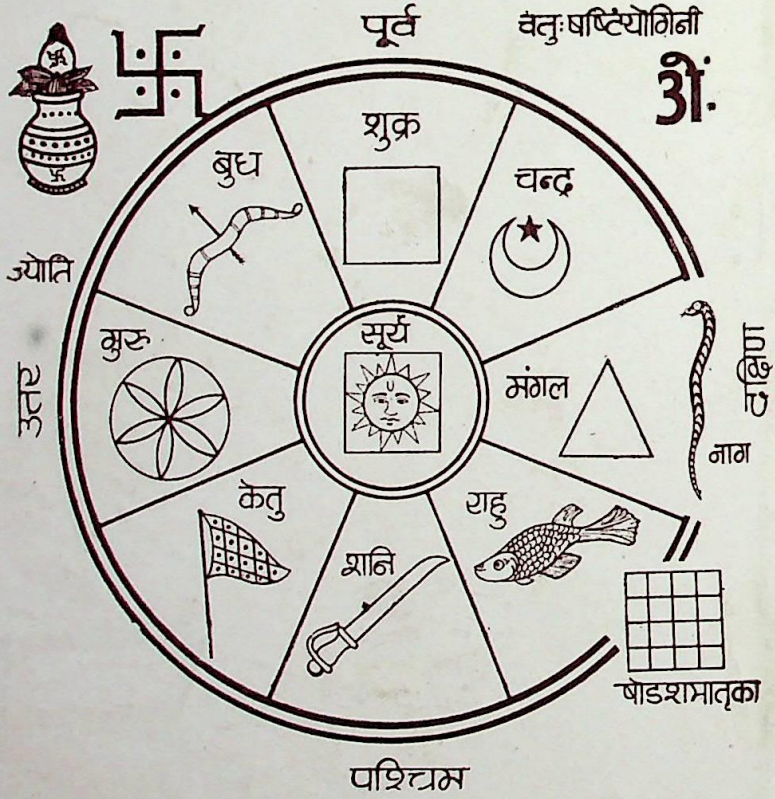
पूर्व
चतुःषष्टियोगिनी
ॐ
शुक्र
बुध
चन्द्र
ज्योति
सूर्य
गुरु
मंगल
उत्तर
दक्षिण
नाग
केतु
राहु
शनि
षोडशमातृका
पश्चिम